।। वल्लभाख्यान ।।

प्रथमाख्यान

उपक्रम

।। श्री हरिः ।।
।। विजयते श्रीबालकृष्णः प्रभुः ।।
।। श्रीमदाचार्य चरण कमलेभ्यो नमः ।।
।। श्रीगुसांईजी परमदयालवे नमः ।।

।। सटीक नवाख्यान प्रारंभः ।।

श्रीकृष्णाय नमः. अब गोस्वामी श्रीजीवनजी महाराजने दैवी जीवनपे कृपा करिकें श्रीवल्लभाख्यानको व्याख्यान व्रजभाषामें कियो तामें जहां जहां संस्कृत श्लोक हैं तथा ओरहु जो कठिनांश हे तिनको स्फुट अर्थ श्रीजीवनजी महाराजकी आज्ञासूं श्रीगटटुलालाजी या नामसूं प्रसिद्ध पंचनदि पं.श्रीगोवर्द्धनलालाजीने लिख्यो है. अब या टीकाकी निर्विघ्न समाप्तिके लिऐ श्रीजीवनजी महाराज, चार श्लोकसूं मंगलाचरणपूर्वक ग्रंथ करिवेकी प्रतिज्ञा करते हे.

श्रीबालकृष्णं ‘वंदेहं’ यशोदोत्संगलालितम् ।
नवनीताशनोत्कण्ठं व्रजयोषिद्दगुत्सवं ।।१।।

जयति स वल्लभ ईशः श्रीविटठलइह सहान्वयश्चसदा ।
अज्ञानाव्हध्वांतध्वंसक उल्लासको हृदब्जस्य ।।२।।

श्रीमद् गोवर्धनगुरोः पादपद्मपरागभृत् ।
कुर्वेहं वल्लभाख्यानव्याख्यानं हि यथामति ।।३।।

व्रजप्रियःसमाख्यातोयस्मादस्मत्प्रभुः सदा ।
तस्मात्तत्प्रीतयेनूनंकुर्वे तद्व्रजभाषया ।।४।।

भावार्थ : श्रीबालकृष्णजी जो अपने ठाकुरजी तिनको में वंदन करत हों. वे कैसे हें जिनको श्रीयशोदाजी सर्वदा अपनी गोदीमें खिलावत हैं और जे माखन अरोगिवेमें उत्कण्ठायुक्त हें. याहीते दक्षिण श्रीहस्तमें सदा नवनीत लियें रहत हे ओर वे सो जे वेदादिकमें प्रसिद्ध हें ओर जिनके दर्शन कियेसूं ब्रज भक्तनके नेत्रकूं बडो आनंद होत हे या विशेषणसूं विरुद्धधर्माश्रयत्व सूचन कियो क्यों जो बालभावमें हूं, प्रौढभावयुक्त हें. तातें ओर यशोदोत्संगलालितं या पदसूं परम तत्वरूपता सूचन करी यह बात **अणुभाष्यकी समाप्ति**के श्लोकनमें स्फुट हें. १.

अब ऐसे प्रभूनको नमन करीकें दूसरे श्लोकमें गुरुनको नमन करत हें ता श्लोकको अर्थ ईश सो सर्व मनोरथ पूरिवेमे समर्थ ऐसे ओर वेदपुराणादिकनमें प्रसिद्ध ऐसे जे श्रीमहाप्रभुजी ते सर्वोपरि बिराजत हें और श्रीगुसांईजी हूं सर्वदा अपने वंशसहित या लोकमें सर्वोपरि बिराजत हें अब ये दोऊ केसे हें सो कहतहें जो श्रीआचार्यजी ओर श्रीगुसांईजी अज्ञानरूप अंधकारको नाश करत हें ओर भक्तनके हृदयरूप कमलनको विकास करत हें यातें दोऊनकों अलौकिक सूर्यरूपता सूचन करी. २.

अब तीसरे श्लोकमें ग्रंथ करिवेकी प्रतिज्ञा करत हें. अपने गुरुदेव ओर धर्म पिता ऐसे जो श्रीगोवर्धनजी महाराज तिनके चरणारविंदकी रजकों अपने मस्तक हृदयादिकनमें धारण करिवेवारो ऐसोमें श्रीवल्लभाख्यानकी टीका मेरी बुद्धिअनुसार करत हों या श्लोकमें गुरुनकी कृपासूं ही यह टीका मोसूं बनी सकेंगी ऐसे दीनता सूचन करी क्यों जो दीनता या मार्गमें मुख्य हे. ३.

अब आपकी संस्कृत ग्रंथ बनायवेकी आछी शक्ति हे ताहीते **श्रीबालकृष्ण चंपूप्रभृति** अनेक बड़े - बड़े संस्कृत ग्रंथ आपने करे हें तब यह टीका ब्रजभाषामें क्यों करी ताको कारण चोथे श्लोकमें कहत हें. ता श्लोकको अर्थ हमारे प्रभुनकूं सदा ब्रजदेश ही बहुत प्रिय हे यह बात पुराणादिकनमें कही है तथा भक्तननें हुं कीर्तनादिकमें आछी रीतसूं गाई हें तातें ब्रज प्रिय ऐसे जे प्रभु तिनकी निश्चय प्रसन्नताके लिये में यह टीका ब्रज भाषामें करत हों. ४.

अब एक समयके विषें **श्रीगुसांईजी** राजनगरमें भायला कोठारीके घर पधारे हते. तहां उनकी प्रार्थनासूं उनके जामाता **गोपालदास**पें अनुग्रह करिकें आपको **चर्वित तांबूल** दियो. तातें उनके मुखद्वारा वल्लाभाख्यानको प्रादुर्भाव भयो ये आख्यायिका वार्तामें प्रसिद्ध हे, तासों संक्षेपसो लिखी हे. ये **वल्लभाख्यान** वेदतुल्य स्वतः प्रमाण हें तिनकीमें व्याख्या करत हों. इहां बहिर्मुख अज्ञानांध शंका करत हे. जीवविशेष गोपालदास हे ताकी यह वाणी हे. तासों याकों तुम वेदतुल्य स्वतः प्रमाण काहेकों कहत हो. प्रत्युत्तर, पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीविटठलनाथजी तिनकी यह वाणी हे तासों वेदतुल्य स्वतः प्रमाण हे. शंका करत हे. श्रीविटठलनाथजी पूर्ण पुरुषोत्तम हे तामे कहा प्रमाण. प्रत्युत्तर, पुंडरीकपुरस्थ श्रीविटठलनाथजी स्वेच्छासों श्रीवल्लभाचार्यजीके घर प्रगट भये हें यह आख्यायिका प्रसिद्ध प्रमाण है. दैवी जीवनकों तो श्रीविटठलनाथजीको पूर्णपुरुषोत्तमत्व अनुभव सिद्ध हे. ओर पुराणांतरमेंहु कलियुगीयावतार गणना कीनी हे

तहां कह्यो हे.

(१)कृष्णोबुद्धोविटठलेशः कल्किंम्लेच्छनिकृंतनः ।।

ओर अग्निपुराणमें भविष्योत्तर खण्डमें हू.

(२)वल्लभोह्यग्निरूपास्याद्विटठलः पुरुषोत्तमः ।।

ऐसो वाक्य हे. तासों श्रीविटठलनाथजी पूर्ण पुरुषोत्तम हे. याविषयक श्रुतिस्मृति पुराण तंत्रस्य विशेष प्रमाण **श्रुतिरहस्य**[३] चरित्रचिंतामणि (प्रभु) प्रभृति ग्रंथनमें समूल लिखें हें. शंका, ठीक हे श्रीविटठलनाथजी पूर्ण पुरुषोत्तम हें परन्तु यह बानी तो गोपालदासकी हे. प्रत्युत्तर, गोपालदासजी तो निमित्तमात्र हें. बानी तो श्रीविटठलनाथजी की हे. शंका, देहांतरमें यह बात केसे संभवे. प्रत्युत्तर, चतुर्थ स्कंधमें राजा उत्तानपादको पुत्र ध्रुव ताकों प्रभु प्रसन्न भये तब दर्शन दियो. ओर वेदमय जो पांचजन्य शंख आपके श्रीहस्तमें हतो ताको स्पर्श ध्रुवको कपोलकों करायो तब स्तुति करी तामें कह्यो जो.

योंतः प्रविश्यममवाचमिमांप्रसुप्तां ।
संजीवयत्यखिलशक्तिधरः स्वधाम्ना ।।

याको अर्थ, सब शक्ति धारणकरिवेवारे प्रभु मेरे अंतःकरणमें प्रवेश करिकें मेरी निश्चेतन बानीकों संजीवन आपके तेजसों करत हे. या रीतसों

श्रीविटठलनाथजीहु आपके मुखारविंदके सुधारसद्वारा **गोपालदासजीको** भ्रमरकीटकन्यायसूं अलौकिक देह संपादन करिकें अंतःकरणमें प्रवेशकरिकें आपहीं आज्ञा किये हें तेसेंहि ब्रह्मादिक, व्यासादिक द्वारा, वेदादिक श्रीमद्भागवतादिकको प्राकटय कीयो ताको कारण यह जो श्रीपुरुषोत्तमकी लीलाको तथा स्वरूपको निरूपण करिवेको जीवको सामर्थ्य नाहीं केसें जो श्रीपुरुषोत्तमकी लीला तथा स्वरूप वाङमनोगोचरातीत हे. ओर **श्रीवल्लभाख्यान**में तो श्रीपुरुषोत्तमकी लीला तथा स्वरूपको निरूपण हे. तासों ये वल्लभाख्यानहु श्रीपुरुषोत्तमकी वाणी हे तासों हम वेदतुल्य स्वतः प्रमाण इनकों कहत हें. ओर ब्रह्मादिकद्वारा वेदादिक श्रीपुरुषोत्तमने ही प्रकट किये हें यह बात तो **श्वेताश्वेतरगोपालतापनीयादिक** उपनिषदनमें तथा श्रीभागवतमें ''प्रचोदितायेनपुरासरस्वती वितन्वताऽजस्त्रसतीस्मृतिं हृदि. स्वलक्षणाप्रादुरभूत्किलास्यतः'' ''तेन ब्रह्महृद्यायआदिकवये कस्मै येनविभासितोयमतुलोज्ञानप्रदीपः पुरा'' इत्यादि स्थलमें प्रसिद्ध हे. शंका, तुमने ध्रुवको दृष्टांत दियो ता रीतसों तो ध्रुवकी बानीकी तुल्यता आवे हे तब ये वेदतुल्य केसें. प्रत्युत्तर, दृष्टांत दिये सो कछु ताकी तुल्यता दार्ष्टांतिकके विषे सब रीतसों नांहि आवे. ऐसे भगवत्तेजको सूर्यादिकनकी उपमा देतहें तासों कहा भगवत्तेज सूर्यादिकके तेज सों तुल्य भयो भगवत्तेज तो सर्वाधिक अलौकिक हे. तेसें या बानीको ओर ध्रुवकी बानीको बोहोत तारतम्य हे. शंका, भगवत्तेजको ओर सूर्यादिकके तेजको तारतम्य तो अनुमानसों तथा वेदादिकसों जानपरत हे. परंतु याको तारतम्य कोन रीतसों हे सो कहो. प्रत्युत्तर, ध्रुवको तो तपस्यादि साधनसाध्य श्रीपुरुषोत्तमकी विभूति विष्णु ताको दर्शन भयो ओर साक्षात् अंगस्पर्श नहि भयो. शंखको स्पर्श भयो सोहु बहिरंग कपोल ताकों भयो. ओर श्रीविटठलनाथजी तो पूर्ण पुरुषोत्तम हे. तपस्यादि साधनसाध्य नहीं हें भक्तिमात्र साध्य हें सोई आपनें गीताजीमें आज्ञा कीनी हे. ''नाहंवेदैर्नतपसानदानेन नचेज्यया. शक्यएवं विधोदृष्टुंदृष्टवानसिमांयथा'' ।।१।। ''भक्त्या त्वनन्ययाशक्य अहमेवं विधोर्जुन. ज्ञातुंदृष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परं तप'' ।।२।। याको अर्थ ग्रंथको विस्तार होय तासों नहीं लिखत हें. यह ऐसे जो प्रभु तिनके साक्षात् मुखारविंदके सुधारसको स्पर्श गोपालदासजीको अंतरंग जो मुख तथा हृदय ताकों भयो तासों ध्रुव सों अधिक गोपालदासजी हें. ओर ध्रुवकी बानीको तो श्रीविष्णुने संजीवनमात्र कियो ओर गोपालदासजीके तो हृदयमें बिराजकें श्रीविटठलनाथजीनें ही आख्यान रूप आज्ञा कीनी तासों ये ध्रुवकी बानी तुल्य नांही वेद तुल्य हे. शंका, श्रीविटठलनाथजीकी बानी हे यह वार्ता तुमने जो प्रकार कह्यो ता रीतसों तो सत्य हे परंतु याको चिह्न हू कछु हे. प्रत्युत्तर, याको चिह्न यह जो**नवमाख्यानमें समस्त परिवारको वर्णन नामपूर्वक कियो हे** परंतु यामे आपके पत्नी श्रीरुक्मिणीबहुजी ओर श्रीपद्मावतीबहुजी इनके नामको वर्णन नहीं कियो याही सों स्फुट होत हे जो बानी आपकी श्रीविटठलनाथजी हे तासों वेदतुल्य अप्राकृत हें. शंका, श्रीविटठलनाथजी पूर्ण पुरुषोत्तम हे इनकी बानी वेदतुल्यस्वतःप्रमाण हे यह सब बात सत्य हे परंतु यामें तो प्राकृत शब्द हें याको अप्राकृत तुम केसें कहत हो. प्रत्युत्तर, यह आख्यान हें तो अप्राकृत परंतु प्राकृत ऐसे भासत हें जो अज्ञानांध हें तिनकों. जैसें भगवदवतार भूतलपें जासमें होत हे तासमय प्रभु प्रायः

सबनकों सामान्य मनुष्य जैसे भासत हें. परंतु दैवीजीवनकों तो तासमें हूं अप्राकृतस्वरूपके ही दर्शन होत हें तारीतसों ये आख्यान हू प्राकृत जैसें भासत हें परंतु अप्राकृत हें वेदसों अधिक हें. शंका, वेदसों अधिक केसे कहत हो. प्रत्युत्तर, वेदतो पूर्ण पुरुषोत्तमके निःश्वास हें. ओर ये आख्यान तो बानी हे. तासों यह तारतम्य आयो जो निःश्वाससों अभिप्राय कछु स्फुट नहीं होय ओर बानी सोंतो वक्ताको अभिप्राय स्फुट होत हे तासों यह वेदसों अधिक हे. यह सब प्र[९]कार मेंने बहिर्मुखकी शंका निरासार्थ कह्यो. वस्तुतः तो श्रीपुरुषोत्तम, वेद, भगवदीय, भगवदीयकी बानी यह सब एक रूपही हें यामें तिलमात्रहूं भेद नाहीं. यह वार्ता निःसंदेह हे यातें मेरी बानी सफल करिवेकों नवाख्यानके व्याख्यानको आरंभ करत हों. राग केदारो, अब प्रथम आख्यानको गान **केदार राग**में कियो ताको निदान यह जो श्रीपूर्णपुरुषोत्तम सर्वदा रासलीला विशिष्ट हें ओर रासलीलोचित समय पूर्णचंद्रवती रात्री हे ओर तत्समयोचित राग केदारो हे. तातें प्रभुनकों अत्यंत प्रिय हे. याहीतें प्रथमाख्यानको गान केदाररागमें कियो. **वंदूंश्रीविटठल वर सुंदर नव घनस्याम तमालजी.** अब गोपालदासजी बिनती करत हें. आप श्रीविटठल पूर्णपुरुषोत्तम हें. आपकोंमें वंदन करत हों. विटठल शब्दको अर्थ विदसो ज्ञान ताकरकें ठ सो शून्य इतनें अज्ञानी जो जीव तिनकों लसो जो अंगीकार करें हें ते विटठल कहिये और श्री सो शोभा. अथवा श्रीस्वामिन्यादिक तिनकरकें युक्त जो विटठल ते श्रीविटठल कहियें. श्रीपुरुषोत्तमही निःसाधनजनहितकर्त्ता हें सों श्रीभागवत दशमस्कंधमें पूर्वार्द्धमें. ''त[१०]स्मान्मच्छरणं गोष्ठं मन्नाथंमत्परिग्रहम्.'' या श्लोकमें निरूपण कियो हे याको भावार्थ यह महा अज्ञानी हों निःसाधन हों याही तें वंदन मात्र करत हों. ओर मेरो कछु सामर्थ्य नहीं हे मेरो उद्धार आपहीं करेंगे. याही तात्पर्यतें वंदू ये वंदन वाचकपद इहां प्रथम ही कह्यो क्यों जो प्रभुनकुं प्रसन्न करिवेको साधन नमन बिना ओर कछु नहीं हें यह बात 'नमोभगवतेतस्मै' या श्लोकके निबंध तथा आवरण भंगमें श्रुतिस्मृतिनसूं स्थापन करी हे ओर याहीते **श्रीवल्लभाचार्यजीहू** सब ग्रंथनके आरंभमें नमन वाचकपद प्रथम लिखत हें. अब वंदन मात्रसों स्वरूप स्फूर्ति भई ता स्वरूपको वर्णन करत हें. **सुंदर** जो काम चंद्रादिक तिनते हुं. **वर** श्रेष्ठ केसे जो चंद्रकामादिकनको तो प्राकृत सौंदर्य हे ओर आपको तो अप्राकृत सौंदर्य हे. अथवा सुंदर जो स्वामिन्यादिक तिनके वर पति. अथवा सुंदर जो दैवीजीव तिनको वरण करवेवारे अथवा तिनने वरवेकों योग्य यही अभिप्राय **मुण्डक कठवल्यादि उपनिषदनमें** तथा गायत्रीमें वर्णन कियो हे. ओर बृहद्वामन पुराणके उत्तरखिल्यस्थ वृंदावन माहात्म्यमें ब्रह्माजीने भृगुसों यही अभिप्राय कह्यो हे. ''स्त्रि[११]योवा पुरुषोवापिभर्तृभावेनकेशवम्. हृदिकृत्वागतिंयांतिश्रुतीनांनात्रसंशयः'' या श्लोकमें. याहीतें सुंदरवर ऐसें निरूपण किये. ओर आप केसे हो. **नवघनश्यामतमाल** नवसो नवीन ओर घन सो पत्रफलादिकनसों गहेरो जो श्यामतमालको वृक्ष ता जेसे हो. श्यामतमालको वृक्ष जेसे श्याम दिसत हे तेसे आपके हु श्रीअंगको वर्ण श्याम हे. याको भावार्थ यह जो जेसें श्यामतमालके वृक्ष जो अपने पास प्राप्त होय ताको ताप मिटावे तेसें आपहु जो शरण आवे ताको ताप दूर करत हो. ओर जेसें श्यामतमाल वृक्षके आश्रय सों अनेक लता प्रफुल्लित होत हें अनेक पक्षी सुख पावत हें. अनेक शाखा फल पत्रसों

शोभत हें. तेसे आपके आश्रयसों श्रुतिस्मृति यथार्थ साथर्क होयके प्रफुल्लित होत हें. अनेक दैवीजीव सुख पावत हें ओर स्वपरिवार शाखाफलपत्रनसों आप शोभत हें. अथवा, दो उपमा दीनी हे नवघन, ओर तमालवृक्ष ता जेसे श्याम आप हो. श्यामशब्दको म[१२]ध्यमणिन्यायसों दोऊ उपमानसों सम्बन्ध हे. घनकी उपमा दीनी तासों यह सूचन कियो. ऐसे घन सूर्यको ताप निवारण करत हे रसवृष्टि करत हे. मयूरादिकनकों आनंद देत हे पृथ्वीकों आर्द्र करत हे. विद्युल्लतासों बकावलीसों इंद्रधनुषसों शोभायुक्त होत हें. प्रथम ताप करत हे. तब आप आयकें तापशांति करत हें. तेसे आप हुं संसाररूप सूर्यको ताप निवारण करत हे वेणुगीतादिक निरूपणरूप रसवृष्टि करत हें मयूरादितुल्य जो दैवी जीव तिनकों आनंद देत हे. स्वलीलामृत सों पृथ्वीको आर्द्र करत हें. विद्युल्लतातुल्य श्रीस्वामीन्यादिक तिनकरके तथा बकावली तुल्य मुक्तावली तिनकरके तथा इंद्र धनुष तुल्य जो वनमालादिक नानावर्ण पुष्पादिकनकी माला तिनकरके शोभत हें. प्रथम स्वदर्शनार्तिरूप ताप जीवके हृदयमें उपजावत हें. पाछें हृदयमें पधारके दर्शनामृत सों तापशांति करत हें. इत्यादिक अनेक अभिप्राय इन दो उपमानसों सूचन किये. अब ऐसे श्रीपुरुषोत्तम या लोकमें काहेंको प्रगट भये ताको कारण आधीतुकसों निरूपण करत हें.

संस्कृत टीका

श्रीगोपीजनवल्लभाय नमः ।
श्रीवल्लभाचार्यचरणकमलेभ्यो नमः ।
श्रीविटठलनाथचरणकमलेभ्यो नमः ।

अथ श्रीमत्प्रभुचरणाः स्वीयानां मायावादनिवर्तनपूर्वकं पुष्टिभक्तिमार्ग-रहस्यज्ञापनार्थं स्वयं दासदासहृदये स्वसिद्धान्तं प्रकाश्य तद्द्वारा अल्पबुद्धीनां बोधाय भाषया स्वसिद्धान्तं प्रकटयाञ्चक्रुः. तदनन्तरं तत्कृपावान् श्रीमद्गोपालदासो ग्रन्थारम्भे निर्विघ्नपरिसमाप्त्यर्थं नमनात्मकं मङ्गलम् आचरति ।।

१ जगतीतल उद्धार

जगतीतल उद्धार करेवा प्रगटया परमदयाल ।।१।।

जगती जो पृथ्वी ताके तलविषें जो दैवीजीव हें तिनको उद्धार करिवेकों प्रगटे. इतनो करिवो कहा कारण सो कहत हें. आप परमदयाल हें यातें दैवीजीवनके उद्धारार्थ आप प्रगट भये. अथवा, जगतीतल जो भूतल ताको उद्धार करिवेकों प्रगटे. जेसें यज्ञस्वरूप श्रीवराहजी तिनने असुरसम्बन्ध छुड़ायकें पृथ्वीको उद्धार कियो आपके स्पर्श सों सर्व कर्मोपयोगी कीनी. तेसें आपने हुं पाखण्डमत निराकरणमें असुरसम्बन्ध छुड़ायके उद्धार कियो आपके चरणारविंदके स्पर्श सों स्वलीलोपयोगी कीनी. अब या रीतसों तो आप पूर्णपुरुषोत्तम हे तिनकों कलावतार जो श्रीवराहावतार तिनकी तुल्यता भई यह शंका निवारणार्थ कह्यो. **परमदयाल** याको भावार्थ. श्रीवराहजीने तो ब्रह्मादिकनकी प्रार्थनासों पृथ्वीको उद्धार कियो ओर जितनो प्रयोजन हतो तितने ही समयमें स्पर्शानंद दियो ओर कियो ओर र[१३]ससम्बन्ध छुडायकें शुष्ककरी ओर आपनें तो अपनी इच्छासों ही उद्धार कियो ओर स्वस्वरूप जो स्वपरिवार ता द्वारा अनेक वर्ष पर्यंत स्पर्शानदं दियो ओर देंगे ही. ओर असुरभारजन्य तापसों शुष्क हती ताकों स्वलीलामृतरससों सरस कीनी. या अभिप्रायसों पर दयाल यह विशेषण कह्यो ।।१।। अब यह कार्य कोईकी प्रेरणा सों आपने कियो होयगो. या शंकाको निवारण आधी तुकसों करत हें.

(१. कलियुगमें प्रभुनके चार अवतार कृष्ण, बुद्ध, श्रीगुसांईजी ओर म्लेछनको मारिवे वारे ऐसे कल्कि.

२. श्रीमहाप्रभुजी ओर श्रीगुसांईजी यह भगवन्मुखाग्निरूप ओर वस्तुतः साक्षात्पुरुषोत्तमरूप हे.

३. श्रुतिरहस्य या नामको काशीस्य श्रीगिरिधरजी महाराजकृत ग्रंथ हे ओर चरित्रचिंतामणी श्रीदेवकीनंदनजी महाराजकृत आचार्यचरित्रनिरूपक ग्रंथ हे.

४. जेसें भ्रमरी कीटकको उठायके अपुनें स्थानमें लेजाय तब वह कीटक भ्रमरीके भयसों साक्षात भ्रमररूप होयजायहे तेसें भगवत्सम्बन्धसों जीव भगवद्रूप होय.

५. ब्रह्माजीके मनमें यथार्थ स्मृति लायके प्रभुनने अपुने स्वरूपभूत वेद प्रगट किये.

६. यह श्री भागवतरूप अनुपम ज्ञानदीपक प्रभुननें ब्रह्माजीकुं दिखाये.

७. स्वाध्याय तप दान याग इन सबनसूं भगवद्दर्शन तेसो नहीं होय ऐसी अर्जुनकुं भयो ऐसो साक्षातदर्शन तथा स्वरूप ज्ञान तथा लीलाप्रवेश यह सब अनन्यभक्तीसूं ही होय हे.

८. जामे ओर प्रमाण देवेको काम न पडे ओर जो कोईसू अप्रमाण न कह्यो जाय ताकूं स्वतःप्रमाण कहत हें.

९. आख्यानकुं वेदसुं आधिक्य कह्यो सो केवल वादि मानभंगार्थ कह्यो.

१०. प्रभुननें आज्ञा कीनी हे जो या व्रजको रक्षक तथा पति हुं ओर याको मेंने आपनो कियो हे.

११. स्त्री होय अथवा पुरुष होय परंतु प्रभु ही हमारे पति हे ऐसे हृदयमें ध्यान करे तो श्रुतीनकी गतिको प्राप्त होय इतने विन जीवनको भगवल्लीलाप्राप्ति होय.

१२. जैसे एक डोरामे तीन मणी परोये होय तो तामे बीचको मणी होय सो कोई बाजुके मणिको स्पर्श करे तेसे बीजको पद कोई आडी लगे हे.

१३. रस ऐसो जलकोहु नाम हे समुद्र मेते निकारि ता पीछे शुष्कमयी.

संस्कृत टीका

श्रीगोपीजनवल्लभाय नमः
(केदार-रागेण गीयते)

वन्दू श्रीविटठलेति. विदाज्ञानेन ठान् शून्यान् लाति गृह्णाति इति विटठलः व्याकरणशास्त्ररीत्या विट्ठलः इति. केवल ठकारोरभसा अज्ञानेन उच्चारणे गुरुत्वात् टकारं न वदन्ति यथान्तरालिकैः अज्ञानाद् यमुनाष्टके कलिन्दया इति शब्दस्थाने कलिन्दजा इति शब्दोच्चारणं क्रियते तथा अत्र ज्ञेयम्. वरेति. सर्वेषां

भगवदवताराणां मध्ये श्रेष्ठः स्वयम् इति अर्थः. सुन्दरेति. ‘‘स्वमूर्त्या लोकलावण्यनिर्मुक्त्या लोचनं नृणाम्, गीर्भिस्ताः स्मरतां चित्तं पदैस्तानीक्षतां क्रिया’’ इति तथात्वम् इति अर्थः. नवघनश्याम-तमालः इति. नवीनोनिबिडो यः श्यामतमालः तद्वद् गुणो यस्मिन् यस्य रूपं वा नवघनो-नवीननीरदः श्यामतमालश्च तद्वद्रूपं गुणो वा यस्य. तेन विश्वतापहारित्वम् इतिभावः. जगतीतले ये जीवाः तेषाम् उद्धारार्थं जगतीतलस्य वा परमदयया स्वयं पुरुषोत्तमो विट्ठलरूपेण यः प्रकटो अभूद् एतादृशं तं प्रभुम् अहं वन्दे. अत्र तावद् नामोच्चारणं कृतं नामविग्रहं मूलग्रन्थकारैः मनसि निधाय. तेन स्वस्य अनुग्रहकर्त्तुः श्रीविट्ठलस्य च स्वग्रन्थे स्वरूपं प्रतिपादितं यः एतादृशान् अङ्गीकरोति तादृशैः सएव नमनीयः. अतएव नामपदेन सह क्रियापदं योजितम्. भगवति जीवैः नमनमेव कर्त्तव्यं न अधिकं शक्याम् इति सिद्धान्तः इति उक्तं निबन्धो एतद्विवरणे श्रीपुरुषोत्तमचरणैः उक्तम्. नमनं प्रह्वीभावः. ‘‘मुमुक्षुर्वै शरणमनुव्रजेत् मुमुक्षुर्वै शरणम् अहं प्रपद्ये’’. आपस्तम्बसंहितायां पञ्चमाष्टके चतुर्थानुवाके इयं श्रुतिः ‘‘नमस्कृत्यहिवसीयां समुपचरन्ति’’ इत्यादिश्रुतेः ‘‘प्रणमेद् दण्डवद्भूमौ भक्तिप्रह्वेन चेतसा’’. ननु स्वयं पुरुषोत्तमो विट्ठलरूपेण प्रकटो अभूद् इति कथनम् अयुक्तम् इति चेद् न. ‘‘कृष्णो बुद्धो विट्ठलेशः कल्किः म्लेच्छनिकृन्तनः, पूर्णाःकृष्णो बुधश्चांशः परमानन्दविट्ठलः’’ इतिब्रह्माण्डपुराणे उक्तत्वात्. तथा कथनं युक्तमेव. किञ्च. विट्ठलरूपेण या लीला कृता साऽपि तत्र स्थले स्फुटीकृता. ननु भवद्भिः विट्ठलस्य कृष्णावतारत्वनिरूपणे पुराणवाक्यानि निरूपितानि तानि अस्माकं न रुचिजनकानि. कुतः पुराणानां बहुव्यापकत्वाद् इति चेद् उच्यते. ‘‘इतिहासपुराणं वेदानां पञ्चमो वेदः’’ इतिश्रुतेः तेन इयं शङ्का निरस्ता. ‘‘ऋग्यजुः सामाथर्वाख्या वेदाश्चत्वारः उद्धृताः, इतिहासपुराणानि पञ्चमो वेद उच्यते’’ (भाग.पु.१।४।२०) इतिप्रथमस्कन्धे. इतिहासपुराणानि पञ्चमो वेदः ईश्वरः. एतद् आख्याने चतुर्विंशतिः गद्यानि कृतानि. तत्र प्रथमगद्येन निर्विघ्नसिद्धये नमनम्. द्वितीयेन श्रीमत्प्रभुचरणानां भगवस्वरूपत्वप्रतिपादनम्. तृतीयेन स्वहृदये लीलास्थभाव-स्फुरणार्थं प्रार्थना. चतुर्थात् सममपर्यन्तं चिदंशवर्णनम्. अष्टमात् पञ्चदशपर्यन्तम् आनन्दांशवर्णनं षोडशाद् एकविंशतिः पर्यन्तं सदंशवर्णनम्. ततः एकेन प्राकट्यकारणवर्णनम्. एकेन प्राकट्यम् एकेनस्वरूपम्. अत्र सम्बन्धादिचतुष्टयं कथ्यते. प्रतिपाद्य-प्रतिपादकभावः सम्बन्धः. मायावादनिरासपूर्वकं पुष्टिभक्तिरहस्य ज्ञापनं प्रयोजनम्. श्रीविट्ठलो विषयः. दासदासो अधिकारी अतः परं गद्यानां व्याख्या ।।१।।

२ श्रीपुरुषोत्तम स्वतंत्र

श्रीपुरुषोत्तम स्वतंत्र क्रीडा लीलाद्विजतनु धारी ।।
सात दिवस गिरिवर कर धार्यो वासव वृष्टि निवारी ।।२।।

श्रीपुरुषोत्तम तो त्रिगुणातीत अगणितानंद हें ताते स्वतंत्र क्रीडा करवेवारे हें ओर लीलामात्रसों हि द्विज जो ब्राह्मण ताकी तनु जो देह ताको धारण कियो हे. जीव जैसे कर्मानुसार देह धारण करें हे तेसें नहीं सोहि श्रीभागवतप्रथम स्कंधमें ली[१४]लावतारानुरतो देवतिर्यंङनरादिष्वित्यादिस्थलमें कह्यो हे अथवा, लीलाद्विज जो भगवल्लीलासम्बन्धी भगवन्मनोरूप निष्कलंक उदयास्तमयभाव रहित चंद्र ता जेसी तनु जो देह धारण कियो हे. याको भावार्थ यह जो जेसे चंद्र अंधकारको नाश करत हे चकोरादिनकों आनंद देत हे. लोकोपकारक औषधीनको पोषण करत हे. संयोगीनकों सुख देत हे. वियोगीनकों ताप करत हे. तेसे आपहु मायावादरूप अंधकारको नाश करत हे. दैवीजीवरूपी चकोरादिकनको आनंद देत हें लोकोपकारक श्रुति स्मृतिरूप औषधीनको पोषण करत हें भगवद्वियुक्त जीवनकूं प्रथम भगवद्विरहताप देत हें फेर भगवत्संयोगामृतसूं शीतल करत हे. बहिर्मुखनको ताप करत हें. स्वीयजनकों शीतल करत हें. अब या अवतारमें जेसें स्वेच्छासों जगतीतलको उद्धार कियो. स्वीयजनकी रक्षा करी तेसें प्रथम नंदनंदनस्वरूपसों हु श्रीगोवर्द्धन धारण कियो स्वीयजनकी रक्षा करी सो वर्णन आधी तुकसों करत हें.

सातदिनतांई **गिरिवर** जो गिरिराजजी तिनको कर सों श्रीहस्तमें धारण कियो. यातें **वासव** जो इंद्र ताकी **वृष्टि**को निवारण कियो. **अथवा** वासव जो इंद्र ताको मदरूपपर्वततें निवारण कियो. ओर वृष्टिकोहु निवारण कियो ये अभिप्राय **विद्वन्मण्डनमें** नित्य लीलावादमें **तैत्तरीयसंहिताके** प्रथमाष्टक तृतीयाध्याय सप्तमानुवाककी श्रुतिके व्याख्यानमें निरूपण कियो हे ।।२।।

[१४] देवता पशु पक्षी मनुष्य इत्यादिक जातिनमें प्रभु इच्छा मात्रसुं अवतार लेहें.

संस्कृत टीका

श्रीपुरुषोत्तमः इति. स्वतन्त्रक्रीडारूपो यः पुरुषोत्तमः स्वलीलया द्विजतनुं बिभर्त्ति. नतु सर्ववेदविप्लव-वादिमतवत् परतन्त्रः शबलब्रह्मवत् परतन्त्रः क्रीडा. सप्तदिवसपर्यन्तं हस्ते गिरिराजं धृत्वा वासववृष्टिं न्यवारयत् ।।२।।

३ ते प्रगटयानूं कारण

ते प्रगटयानूं कारण कहियें जो सुरता मन आणो
करो कृपा हुं करुं वीनंती पोतानो करि जाणो ।।३।।

ते सो प्रथम निरूपण जिनको कियो ते आप प्रगट भये तिनको **कारण** जो वेदांतप्रतिपाद्य मूलस्वरूप ताको निरूपण करें जो **सुरता** जो वा स्वरूपकी स्मृति मेरे मनमें आप **आणो** सो ल्याओ तो. अथवा जिनने **गिरिराज** धारण कियो ते ही श्रीपुरुषोत्तम श्रीगुसांईजीरूपसुं भूतलमें प्रगट भये तिनको प्रगट होयवेको कारण सो हेतु कहियें सो कहुं जो आप मेरे मनमे सुरता सो दैवीपनो आणो सो ल्याओ तो. याको भावार्थ यह जो अनेक वर्षनसों भगवद्वियोग भयो तातें बहुत आसुरसम्बन्धसुं मेरो मन असुरप्राय होय रह्यो हे सो पाछो दैवी आप करो तो मैं निरूपण करुं. यह अभिप्राय मुख्यमें मंत्र स्फुट है. ओर जो श्रोता मन आणो. ऐसे हु पाठ हे ताको अर्थ ओर टीकानमें लिख्यो हे. अब या रीत सों तो निराग्रहता दीखत हे. तासों आग्रहपूर्वक फेर बीनती करत हें.

मेरे उपर कृपा कीजे में आपके मूलस्वरूपकी वीनती करों. अब जीवधर्मसों निरूपणमें कुछ सम विषम होय तो अपराध पड़े ताकेलियें फेर प्रार्थना

करत हें. **पोतानो करि जाणो** मोंकों अपनो करकें जानियें. याकों भावार्थ यह जो मोकों अपने करके जानेंगे. तासों सब दोष निवृत्त होयंगे. तब बानीको दोष निवृत्त होय तामें आश्चर्य कहा. अब प्रार्थना करी तासों श्रीपुरुषोत्तमस्वरूपकी स्फुर्ति भई सो लीलास्थान जो अक्षरब्रह्म तासहित स्फुर्ति भई. जैसें श्रुतीननें तपश्चर्या कीनी तब श्रीपुरुषोत्तमनें प्रसन्न होयकें आकाशवाणी द्वारा आज्ञा कीनी जो वर मांगो तब श्रुतिननें वर मांग्यो जो आपके स्वरूपको दर्शन कराओ तब अक्षरब्रह्म जो गोलोक तासहित आपनें दर्शन दिये यह कथा बृहद्वामनपुराणमें वृंदावन माहात्म्यमें ब्रह्माजीने भृग्वादिक ऋषीन् प्रति कही हे सो प्रसिद्ध हे तेसें इहां गोपालदासजीकों हु ऐसे दर्शन भये तासों प्रथम अक्षरब्रह्मको निरूपण तीन तुकसों करत हें अब अक्षरब्रह्मको भगवल्लीलास्थानत्व तो ''त[१५]दाहुरक्षरं ब्रह्मसर्वकारणकारणं. विष्णोर्धामपरं साक्षात्पुरुषस्यमहात्मन'' इति तृतीयस्कंधादिवाक्यनमें तथा कठवल्लीमुण्डकप्रभृति उपनिषदनमें स्फुट हे ।।३।।

[१५] सर्वके कारण जे पंचमहाभूतादिक तिनके हु जो कारण हे और जो सर्वत्र व्यापक ऐसें पुरुषोत्तमको साक्षाद्धाम हे. ताकों अक्षरब्रह्म कहत हे.

संस्कृत टीका

ते तव प्राकट्यकारणम् अहं कथयेयम्. यदि श्रोतुः मे मनसि प्राकट्यकारणं तद्वर्णनयोग्यतां च आनय. तर्हि कृपां कुरु इति अहं प्रार्थनां करोमि. स्वकीयत्वेन माम् उररीकुरु. नो चेद् अहं न शक्नोमि इति भावः।।३।।

अथ अक्षरब्रह्मस्वरूपम् आह.

४ व्यापकरूप अद्वैत

व्यापकरूप अद्वैत ब्रह्म जे तेजोमय केहवाय ।
आरजपंथअधिकारी मुनिजन तेमाहे लयथाय ।।४।।

अब ब्रह्म जो अक्षरब्रह्म सो केसो हे, **व्यापकरूप** हे, व्यापक हे रूप सो स्वरूप जाको ऐसो हे रू[१६]पपद कह्यो तासुं निर्विशेषत्व दूर कियो हे. अब व्यापकरूप कह्यो तब तो द्वैत होत हे. क्यों जो व्या[१६]प्य व्यापक भावतो द्विनिष्ट हे. यह शंका निवारणार्थ **अद्वैत** यह विशेषण कह्यो. यातें यह सूचन कियो जो व्यापकहु आप हें ओर जामें आप व्याप्त होत हें सो सब जगतहु आपहीं हें. यह अभिप्राय बृहदारण्यकबृहन्नारायणादिक उपनिषदन मेहुं वर्णन कियो हे. और हंसस्वरूपसों सनकादिकनसोहुं प्रभुननें आज्ञा कीनी है. ''अ[१७]हमेव न मत्तोऽन्यदिति बुध्यध्वमंजसा''. ओर अक्षरब्रह्म केसो हे. तेजोमय स्वयं प्रकाशहे याहीसों वेदमें अनेक स्थलमें याकुं भारूप ज्योतिरूप कह्यो हे सोही दिखावत हें केहवाय इतनें अक्षरब्रह्मको स्वरूप जेसो इहां निरूपण कियो तेसो ही वेदपुराणादिकमें कह्यो जाय हे अब ऐसो जो अक्षरब्रह्म ताकी प्राप्तिके अधिकारी कोन हें तिनको निरूपण करत हें. **आरजपंथ** आरज सो आर्य जो वेद ताको पंथ जो मार्ग निष्कामकर्म मार्ग तिनके अधिकारी जो मुनिजन हें वे ता अक्षरब्रह्ममें लीन होत हें. अब सामान्यजन नहीं कहे ओर मुनिजन कहे ताको अभिप्राय यह जो सामान्यजनकों तो ज्ञानसों कर्मसोंहु अक्षरब्रह्मकी प्राप्ति नहीं हें. मननशील होय ताको नाम मुनि तासों जो मनन करकें सारासारविचार करत हे तिनकों अक्षरब्रह्मकी प्राप्ति होत हे. शंका, ज्ञानके विषे कर्मकेविषे सारासारविचार कहा ये तो दोइ वेदोदित हें. **प्रत्युत्तर** उपनिषच्छ्रवणसों तथा ब्रह्मसूत्रादिविचारसों परोक्ष ज्ञान उत्पन्न होय हे. परंतु मननविना असंभावना विपरीतभावना निवृत्तिपूर्वक अपरोक्ष ज्ञान नहीं उत्पन्न होय ओर अपरोक्षज्ञानविना मुक्ति नहीं होय तासुं मनन अवश्य चाहिये याहीतें **ब्रह्मवल्ली उपनिषतमें** सप्तमानुवाकसमाप्तिमें जो विद्वान होयकें हु मनन नहि करे ताकों संसारभय रहेही हे ऐसे कह्यो हे. अब कर्ममें विचार यह जो वेदमें रोचनार्थ कर्मके फल स्वर्गादि कहे हें ऐसें भास होत हे तथापि निष्काम कर्म करे भगवदर्पण करे यह **श्रीगीताजी**में श्रीकृष्णने निरूपण कियो हे. ''य[१८]त्करोषियदश्नासियज्जुहोषिददासि यत्. यत्तपस्यसिकौन्तेयतत्कुरुष्वमदर्पणं''. या श्लोकमें तासो निष्काम कर्मकरि भगवदर्पण करे तब चित्तशुद्धि होयके शुद्धज्ञान प्राप्त होय तब अक्षरब्रह्ममें वाको लय होय या अभिप्रायसों मुनिजन ऐसे कह्यो हे ।।४।।

१६. निबंधमें यज्ञरूपोहार पूर्वकाण्ड ब्रह्म तनुः परे या श्लोकमें जेसे तनुपदसों साकारता सिद्धकीनी हे तेसे इहां रूप पदसों सिद्ध करी.

१७. जो सब जग्गे रहे रहे सो व्यापक कह्यो जाय और जो कोई जग्गे रहे कोई न रहे सो व्याप्य कह्यो जाय जेसे काल आकाश ये सब जग्गे हे ताते व्यापक हें और मनुष्य घड़ा इत्यादि व्याप्य कहे जाय हे.

१८. हे अर्जुन तुं जो कर्म करे हे ओर फल भोग करे हे तथा होम दान तप करे हे सो सब मोकुं अर्पण कर.

संस्कृत टीका

व्यापकः इति. अध्यात्मरूपेण व्यापकम्. अद्वैतं द्वैतभावरहितम्. ब्रह्म. अक्षररूपम्. पुनश्च तेजोमयम् एतादृशे ब्रह्मणि मुक्तिमार्गीयाः जीवाः लीयेत इति अर्थः ।।४।।

५ अक्षर आदि अखण्ड

अक्षर आदि अखण्ड अनूपम उपमा कही न जाय ।।
अस्तिवस्तुसउकोमलि बोलेनिगमनेतिनेतिगाय ।।५।।

अब प्रथम जाको निरूपण कियो ताहीकों मायावादी परब्रह्म कहत हें यातें ओरकों यह संदेह होय जो ऐसो हि परब्रह्मको स्वरूप होयगो ताके निवारणार्थ नाम कहत हें. **अक्षर** सो अक्षरब्रह्म वह केसो हे. **आदि** सर्वसृष्टिके कारण जे आकाशादिक इनको हु आविर्भाव अक्षरब्रह्मतें हे यासों आदि ऐसे कह्यो. अक्षरब्रह्म जगतको उपादानकारण हे यह बात मुण्डकादिउपनिषदनमें स्फुट हे और **गीता श्रीभागवत** प्रभृतिनमेहु ‘‘अ[११]व्यक्तादीनिभूतानि त[२०]दाहुरक्षरं

ब्रह्म सर्वकारणकारणं'' इत्यादि स्थलमें स्फुट हे. अब सब पदार्थको यासों आविर्भाव भयो तासों इतनो अंश न्यून भयो होयगो. जेसे घट जलसों भरयो हो तामेसों जितनो जल निकासे तितनो तामे न्यून होय. यह शंका निवारणार्थ कहत हें. **अखण्ड** कालत्रयमेंहु जामे अणुमात्र न्यूनता नांही. जेसे समुद्रमेंसो अनेक घट जल निकासो तोहु समुद्र अखण्ड रहे तेसें. याहीतें अनुपम उपमारहित हे याकों उपमा देवेकों दूसरो कछु पदार्थ नहीं हे सोही कहत हें उपमा कही न जाय याहीतें पुरुषोत्तमके स्वरूपको जिनकों ज्ञान नांही हे ओर अक्षरब्रह्मकों ही परब्रह्म करिकें जानत हें ऐसे जे मायावादी ते. **सउको मलि बोले** सब कोई मिलिकें कहत हें **अस्ति वस्तु** कछुक अनिर्वाच्य वस्तु हे याहीतें निर्गुण निराकार परब्रह्म स्वरूप वे कहत हें परंतु ऐसो कछु ब्रह्मस्वरूप नहीं हे. शंका तामे प्रमाण कहा. **प्रत्युत्तर, निगम नेति नेति गाय** आछी रीतसों जातें ब्रह्मस्वरूपको ज्ञान होय ताको निगम कहियें ऐसो निगम जो वेद सो या प्रकारको ब्रह्मरूप नहीं हे ऐसें बारंबार गान करत हें. कछु स्वल्पस्वरसों नहीं कहत हे. अथवा, उपमा कही न जाय याको भावार्थ यह जो सद्दश पदार्थकी उपमा दीनी जाय हे ओर जगतके सब पदार्थ तो यामेंसो उत्पन्न भये हें. ओर निकृष्ट हें कोई भी सद्दश नांहीं ओर पुरुषोत्तम स्वरूप यासुं अति उत्कृष्ट हे. तासुं याकी तुल्यकोटीकी कोई वस्तु नहीं हे इतने उपमा कहांसो दीनी जाय. याहीते साङख्ययोगादिस्मृतिकार ऋषि सबकोइ अस्ति वस्तु ऐसें कहें हें ओर वेदमें हु यह स्थूल नहीं हे यह अणु नहीं हे ऐसे लौकिक धर्मनके निषेध मुखसुं अक्षरको वर्णन कियो हे सो गार्गीविद्या मूर्तामूर्त्तब्राह्मणादि स्थलनमें स्फुट हे. अब अक्षरब्रह्मको अस्ति वस्तु या रीतसों कहत हें. निरूपण नांहीं करत हें ताको कारण कहत हें ।।५।।

१९. प्राणीमात्र अक्षरब्रह्मते उत्पन्न होत हें अरु अचरमें लय पावत हें.
२०. याको अर्थ पहिले लिख्यो हे.

संस्कृत टीका

अक्षरः इति. न क्षरति इति अक्षरः.

कूटस्थः निर्विकारः कूटस्थो अक्षरः उच्चते इत्यादिवाक्यात् सर्वेषाम् आदिः. एतादृशे ब्रह्मणि काऽपि उपमा दातुं न योग्या. अस्ति इति. अस्ति अस्ति इति सर्वे जनाः वदन्ति. वेदस्तु नेति नेति ब्रूते. 'नेति नेति' इतिश्रुत्या ब्रह्मणि जडजीवधर्माः निषिध्यन्ते. नतु प्रपञ्चः निषेधः ।।५।।

६ निर्गुणनो निर्देश

निर्गुणनो निर्देश अटपटो रसना शीपेरे कहिये ।।
रूप वर्ण वपु दृष्टपदारथ त्यां एको नव लहिये ।।६।।

या अक्षरब्रह्मको **निर्देश** जो निरूपण सो अटपटोहे अशक्य जेसो हे याहीतें **रसना** जो जिह्वा अर्थात् बानी ताते केसें कह्यो जाय. क्यों जो निरूपण तो सत्वादिक गुण रूप वर्ण. जो ब्राह्मण क्षत्रियादिक अथवा गौरश्यामादिक ओर वपु जो देह इतने पदार्थ लौकिकमें दीखत हें तातें वर्णन होय सकत हे. ओर अक्षरब्रह्मके विषे तो यह लौकिक पदार्थ एक हु नहीं है. सब अलौकिक हें तातें बानीतें याको निर्देश होत नांही हे. याहींते श्रु[२१]ति कहत हें जो जो ब्रह्मतें मनसहित बानी हु निवृत्ति पावत हे तब कोन रीतसों निरूपण होय याहींते **अटपटो** ऐसें कह्यो ओर अक्षरब्रह्मकी निर्गुणता **एकादशस्कंध**में प्रभुनने आज्ञा करी हे ''मन्निकेतंतुनिर्गुणं[२२]''. ओर द्वादशस्कंधमें हु चतुर्थाध्यायमें न[२३] तस्य कालावयवेःपरिणामादयोगुणाः अनाद्यनंतमव्यक्तंनित्यंकारणमव्ययं.

(२४)न यत्र वाचो न मनो न सत्त्वं, तमो रजो वा महदादयोऽमी ।
न प्राण बुद्धीन्द्रिय देवता वा, न सन्निवेशः खलु लोक कल्पः ।।
(२५))न स्वप्नजाग्रन्न च तत् सुषुतं, न खं जलं भूरनिलोऽग्निरर्कः ।।

संसुप्तवच्छ्रन्य वद प्रतर्क्य, तन्मूलभूतं पदमामनन्ति ।।

इन श्लोकनमें यह सब बात स्फुट हे. अब लीलास्थान जो अक्षरब्रह्म ताको निरूपण करिकें ओर नित्यलीलाविशिष्ट जो श्रीपुरुषोत्तम तिनको निरूपण करत हें ।।६।।

२१. यह बात ब्रह्मवल्ली तृतीयमुण्डक इत्यादिकनमें स्फुट हे.

२२. मेरो धाम सो निर्गुण हे.

२३. कालके अवयव जो घटी दिन मासादिक तिनतें अक्षरब्रह्मकों कछुबी विकार नहीं होय ओर वह आदि अंतरहित अव्यक्त नित्य सबको कारण हे तोहु कछु न्यून नही होय.

२४. ओर जहां वाणी मन सत्व रज तम महत्वादि प्राण बुद्धी इंद्रिय देवता लौकिकरचना यह कछुभी प्रवृत्त नहीं होय.

२५. ओर जाग्रत् सुषुप्ति पंचमहाभूत सूर्य इनरूप जो नहीं हे ओर गहरी नींदकी नाइ ओर शून्यकीनाई इनको स्वरूप तर्कमें नहीं आवे ताको सबको मूलभूत अक्षर पद कहे हे.

संस्कृत टीका

निर्गुणेति. निर्गुणस्य ब्रह्मणो निर्द्देशं कोऽपि कर्तुं न क्षमः यतो दुर्घटः कस्माद् दुर्घटः इति आकाङ्क्षायाम् आह. रूपेति. रूपम्. वर्णः वपुः एते दृष्टपदार्थाः अक्षरब्रह्मणि न सम्भवन्ति अतो रसनया केन प्रकारेण वच्मि. किञ्च. ''तदाहुरक्षरं ब्रह्म सर्वकारणकारणम्, विष्णोर्धाम परं साक्षात्पुरुषःस्य महात्मनः'' (भाग.पु.३।११।४१) इति. ''न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः, यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम'' (भ.गीता १५।६) इतिवाक्यात् पूर्वोक्तं भगवद्धामः इति अर्थः ।।६।।

७ तेहथकी पुरुषोत्तम

तेहथकी पुरुषोत्तम अलगा लीला अचल विहार ।।
ब्रह्मज्ञानीनें मुक्तिमारगी सपने नहीं वेहेवार ।।७।।

अब पुरुषोत्तम सो जाकों वेदमें परब्रह्म कहत हें सो **तेहथकी** पूर्वनिरूपित अक्षरब्रह्मतें. **अलगा** दूर हें याको आशय यह जो उत्तम हें. सोई गीताजीमें प्रभुनने आज्ञा कीनी हे.

(२६)यस्मात्क्षरमतीतोहमक्षरादपिचोत्तमः ।।
अतोस्मिलोकेवेदेचप्रथितः पुरुषोत्तमः ।।

या श्लोकमें अब याको फलितार्थ यह जो क्षर सो आविर्भाव तिरोभाववारो प्रंपच. मूलकारण अक्षर. लीलास्थान. और प्रपंच सों पर ओर अक्षरब्रह्मतें उत्तम ऐसे पुरुषोत्तम हें यह सब बात कठवल्लीउपनिषतकी तृतीयवल्लीमें स्फुट हे ओर **सिद्धांत मुक्तावली**में श्रीवल्लभाचार्यजीनें हु स्फुट निरूपण कियो हे. अब ये पुरुषोत्तम केसे हें. जिनकी **लीला** जो गोवर्धन - धारणादिक ओर विहार जो रास क्रीडादिक सो सब **अचल** नि[२७]त्य हें. अथवा लीलाअचल जो लीलोपयोगी पर्वत श्रीगिरिराजजी ता पर विहार करत हें. ऐसे जो पुरुषोत्तम हें तिनसों **ब्रह्मज्ञानी** जो कर्मकोंही ब्रह्म करिकें जानवेवारे ओर **मुक्तिमारगी** अक्षरब्रह्मकों परब्रह्म करिकें जानवेवारे. इन दोउनको तो स्वप्नमें हु ब्योहार नहीं हे अथवा ब्रह्मज्ञानी जो अक्षरब्रह्म मात्रके ज्ञानवारे ओर मुक्तिमार्गी सो

मर्यादाभक्तिमार्गीय जे श्रीभागवतादिकमें भ[२८]गवान्भजतांमुकुंदो मुक्तिं ददाति कर्हिचित् स्म न भक्ति योगं इत्यादिक स्थलमें भक्ति करें पीछें हु मुक्तिके अधिकारी कहे हें ते इन दोउनकों स्वप्नमें पूर्वोक्त नित्यलीलाको सम्बन्ध होत नाहीं क्यों जो पुरुषोत्तम लीला प्राप्ति निर्गुणभक्तिमात्रसूं ही होय हे ऐसें **वेद गीता श्रीभागवतादिकनमें** अनेकत्र कह्यो हे ।।७।। अब प्रथम निरूपण जाको कियो ऐसो जो अक्षरब्रह्म ताके विषे गुण, रूप, वर्ण, वपु ये लौकिक कछु भी नहीं हे ऐसे कह्यो. परंतु वे अलौकिक केसे हे यह शंका निवारणार्थ ओर लीलाअचलविहार ऐसे कह्यो सो लीला कोनसे स्थलमें हे जहां ब्रह्मज्ञानीप्रभृतिनको सम्बन्ध नहीं हे याहु शंकाके निवारणार्थ अक्षरब्रह्म जो लीलास्थान जाकों व्यापि वैकुण्ठ कहत हें ताको निरूपण करत हें.

---

२६. क्षर जो सर्वप्राणी तिनतें ओर अक्षरब्रह्महुतें में अधिकहुं याहीते लोकमें तथा वेदमें पुरुषोत्तम या नामसों में प्रसिद्ध हुं.
२७. यह सब बात नित्यलीलावादमें शश्वद्रासरसोन्मत्तयंत्रगोपीकदंबकं इति बृहद्वामन पुराणादिवचननसुं स्थापन कीनीहे.
२८. पंचमस्कंधमें कह्यो हे जो मर्यादामार्गरीतसों जो भजे हे तिनकों भगवान मुक्ति देहें परंतु फलरूपभक्ति कबहु नहीं दे हें.

संस्कृत टीका

ते थकी इति. अक्षराद् अखण्डानन्दः अचलः लीलाविहाररूपः पुरुषोत्तमोदूरः यद्वा लीलाचले गोवर्द्धने विहारो यस्य. तादृशः ''यस्मात्क्षरमतीतोऽहम् अक्षरादपि चोत्तमः'' (भग.गीता १५।१८) इतिवाक्यात्. ब्रह्म इति. ब्रह्मज्ञानवतां जीवानां शङ्करादिमतानुवर्त्तिनाम्. मुक्तिमार्गीयः जीवानां च पुरुषोत्तमस्य स्वप्नेऽपि न सम्बन्धः एतत्सर्वं सिद्धान्तवाङमालाविवृतौ श्रीप्रभुचरणैः निरूपितम्. तत्प्रकाशे पुरोषत्तमचरणैः स्फुटतया प्रकाशितम्. तथाहि. ब्रह्मात्मैकज्ञानम् इति. ब्रह्मणः स्वात्मनश्च तादात्म्यरूपैक्यज्ञानम्. सर्वज्ञानम् इति प्रपञ्चितम्. एतावताऽपि इति. स्वात्मनः प्रपञ्चस्य ब्रह्मात्मकत्वज्ञानेनाऽपि पुरुषोत्तमसम्बन्धस्य दूरत्वम् इति दूरत्वन्तु स्वप्नेऽपि पुरुषोत्तम-सम्बन्धाभावरूपम्. किञ्च. अतएव इत्यादिः. तथाच. यद्यक्षराहं ग्रहोपासनातः सर्वब्रह्म इति उपासनातश्च. भक्तेः तन्मार्गीयोपासनायाः. स्वविषयिकायाः आधिक्यम् आह भगवान्. 'मय्यावेश्यमनः''इति आरभ्य स्वोपासकस्य युक्ततमत्वम् अक्षरोपासकस्य क्लेशः इति. ''क्लेशोधिकतरस्तेषाम् अव्यक्तासक्तचेतसाम्, अव्यक्ताहि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते'' (भ.गीता) अक्षरज्ञानमार्गयोः एकत्वाद् द्वयम् एकेन समाहितम्. क्रियाशक्तेः इन्द्रियाणां वैफल्यं

ज्ञानमार्गे. इतिनिबन्धे.

नैष्कर्म्यमप्यच्युतभाववर्जितं न शोभते ज्ञानमलं निरञ्जनम् ।
कुतः पुनः शश्वदभद्रमीश्वरे नचार्पितं कर्मयदप्यकारणम् ।।१।।
ज्ञानिनां चात्मभूतानां यथा भक्तिमतामिह (भाग.पु.१०।९।२१) इतिश्रीभागवते पद्मपुराणे च.
श्रेयःश्रुतिं भक्तिमुदस्य ते विभो क्लिश्यन्ति ये केवलबोधलब्धये ।
तेषामसौ क्लेश एव शिष्यते नान्यद्यथा स्थूलतुषावघातिनाम् ।। (भाग.पु.१०।१४।४).
एतावताऽपि पुरुषोत्तमसम्बन्धस्तु दूरतरः ।
स्कोदे, गौतमस्य ऋषेः शापाद् ज्ञानेत्वज्ञानताङ्गते ।।
सङ्कीर्णबोधा ये देवाः ब्रह्मरुद्रपुरःसरा इति. कुशला ब्रह्मवार्त्तायां वृत्तिहीनाः सुरागिणः ।
तेऽपि ज्ञानितमानूनं पुनरायान्ति यान्ति च ।।१।।

संसारैकसुखासक्तं ब्रह्मज्ञोस्मीतिवादिनम्, ब्रह्म कर्मोभयस्रष्टं तं त्यजेदं त्यजं यथा'' इतिवसिष्ठोक्तेश्च वृहद्वासिष्ठे. ''प्रपन्नोस्म्यङ्घ्रिमूलं ते प्रपन्नाभयदं हरे, यन्माययापि विबुधा मुह्यन्ति ज्ञानकाशया'' (भाग.पु.१२।१०।२). अस्य टीकायां ज्ञानकाशया ज्ञानवत् प्रकाशमानया त्वद्भजनं विना विद्वांसोऽपि यस्य तव मायया ज्ञानिनो वयम् इति अहङ्कारेण मुह्यन्ति इति अर्थः इतिद्वादशे. ''न ज्ञानं नच वैराग्यं प्रायः श्रेयो भवेदिह'' इतिएकादशे. सर्वकर्म-फलसन्यासपूर्वकं ये स्वपराः तेषां शीघ्रं संसाराद् उद्धारः. स्वस्मिन् मनोनिवेशनादिना तेषां स्वस्मिन् निवासं कथितवान्. तदानुकल्पनेन तस्यैव आवश्यकत्वं च न वदेद् अतः तथा इति अर्थः. एतेन ज्ञानाधिको भक्तिमार्गः इतिव्युत्पादितम्. तस्मात् स्मृत्यादौ निरूपितमेव विवृण्वन्ति ब्रह्मज्ञानीत्यादिना. किञ्च ज्ञानीतु आत्मैव मे मतम् इति अत्र न केवलम् 'अहं ब्रह्मास्मि' इत्याकारकः ज्ञानी बोध्यते. किन्तु ज्ञानीभक्तो बोध्यते. भक्तप्रसङ्गात्. एतत् सर्वं 'चतुर्विधाभजन्ते माम्''इति अस्य व्याख्याने गोस्वामि-व्रजरायचरणैः प्रप्रञ्चितं ततो अवधेयम्, किञ्च, निषेधस्तु तस्यैव. पूर्वोक्तवाक्यैः अहङ्कारविरुद्धाचरणे नच युक्तत्वात्. प्रसङ्गाद् इदं विचार्यते. 'ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि'. 'ज्ञानाग्निनारन्धितकर्मकल्मषः'. ज्ञानीतु आत्मैव मे मतम् इति अत्र एवं ज्ञेयम्. अत्रतु ज्ञानीभक्तः सिद्धः. ये सर्ववेदविप्लववादिमतीयाः ते एतद्वाक्यद्वयेन ज्ञानाग्निना सर्वकर्म्मणां नाशं वदन्ति. तद्गृहिलतयामृषैव. कृतः तेषां मते 'अहं ब्रह्मास्मि' इत्याकारकं यद्ज्ञानं तद् अहङ्कारयुक्तं तत् पूर्वोक्तवाक्येषु निन्दितत्वाद् अतएव अशुद्धम्. अहङ्कारसंवलितत्वेन अग्न्यभावात्. अग्निम् अन्तरा दाहो न सम्भवति. मायातु अहङ्कारयुक्तस्यैव अपहरणं करोति. स्वजन्यत्वात्. तेन अहङकारयुक्तं ज्ञानं

मायागुणजन्यम्. अतएव मुह्यन्ति ज्ञानकाशया. एतद् टीकायां श्रीधरेण त्वद्भजनं विना विद्वांसोऽपि यस्य तव मायया ज्ञानिनो वयम् इति अहङ्कारेण मुह्यन्ति. माययाऽपहृतज्ञाना. ‘‘‘‘ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवतीहि सा, बलादाकृष्यमोहाय महामाया प्रयच्छति’’. एतेन एतादृशं ज्ञानं भगवद्विमुखानां भवति. किञ्च भवदभिमतज्ञाने एतानि वाक्यानि विरुद्धानि. कुतः भक्तप्रसङ्गात्. वाक्येषु ज्ञानीभक्तो निरूप्यते. भवन्मते भक्तेः उपासना परतया जघन्यत्वेन निरूपणाद् अतः वाक्यानां सिद्धान्तस्य च विरोधः. किञ्च अग्न्यभावेनाऽपि विरुद्धम्. एवं सर्वत्र एतज्जातीयवाक्येषु ज्ञेयम्. एवं भवन्मते ये ये सिद्धान्ताः ते ते सर्वे वेदाः श्रीकृष्णवाक्यानि. व्याससूत्राणि. समाधिभाषा. एतत् चतुष्टयाद् विरुद्धाः विरुद्धोदाहरणन्तु आकरादिषु प्रतिपादितं प्राचीनैः. अत्रतु दिङ्मात्रं प्रदर्शितं ग्रन्थविस्तरभयात्. भक्तानां ज्ञानं तद् अपोहनं च भगवज्जन्यम्. ‘‘मत्तस्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च’’इतिवाक्यात्. यदि एवं चेद् तर्हि पूर्वोक्तम् ‘अहं ब्रह्मास्मि’. ‘ब्रह्माहम्’इत्यादिश्रुतीनां वाक्यत्रयाणां च को अर्थः इति चेद् उच्चते. पूर्वोक्तवाक्यद्वयेषु ज्ञानशब्दाग्निशब्दद्वयसमभिव्याहारबलेन पुनः ज्ञाने भगवत्स्वरूपज्ञाने विरहरूपो अग्निः ज्ञानाग्निः इति विग्रहेण एवं ज्ञेयम्. तावद्दशलीलायुक्तं सच्चिदानन्दविग्रहं परमानन्दं पूर्णं ब्रह्मसंयोगविप्रयोगात्मक-शृङगार-रसात्मकं कृष्णं स्वरूपं तस्य संयोगात्मकस्वरूपज्ञानं जातं पुनः च तद्वियोगे संयोगरसात्मक-स्वरूपज्ञानसंवलितः अयोगोलक-वह्निवद् विरहएव अग्निः भवति इत्याकारको ज्ञानाग्निः तेन अग्निना सर्वाणि कर्माणि पुण्य-पापरूपाणि भस्मसाद्भवन्ति. अतएव ‘‘दुःसहप्रेष्टविरहतीव्रतापधुताशुभाः, ध्यानप्राप्ताच्युताश्लेषनिर्वृत्त्या क्षीणमङ्गलाः, तमेव परमात्मानं जारबुद्ध्याऽपि सङ्गताः, जहुर्गुणमयं देहं सद्यः प्रक्षीणबन्धनाः’’ (भाग.पु.१०।२९।१०-११). किञ्च ‘‘नो चेद् वयं विरहजाग्न्युपयुक्तदेहा ध्यानेन याम पदयोः पदवीं सखे ते’’ (भाग.पु.१०।२९।३५) इतिश्रीशुकेन उक्तम्. एवम् एतादृशो यो ज्ञानाग्निमान् सएव आत्मास्वरूपं मनः यस्य अन्तः करणं वा. नतु अहङ्कारयुक्तः ज्ञानी भगवदात्मा. पूर्वोक्तवाक्येषु निन्दिततत्वात्. किञ्च. ‘सर्वं ज्ञानल्पवेनैव’ इति अत्र संयोगरसात्मक-स्वरूपज्ञानप्लवेनैव व्रजिनं संसारवासना सहितं तरिष्यसि. भगवद्वियोगे ‘‘यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुनः’’ इति (भ.गीता ४।३७). अतएव ज्ञानीभक्तः ज्ञानेन असौ बिभर्त्ति माम् इत्यादिवाक्यैः असौ मां गूढं परं ब्रह्म मनुष्यलिङ्गं बिभर्त्ति. धारणेन साकारं ब्रह्मसिद्धम्. भवन्मते अनामरूपः चिन्मात्रं तद्ध्यानविषयो न भवति. तेन इदं वाक्यं भवन्मते विरुद्धम्. पुनः ‘बहवो ज्ञान तपसा’ इतिवाक्ये ‘तप सन्तापे’ इतिधात्वर्थेन विरहाग्निः तपः. ज्ञानं तत्पूर्वोक्तं तेन अग्निना ‘पूतामद्भावमागताः’. रतिः देवादिविषयाभावः इति अभिधीयते. भवन्मते भगवद्विषयिणी रतिः नास्ति. एतद्वाक्यमपि विरुद्धम्. अतएव वेदेऽपि ‘अतप्ततनुर्नतदामोऽश्नुते’. अनया माध्वाः रामानुजाः तप्तमुद्रा धारणं निरूपयन्ति. शाङ्कराः ‘‘ग्रीष्मे तप्येत पञ्चाग्नीन् वर्षा स्वासारषाड् जले, आकण्ठमग्नः शिशिरे’’ (भाग.पु.११।१८।४). इत्यादिः अनेकानि तपांसि निरूपयन्ति. परन्तु केवलं तप्तमुद्रा तपश्चर्यामात्रेण वेणुभिः न भवेद् यतिः इतिवद् न मोक्षसिद्धिः भवति. मोक्षोनाम. मुक्तिः हित्वा अन्यथारूपं स्वरूपेण व्यवस्थितिः इति ज्ञानलीलास्कन्धवाक्याद् ‘‘अहन्ता-ममता-नाशे सर्वथा निरहङकृतौ, स्वरूपस्थो यदा जीवः कृतार्थः सः निगद्यते’’ इति

शुद्धाद्वैतपुष्टिमार्गप्रवर्तक-चतुराश्रमाचार्यवाक्यात् च अन्यथारूपं अविद्यासम्बन्धरूपं हित्वा अहं विस्फुलङ्गन्यायेन ब्रह्मणो अंशः दासो अस्मि इत्याकारक-व्यवस्थितिरेव मुक्तिः साच पूर्वोक्तप्रकारेण न भवति. तप्तमुद्रादिषु तादृशसामर्थ्याभावात्, तस्माद्, यस्य भगवद्वियोग-विरहाग्निना तनुः न तप्ता तस्य एतद्वाक्योक्ता मुक्तिः न भवति. विरहाग्नावेव एतादृशसामर्थ्यावधारणात्. पूर्वोक्तदशमस्कन्धवाक्येन. ‘तपसा ब्रह्म विजिज्ञासितव्यः’ यथा आमघटेन जलाहरण-पाकादिकार्यं न भवति. अग्निपक्वघटेन जलाहरणपाकादि सर्वं कार्यं भवति बहुकालं स्थितिरपि भवति. अर्थक्रियाकारित्वात् पक्वापक्वयोगी यथा. अतएव ‘नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते’ (भ.गीता ४।३८). तत्स्वयं योगो नाम भगवत्संयोगः तस्य संसर्वात्मभावरूपासिद्धिः स्वल्पकालेन आत्मनि विन्दति. पुनः सम्यक्प्रकारेण यतेन्द्रियः श्रद्धावान् मत्परः सन् पूर्वोक्तप्रकारकं ज्ञानं लभते. पुनः पूर्वोक्तज्ञानं लब्ध्वा परां सर्वोत्कृष्टां भगवल्लीलारूपां शातिमचिरेणाधिगच्छति. ‘ज्ञानी चेद्भजते कृष्णं तस्माद् नास्त्यधिकः परः’ सर्वनिर्णयनिबन्धे. एतत्सर्वं सर्ववेदविप्लववादिमते नास्ति. तस्मात् कलियुगे न्यासिनोह्यर्थलोलुपाः इति आश्रयलीलास्कन्धे निरूपणात् तेन एतानि वाक्यानि विरुद्धानि भवन्ति किञ्च श्रुत्यर्थस्तु. अग्नेः यथा क्षुद्राः विस्फुलङ्गाः व्युच्चरन्ति तथात्मनो यथासुदीप्तात् पावकाद्विस्फुलङ्गाः इतिश्रुत्युक्तः विस्फुलङ्गरूपेण अहम् एकस्यैव ममांशस्य जीवस्यैव महामते. ‘ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः’ (भ.गीता.१५।७). ‘‘अंशोनानाव्यपदेशाद्’’ इत्यादिवाक्येभ्यः ब्रह्मणो अंशो अस्मि इत्याकारकस्वरूपेण ‘अहं ब्रह्मास्मि’ इतिश्रुतिः वदति नतु घटाकाशः मठाकाशवद् ऐक्येन. एवम् एतज्जातीयसर्वश्रुतिषु अयमेव अर्थो ज्ञेयः. एतत्स्थले वादिनो बहुधा जगुः ते सर्वे आकरादिग्रन्थेभ्यः प्रत्युक्ताः अभूवन्. भविष्यन्ति च. श्रुत्यर्थस्तु श्रुत्यनुरोधेन कर्तव्यः न लक्षणया. भवता कलियुगेन हृतबुद्धीनाम् अज्ञानिनां जीवानां प्रतारणार्थं लक्षणया भवन्मतीयं वेदान्तशास्त्रं कृतम्. किञ्च. लक्षणायाः शक्यसम्बन्धत्वात्. तस्य च द्विनिष्ठत्वाद् ब्रह्मणि सत्ये वांताशित्वापातः. लक्षणाऽपि आस्ताम्. परं मुख्यार्थबाधे लक्षणा इति न्यायशास्त्रस्य अनिवार्यनियमः. भवद्भिः वेदार्थानवबोधात्. एकवाक्यम् अङ्गीकृत्य प्रमाणचतुष्टयवाक्येषु विरुद्धांशं योजयित्वा मुख्यार्थबाधाभावे लक्षणाकृता तेन न्यायशास्त्रादपि विरुद्धं कृतम्. किञ्च भवन्मते. अनाम. अनामरूपश्चिन्मात्रेति श्रुति-वाक्ययोः स्वबुध्या परिकल्पितार्थेन ब्रह्मणः अनामरूपः चिन्मात्रं निरूपितम्. तत् श्रुतितः विरुद्धम्. कुतः ‘यदेकमव्यक्तमनन्तरूपम्’. ‘निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि ते स्थिताः’’, ‘‘ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्वः ततसुतं पश्यति निष्कलं ध्यायमानः’’ इतिश्रुतेः. पूर्वोक्तसंयोगरसात्मकः भगवत्स्वरूपज्ञानप्रसादेन विशेषेण शुद्धसत्वः जीवः तदनन्तरं स्तुतं स्तुतः सन् पश्चाध्यायमानः निष्कलं शुद्धसच्चिदानन्दरूपं परब्रह्म पुरुषोत्तमानन्दरूपं पश्यति. तावद् गुरूपदिष्टेन भवगवत्स्वरूपज्ञानं जायते. पश्चात् स्नेहो भवति. तद्वशेन कृपयाविशुद्धसत्वो भवति. पश्चाद्भगवान् तद्वशी भवति. पश्चात् सः स्तुतिं करोति. स्तुतः सन् हरिमूर्तिः सदाध्येयेति सर्वाचार्यशिरोमणिवाक्याद् ध्यानं करोति. निरन्तरध्यानेन हृदये स्थिरो भवति. पश्चात् दृष्टिविषयो भवति, अतएव, ‘आत्मावारे यः श्रोतव्यो मन्तव्यो द्रष्टव्यो निदिध्यासितव्यः’, ‘‘कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षत्’’. ‘‘शान्तो दान्त उपरतस्तितिक्षु आत्मन्येव आत्मानं पश्येद्’’ इत्याद्यनेकश्रुत्या भवत्सिद्धान्तो विरुद्धः. ‘‘सत्यं ज्ञानमनन्तब्रह्म’’. ‘सत्यं विज्ञानमानन्दं

ब्रह्म'. ''आनन्दमात्रकरपादमुखोदरादिः''. ''आनन्दमयोभ्यासाद्'' इत्यादिः अनेकश्रुतिस्मृतिन्यायेभ्यः. एतद्वाक्येषु त्रितयम् आन्नदमयस्वरूपं सिता पुत्तलिकावद् निरूपितम्. पूर्वोक्तवाक्येषु केवलं चिन्मात्रम् उक्तम् इति विरुद्धम्. अपरं च पूर्वोक्तवाक्ये अव्याद् इति अनेन रक्षाकरणरूपो धर्मः उक्तः. तेन ब्रह्मणि धर्मश्च आयाति. तेन सधर्मकं भवेत्. एतदपि विरुद्धम्. पुनः 'जीवेशावाभासेन करोति' इतिश्रुतौ कर्तृत्वधर्मम् आयाति इत्यादि अनेकदूषणग्रस्तो भवन्मतीयसिद्धान्तः तेन अन्ते शून्यवादापतिश्च. किञ्च वेदमपि कतकरेणुवद् अप्रयोजकम्. पारमार्थिके अलीकं च वदन्ति. तेन ते प्रच्छन्नबौद्धाः ज्ञेयाः. शास्त्राडम्बरस्तु अल्पबुद्धीनां प्रतारणार्थम्. अतएव. ''अयमेव महामोहोहि इदमेव प्रतारणम्, यत्कृष्णं न भजेत्प्राज्ञः शास्त्राभ्यासरतः कृती'' एतद्विस्तारो भाष्य-तत्प्रकाशः. प्रदीप-द्वितीयप्रकाशः विद्वन्मण्डने तटटीकासुवर्णसूत्रे शास्त्रार्थनिबन्धः तदावरणभङ्गः भक्तिहंसः, भक्तिहेतुः तटटीका. प्रहस्तवाद गोस्वामि-पुरुषोत्तमचरणकृतः द्विपञ्चाशद्बादग्रन्थः सेवाकौमुदी सटीक-षोडशग्रन्थेषु बहुतरं प्रतिपादितम्. विशेषजिज्ञासायां ततो अवधेयम्. अतएव कर्मब्रह्मोभयश्लष्टं तं त्यजेदं त्यजं यथा इति भवन्मतीयग्रन्थवाक्येन.

उपेक्ष्यं भगवद्भक्तैः श्रुतिस्मृतिविरोधतः ।
कलौ तदादरोमुख्यः फलं वैमुख्यतस्तमः ।।
योन्यथासन्तमात्मानम् अन्यथाप्रतिपद्यते ।
किं तेन न कृतं पापं चौरेणात्मापहारिणा ।।

'असन्नेव स भवति' 'असद्ब्रह्मेति वेद चेत्'. एतेन यः श्रुत्युक्तरहितः केवललक्षणया ब्रह्मस्वरूपं वेद चेत् सः असन् अहन्ता-ममतात्मके संसारे पतति 'आत्मापहारि चौरत्वात्'. इतिश्रुतेः. ''येषां न तुष्टो भगवान् यज्ञलिङ्गो जनार्दनः, तेषां श्रमो ह्यपार्थाय यदात्मा नाहृतः स्वयम्'' (भाग.पु.३।१३।१३). इतितृतीयस्कन्धे. ननु भवता यथा अस्मन्मतीयाहङ्कारयुक्तः ज्ञानत्वेन अस्मद् उपरि दोषो निरूपितः. तथा भवन्मतेऽपि 'कृष्णोऽहं पश्यतगतिम्' इतिवाक्योक्तः अहङ्कारयुक्तज्ञानम् अस्ति. अतः तथात्वम् इति चेद् उच्यते. तावत् तासां जीवत्वं नास्ति. कुतः. 'तस्मान्नभिन्ना एतास्तु ताभिः भिन्नो न वै प्रभुः'.

''न स्त्रियो व्रजसुन्दर्यः पुत्रताः श्रुतयः किल, नाहं शिवश्च शेषश्च श्रीश्चताभिः समाः क्वचित्''. तदात्मिकाः. अतएव ''नात्मागाराणि सस्मरुः'' (भाग.पु.१०।३०।४४). भ्रमरगीतेऽपि एवम्. 'गोप्यो गावः ऋचः' इतिकृष्णोपनिषदि. तेन ताः भगवद्रूपाः. न जीवरूपाः अहङ्कारयुक्तज्ञानं जीवे दोषरूपम्, सर्वत्र निन्दितत्वात्. भवन्मतीयाहङ्कारः कृत्रिमः जीवकर्तृकत्वात्. तासाम् अहङ्कारः नैसर्गिकः निर्दोषश्च पूर्वोक्तवाक्येभ्यः लीलार्थं ताः भगवता स्व-स्वरूपाद् भिन्नाः कृताः. 'सः एकाकी न रमते' 'स द्वितीयमैच्छत्'. अतएव वाराहपुराणे मथुरामाहात्म्ये. 'अन्यैव काचित् सा सृष्टिर्विधातुर्व्यतिरेकिणी' इतिवाराहवाक्यम्. 'गोलोकादागता गोप्यश्चायोनि सम्भवाश्चता' इतिकृष्णजन्मखण्डे षडिवंशत्यधिकशतके अध्याये. पुराणानां वेदोपबृंहणत्वाच्च. ''ऋग्यजुः सामाथर्वाख्या वेदाश्चत्वार

उद्धृताः, इतिहासपुराणानि पञ्चमो वेद उच्यते'' (भाग.पु.१।४।२०). ''देहेन्द्रियासुहीनानां वैकुण्ठपुरवासिनाम्'' (भाग.पु.७।१). वसन्ति यत्र पुरुषाः सर्वे वैकुण्ठमूर्त्तयः' (भाग.पु.३।१५।१४). इति कैमुतिकन्यायेन अत्र ज्ञेयम्. किञ्च 'एकोऽहं बहु स्याम्' इति अहङ्कारः यथा ब्रह्मणि न दोषरूपः कुतः ब्रह्मणः स्वाभाविकीज्ञानबलक्रियाच. तथा तासां कृष्णो अहं इति न दोषरूपः भगवद्रूपत्वात्. किञ्च यदि नामरूपं च न स्यात् तर्हि 'ब्रह्म' इति परमात्मा इति भगवान् इति शब्द्यतेतिव्यवहारो न स्यात्. स्यात् चेत् तर्हि किं खपुष्पशब्दवत् परप्रतारणार्थं 'ब्रह्म' 'ब्रह्म' इति वदन्ति. वदन्ति चेत् तर्हि वाच्यं किञ्चिन्मात्रं वाच्यते तर्हि रूपं भवेत् तदा 'वांताशित्वापातश्च' तस्मात्. महद्व्याख्यानकौशलम्. चरमसिद्धान्ते शून्यवादापत्तिश्च. तेन वृश्चिकभिया पलायनस्य विषम् आशीमुखे निपातः. किञ्च ब्रह्मणः अनामरूपतया वेदेन प्रतिपादनं क्रियते. तस्य च भवन्मते उत्पत्तिमत्वेन अनित्यत्वम्. तेन ब्रह्मणः प्रतिपादनं करोषि. तदा वस्तुसिद्धौ वन्ध्यासुतवाक्यवत् प्रामाण्यं स्याद् यदि व्यावहारिकीं सत्तां ब्रूषे सा नास्ति. प्रमाणाभावात्. यदि सत्-सत् पश्यति पश्यति प्राणावै सत्यं तेषां एषसत्येमत्यादिशब्दैः तां ब्रूषे तदा तेऽपि भवन् मते मृगतृष्णा-पयोवद् नित्याः तेन भवत्सिद्धान्तं भगवतः नवमावतारस्य कार्यम्. ''न दानं न तपो नेज्या न शौचं न व्रतानि च, प्रीयतेऽमलया भक्त्या हरिरन्यद् विडम्बनम्'' (भाग.पु.७।७।५२) इतिप्रह्लादवाक्यं तेन. न दानं न तपो न इज्या इति अनेन मर्यादामार्गीयजीवानां निषेधः. अन्यद् विडम्बनम् इति अनेन शङ्करमतानुवर्त्तिनां निषेधः. अमलया भक्त्या इति अनेन पुष्टिभक्त्या भगवत्प्राप्तिः. ''परमोविष्णुरेवैकोत्तत् ज्ञानं परमं मतम्, शास्त्राणां निर्णयस्त्वेष तदन्यन्मोहनाय हि''. इतिस्कन्दपुराणे महादेवेन स्कन्दं प्रति उक्तम्. अतः औपचारिकं ब्रह्मज्ञानं शाङ्करे. मायावादमसच्छास्त्रं प्रच्छन्नं बौद्ध मुच्यते ''मयैव कथितं देवि कलौ ब्राह्मणरूपिणा, अपार्थं श्रुतिवाक्यानां दर्शयन् लोक गर्हितम्, परेश जीवयोरैक्यं मयात्र प्रतिपाद्यते, ब्रह्मणश्च परं रूपं निर्गुणं वक्ष्यते मया, सर्वस्य जगतोप्यत्र मोहनार्थं कलौ युगे''. इत्यादिवाक्यैः निष्प्रत्यूहं सिद्धम्. अन्यथा 'सोश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चिता' इतिश्रुत्युक्तं फलं भवेदेव, ''यथाग्निना हेममलं जहाति ध्मातं पुनः स्वं भजते स्वरूपम्, आत्माच कर्मानुशयं विधूय मद्भक्तियोगेन भजत्यथो माम्'' ''यथा यथाऽऽत्मा परिमृज्यतेऽसौ मत्पुण्यगाथाश्रवणाभिधानैः, तथा तथा पश्यति वस्तु सूक्ष्मं चक्षुर्यथैवाञ्जनसम्प्रयुक्तम्'' (भाग.पु.११।१४।२५-२६) इतिएकादशे. टीकायां श्रीधरेणाऽपि. अपिच भक्त्यैव आत्मशुद्धिः न अन्यथा इति सदृष्टान्तम् आह. यथेति. यथा अग्निना ध्मातं तापितमेव हेमसुवर्णं अन्तर्मलं जहाति. न क्षालनादिभिः स्वं निजं रूपं च भजते. कर्मानुशयं कर्मवासनाम्. मां भजते मद्रूपताम् आपद्यते इति अनेन व्रजस्त्रीसदृश-विरहाग्निनैव तादृशं भवति न ज्ञानादिसाधनैः. भृङ्गिभयते भृङ्ग होत वह किट माहाजडा कृष्णप्रेम ते कृष्ण होत यह नाहि अचरजबड. पेशस्कारीवकीटकम्. ननु ''ब्रह्मविदाप्नोति परं'' 'तमेव विदित्वाति मृत्युमेति' इत्यादिश्रुतिभ्यो ज्ञानादेव अविद्यानिवृत्त्या तत्प्राप्तिः अवगम्यते किं भक्तियोगेन इति चेद् उच्यते यथा यथेति. आत्मा चित्तं परिमृज्यते शोध्यते मत्पुण्यगाथानां श्रवणैः अभिधानैश्च भक्तेरेव आन्तरव्यापारोज्ञानं न पृथग् इति अर्थः. ''ज्ञाने प्रयासमुदपास्य नमन्तएव जीवन्ति सन्मुखरितां भवदीयवार्त्ताम्, स्थाने स्थिताः श्रुतिगतां तनुवाङ्मनोभिर्ये

प्रायशोऽजित जितोऽप्यसि तैस्त्रिलोक्याम्'' (भाग.पु.१०।१४।३) इतिदशमस्कन्धे. श्रीधरेणाऽपि किं ज्ञानश्रमेण इति अर्थः. किञ्च ''निगमकल्पतरोर्गलितं फलम्'' इतिवाक्येन अन्यत् शुकवाक्यानुरोधैश्च ''ब्रह्मविदाप्नोति''इतिश्रुतिः शुद्धपुष्टिमार्गीयसिद्धान्तप्रतिपादिका. न ज्ञानप्रतिपादिका. ''पादारविन्दं न भजत्यसन्मतिः'' (भाग.पु.१०।५१।४७) इति मुचुकुन्दस्तुतौ. किञ्च. मुक्तिमार्गशब्देन मोक्षप्रापकाणि यानि साधनानि. ''ग्रीष्मे तप्येत पञ्चाग्नीन् वर्षास्वासारषाड् जले, आकण्ठमग्नः शिशिर उदके स्थंडिलेशय'' (भाग.पु.११।१८।४). इत्यादिवाक्योक्ते मुक्तिमार्गीयो ज्ञानी च तयोमिथःस्वप्नेऽपि न सम्बन्धः ।।७।।

८ ज्या वृंदावन आदिअचल

ज्या वृंदावन आदिअचल शशीशरदरेणु बहु वेश ।।
वनदेवी पदकुमकुम मुख सुख परसे रंग विशेष ।।८।।

जहां व्यापिवैकुण्ठके विषे **वृंदावन**ऐसे नामको बन हे ताके विषें **शशी** भगवन्मनोरूपचंद्र सो केसो हे **आदि** लोकप्रसिद्धचंद्रको कारण हे केसें जो या चंद्रको भगवन्मनोरूपचंद्रतें आविर्भाव हे. सो श्रीमद्भागवतमें. चं[२९]द्रोमनोयस्यद्दगर्कआत्मा. इत्यादि स्थलके विषे निरूपण कियो हे. ओर वे[३०]दमें हु ऐसें हि निरूपण कियो हे. याहीतें आदि यह विशेषण कह्यो हे. ओर दे[३१]हलीदीपकन्यायसो आदि यह वृंदावनको हुं विशेषण हे क्यों जो वृंदावन हु अनादिसिद्ध भगवद्रुप हे. ओर वह चंद्र केसो हे. **अचल** क्षय वृद्धिभाव ओर उदयास्तमभाव तातें रहित हे ओर वाको गमन मध्याकाशपर्यंत ही हे तहांतें आगे नही हें यह सब बात पंचाध्यायीके **श्रीसुबोधिनीजीमें** लिखी हे. ऐसो चंद्र हे तातें **शरदरेणुबहुवेश** शरदऋतुकी रात्री ये बोहोत सुंदर हें वेश ऐसो गुर्जरभाषामें सुंदरको नाम हे अब बहुवेश यह शरदरात्रिको विशेषण कह्यो तासों यह सुचन कियो जो लौकिकमें तो शरदऋतु द्विमासात्मक हे. ताहुमे पौर्णिमाकी मध्यरात्री. सोहु कलंकीचंद्रकी कदाचित् बादररहित चांदनीतें कछु सुंदर होत हे. ओर वृंदावनमें तो सर्वदा यह सब पदार्थ निर्दोष सर्वदा समान हे याहीतें बहूवेश ऐसें कह्यो. अब वृंदावनके विषे शरदऋतुको वर्णन कियो सो उ[३२]पलक्षणरीतसों कियो हे. यातें यह सूचन कियो जो सब ऋतु वृंदावनमें शोभा देत हें. यही

बृहद्वामनपुराणमें य[३३]त्रवृंदावनंनामवनंकामदुधैर्द्रुमैः. मनोरमनिकुंजाढयंसर्वर्तुरससंयुतम्. या श्लोकमें निरूपण कियो हे. अब ऐसो जो वृंदावन ताके विषें प्रभु फिरत हें तातें आपके पद जे चरणारविंद तिनको प्रसादी **कुमकुम** जो केसर सो तृणादिकनकेजेसो लागत हे ताके दर्शनसों कामतृप्त होयकें **वनदेवी** जो वनस्थ पुलिंदीप्रभृति भक्त हें ते अपने मुखहृदयकों काम तापकी शांतिके अर्थ लगावत हें तातें वाको जो सुखरूप स्पर्श ताते **रंग विशेष** उनकी शोभा अधिक होत हे. और. **सरसे रंग विशेष** ऐसो हुं पाठ हे ताको अर्थ यह जो वनदेवीके मुखको वर्ण हि केसर जेसो हे. तामे फेर भगवत्प्रसादी केसर लगावत हें तातें ओर हृदयकों हुं लगावत हें तातें. सरसे रंगविशेष. अपने अंगको. जो स्वाभाविक रंग हे सो विशेष सरसे बहोत सरस होत हे. येही अभिप्राय श्रीमद्भागवतमें. पू[३४]र्णाःपुलिंद्यउरुगाय पदाब्जराग श्रीकुंकुमे नदयितास्तनमंडितेन. या श्लोकमें निरूपण कियो हे ।।८।।

२९. द्वितीयस्कंधनमें चंद्रसो प्रभुनको मान हे सूर्य सो नेत्र हे ऐसे कह्यो हे.

३०. पुरुषसूक्तादिकनमें.

३१. ऐसें देहरीपें दीवा धर्योहोय तो भीतर तथा बाहिर दोऊ जग्गे प्रकाश करे तेसे एकही आदिपद होउ जग्गे सम्बन्ध पावे हे.

३२. जेसे कौवाके पाससुं दहीकी रक्षा करिवेको कह्यो होय तब बिलावप्रभृति सबनतें दहीकी रक्षा करी चाहिये तेसेंही थोडोसो कहेते वाकेसंगके सब पदार्थको ज्ञान होय हे सो उपलक्षणरीतसों कह्यो जाय.

३३. भगवद्धाममें वृंदावन यानामको वन हे जो इच्छानुसार फलपुष्पादिक जिनमें सिद्ध होय ऐसे वृक्षनतें युक्त हे ओर जामे अतिसुंदर अनेक निकुंज हे ओर सब ॠतुनको आनंद ओर श्रृंगारादिरस जहां सदा रहत हें.

३४. या श्लोकको अर्थ प्रायः सघरो टीकामें ही आय गयो हे.

संस्कृत टीका

अतः परं वृन्दावनादि-लीलास्थानस्वरूपम् आह. ‘‘यत्र वृन्दावनं नामवनं कामदुधैर्द्रुमैः, मनोरमं निकुञ्जाड्यं सवर्तुसुखसंयुतम्, यत्र गोवर्द्धनो

नामसुनिर्झुरदरीयुतः, रत्नधातुमयः श्रीमान् सुपक्षिगण सङ्कुलः, यत्र निर्मलपानीया कालिन्दिसरितां वरा, रत्नबद्धोभयतटी हंसपद्मालि सङ्कुला, यदादिवृन्दावनं अधुना तस्य परा सोलीतिनाम, वृन्दायाः वनं वृन्दावनम्. वृन्दा जलं धरस्य स्त्री तस्याः वनम् इति अनेन तस्मिन् वने स्त्रीणामेव प्राधान्यम्. 'वृन्दाभक्तिः प्रियाशुद्धिः सर्वजन्तुषु शाश्वती'ति तापिन्याम्. याः शरत्सम्बन्धिन्यो रात्रयः बहुवेषशब्देन तदनुकूल-तदङ्गभूत-सर्वसामग्रीयुक्ताः एतादृश्यः 'मयेमा रंस्यथ क्षपा'इति उक्ताः. तासु रात्रिषु यदा भगवतः स्वमनसि रमणेच्छा जाता तदा अखण्डचन्द्रोदयो अभूद् एतत्सर्वं ''भगवानपि ता रात्रीः शरदोत्फुल्लमल्लिकाः, वीक्ष्य रन्तुं मनश्चक्रे योगमायामुपाऽश्रितः'' इति ''तदोडुराजः ककुभः करैर्मुखं'' (भाग.पु.१०।२९।१-२) इति च श्लोकद्वयसुबोधिन्यां श्रीभागवतगूढार्थप्रकाशनपरायणैः स्पष्टतया निरूपितम्. अत्र विस्तरभयाद् न उक्तम्. यत्र वनसम्बन्धिन्यो या देव्यतावनदेव्यः क्रीडायोग्याः श्रुतिरूपाव्रजस्त्रियः. ''न स्त्रियोव्रजसुन्दर्यः पुत्रताः श्रुतयः किल, नाहं शिवश्च शेषश्च श्रीश्चताभिः समाः क्वचिद्'' इतिबृहद्वामने अखिलभृग्वादीन् प्रति स्वयं भूवाक्यात्. ''तस्मान्नभिन्ना एतास्तु ताभिर्भिन्नो न वै प्रभुः'' इतितापिनीयश्रुतिः. तासां भगवत्पदसम्बन्धि यत् कुङ्कुमं तेन मण्डितानि मुखानि यासां तत्स्पर्शसुखेन विशेषतया पूर्वस्माद् अधिकतर-रञ्जिताविचित्रशोभायुक्ता जाताः यद्वा वनदेव्यःपुलिन्द्यस्ताः भगवतः पादतलसम्बन्धि-यत्कुङ्कुमं तस्य स्वमुखे लेपनं कृत्वा पूर्णाः जाताः. ''पूर्णाः पुलिन्द्य उरुगायपदाब्जरागः'' (भाग.पु.१०।२१।१७) इतिवाक्यात् ।।८।।

९ ज्यांसरिता चामीकर

ज्यांसरिता चामीकर मणिगण उभयबद्धसोपान ।
कमल कुमुद नाना अलिसुंदर मधुर करे त्यांहां गान ।।९।।

जहां वृंदावनके समीप. **सरिता** जो नदी श्रीयमुनाजी सो केसे हें **चामीकर** जो सुवर्ण. ओर **मणिगण** जो नानाप्रकारके मणीनके समूह तिनकरिके. **उभय** सो दोई आडी **बद्ध** सो बांधे हें. **सोपान** सो सीढी जीनकी. ऐसे श्रीयमुनाजी तिनके विषें. **कमल** जो सूर्यविकासी कमल ओर **कुमुद** जो चंद्रविकासी

कमल. **नाना** या शब्दसों ओर हु अनेक जातिके कमल हें यह सूचन कियो. तिनके विषे **अली** जे भ्रमर ते मधुर लीलोपयोगी मिष्ट गान करत हें ओर. **मधुपकरेत्याहांगान**ऐसो हुं पाठ हे ता पक्षमें जिन श्रीयमुनाजीमें नानाप्रकारके कलमनकी **अली** सो पंक्ति सुंदर दीसत हें **त्याहां** तिन कमल पंक्तिनमें मधुप सों मकरंद पान करीकें मत्तभये ऐसे जो भ्रमर ते गान करत हें. अब भ्रमरको झंकार नहीं कह्यो गान कह्यो तासों यह सूचन कियो जो लौकिक भ्रमर तो केवल अव्यक्त शब्द करत हें. ओर यह तो भगवद्यशः सहित मिष्ट शब्द करत हें तातें गान ऐसे कह्यो हें. ओर कमलके विषे भ्रमरको निरूपण कियो तातें यह सूचन कियो जो सर्वदा सर्व जातिके कमल विकसित रहत हें नहीं तो भ्रमर विनमें गुंजारव करिसकें नहीं. ओर उहां सदा विकास रहे तामें तो कछु आश्चर्य नहीं क्यों जो प्रभूनके अंश जो सूर्यचंद्र तिनके दूरसों दर्शनमात्रतें सब जातिके कमल विकास पावत हें. तब प्रभूनको सन्निधान जहां हे तहां या बातको कहा आश्चर्य. ऐसें ही बृहद्वामनपुराणमें. य[३५]त्रनिर्मलपानीयाकालिंदीसरितावरा. रत्नबद्धोभयतटीहंसपद्मादिसंकुला. या श्लोकमें श्रीयमुनाजीको वर्णन कियो हे. ओर गोपालदासजीने श्रीयमुनाजीको नाम कह्यो हे. ताको संदेह या श्लोकमें नामनिरूपण कियो तासों निवृत्त होत हे. ओर वृंदावनके समीप ओर नदीकी संभावना हु नही हे ।।९।। ऐसें जलकी शोभा वर्णन करिकें अब तीरकी शोभा कहत हें.

संस्कृत टीका

यत्र सरित् यमुना कीदृशी सा चामीकरं तन्मध्ये जटितैः मणिगणैः बद्धोभयतटसोपानसहिता पुनः कीदृशी कमलकुमुदैः युक्ता तत्सुगन्धेन मोहिताः अलिगणामधुरगानं कुर्वन्ति ।।९।।

यत्र कनकवर्ण सदृश्योमालतीमल्लिकालताः. अन्यान्यपि विविधानि कुसुमानि मकरन्दसहितानि सन्ति तत्सम्बन्धी शीतलश्च यो मन्दवायुः तत्सम्बन्धेन आह्लादो भवति ।।१०।।

---

[३५] भगवद्धाममे निर्मलजलवारे सबनदीनमें श्रेष्ठ श्रीयमुनाजीके तिनके दोईतीर रत्ननतें बंधे हें ओर तहां हंस कमल भ्रमर आदिनकी ठसी भी रहे हे.

१० कनक लता मालती

कनक लता मालती मल्लिका विविध कुसुम मकरंद ।।
शीतल पवन झकोरे लहरी परसे अति आनंद ।।१०।।

कनकलता जो पीतचमेली **मालती म**[३६] **ल्लिका** ते प्रसिद्ध ही हे. ओर हु **विविध** जो अनेक प्रकारे **कुसुम** जो पुष्प तिनको जो **मकरंद** सो है जामें ऐसे पुष्पद्रुम हे याहीतें मंद सुगंध. ओर **लहरी** जो श्रीयमुनाजीकी लहरी ताके स्पर्श करिकें **शीतल** ऐसो जो त्रिविध पवन सो झकोरत हे. तातें **अति आनंद** जहां हे. या वर्णनतें श्रीयमुनाजीके जलको हुं शीतसुंगधित्व सूचित भयो ।। ओर लतानतें तटप्रांतशोभा हू सूचित भई ।।१०।। अब दो तुकनसों श्रीगिरिराजजीको वर्णन करत हें.

३६. मोरारा.

संस्कृत टीका

११ पद्मराग मरकतमणि

पद्मराग मरकतमणि स्फाटिक श्रीगोवर्धन सोहे ।।
ब्रह्मरुद्रत्यांकोण बापड़ा श्रीहरिना मन मोहे ।।११।।

पद्मराग जो उत्तम माणिक्य. **मरकतमणि** जो इंद्रनीलमणि जाकों लीलवी कहत हें. ओर **स्फाटिक** जो स्फटिक यह तो उपलक्षणमात्र हे. ओर हु अनेक प्रकारके रत्न हें तिनकरिकें युक्त ऐसे जो **श्रीगोवर्धन** श्री जो निर्झरकंदरादिकनकी शोभा ताकरिकें युक्त जो गिरिराजजी ते शोभत हें फेर केसे हें. **ब्रह्म** जो ब्रह्म ओर **रुद्र** जो शिव वेतो कोन बापडे. बिचारे परंतु श्रीहरिश्री जो स्वामिन्यादिक तिनके हु मनके हरि हरण करिवेवारे प्रभु तिनके हु मनमें अपनी शोभातें गिरिराजजी मोहत हें. यही रीतसों बृहद्वामनपुराणमें

(३७)''यत्रगोवर्द्धनोनामसुनिर्झरदरीयुतः ।।
रत्नधातुमयः श्रीमान् सुपक्षिगणसंकुलः'' ।।

या श्लोकमें वर्णन कियो हे ।।११।।   अब श्रीगिरिराजजीके तथा वृंदावनके पक्षीनको वर्णन करत हें ।।

३७. भगवल्लोकमें गोवर्द्धन या नामके पर्वत हे जो सुंदर झरना ओर अनेक कंदरा तिनकरिकें सहित हे ओर रत्नसुवर्णमय अलौकिकशोभावान् ओर आछे पक्षी नके समूहनकरिके संकीर्ण हे.

संस्कृत टीका

यत्र पद्मरागमणिः मरकतमणिः स्फटिकमणीनां समूहरूपो असौ श्रीभिः व्रजभक्तैः सह गोवर्धनः पर्वतो राजते. एतादृशे गोवर्द्धने भगवान् स्वयं शोभां दृष्टवा मोहितः. तत्र बापडा नाम साधन-शून्ययोः दीनयोः ब्रह्म-रुद्रयोः काकया. अत्र मोहशब्देन जीववद् मोहो न. किन्तु रसानुभवार्थं वशीभवनरूपः यथानन्दाश्रु शोकाश्रु च. तदुक्तं ‘‘वशीकुर्वन्ति मां भक्त्या सत्स्त्रियः सत्पतिं यथा’’ (भाग.पु.९।४।६६) इत्यादिवद् इतिभावः. किञ्च. शृङ्गार-रसमण्डने दानलीलाप्रसङ्गे श्रीप्रभुचरणैः उक्तम्. ‘‘किं वर्णितेन बहुनासखिपेशलैः स्वैः सम्मुह्यतां रसिकतानिधिराहनाथः’’. अस्य विवरणे गोस्वामि-गोकुलोत्सवचरणैः निरूपितम्. तथाहि. तदानीं भगवता स्वामिनी वशीकरणार्थम् आविष्कृतैः अत्यन्तरङ्गधर्मैः स्वयमेव मोहितो जातः इति धर्माणां निरवधिः उत्कर्षः सूच्यते. तथाच सम्मुह्य स्वयमेव स्वकीयधर्मो अहं प्राप्यः इति अर्थः. तदुक्तम्. ‘‘विस्मापनं स्वस्य च सौभगर्द्धेः’’ (भाग.पु.३।२।१२) इत्यादिना इतिभगवत्समानधर्मत्वेन प्रसिद्धम्. अतएव उत्कृष्टरसात्मकत्वं ‘रसो वै सः’ इत्यादिश्रुत्युक्तं भगवतो निर्वहति. किञ्च. नाथेति अस्य विवरणे तथानिर्बन्धः तस्य आवश्यकः इतिभावः. इदंच ‘सुरतनाथ’इतिश्लोकविवरणे श्रीमदाचार्यचरणैः स्फुटं प्रतिपादितम् ।।११।।

१२ नाना पक्षीनी शब्दमाधुरी

नाना पक्षीनी शब्दमाधुरी शोभातणो नहि पार ।।
विविध प्रकारे जूजवा केहेता ग्रंथ थायविस्तार ।।१२।।

जहां वृंदावन गिरिराजके विषें नानाप्रकारके **पक्षी** तिनकी शब्द माधुरी ओर **शोभा** ताको पार नांही हे. याहीतें विविधप्रकार तें **जुजवा** जुदे जुदे नामपूर्वक कहे तो ग्रंथको विस्तार होय यातें यह सूचन कियो जो शोभा तो अधिक हे परंतु मेंने थोडीसी वर्णन कीनी हे. अब ऐसो वृंदावन, ऐसे श्रीयमुनाजी ओर ऐसे श्रीगिरिराजजी जाके विषे हें ऐसो जो व्यापिवैकुण्ठ ताकों गोलोक कहत हें सो ब्रह्मानंदमय हे. यह बृहद्वामनपुराणमें. ‘‘ब्र

ह्मनंदमयलोकोव्यापिवैकुण्ठसंज्ञकः. निर्गुणोअनाद्यनंतश्चवर्तते केवलेऽक्षरे’’. या श्लोकमें निरूपण कियो हे ।।१२।। अब ऐसो जो गोलोक ताके विषें पुरुषोत्तमलीला करत हें ताको वर्णन करत हें.

३८. व्यापी वैकुण्ठ या नामको गणितानंदरूप निर्गुण आदि अंतरहित ऐसो भगवद्धाम केवल अक्षर ब्रह्मके भीतर हे.

संस्कृत टीका

यत्र नानाप्रकारकाः पक्षिगणाः मधुरशब्देन गानं कुर्वन्ति तेन अतिशोभा जाता. अत्र ग्रन्थकृतातु तत्तत्पक्षिशब्दानां वर्णनं ग्रन्थविस्तरभयाद् न कृतः ।।१२।।

१३ श्यामा शतदलनयन

श्यामा शतदलनयन सुंदरी जूथतणे नही पार ।।
अनेक रासमण्डलरचना रची खेले श्रीनंदकुमार ।।१३।।

जहां सुंदरी जो व्रजांगना तिनके **जूथ** समूह. तिनको पार नहीं हे वे व्रजांगना केसी हें. **श्या**[३९]मा षोडेश वर्षकी सर्वदा जिनको वह हे. ओर केसी हे. **शतदल नयन** शतदल जो सौ पखडीको कमल जा जेसे जिनके नेत्र हें. यह उपलक्षण रीतसों वर्णन कियो यातें यह सूचन कियो जो अंगअंगको अत्यंत सौदर्य हे ऐसे जो व्रजसुंदरीजन तिनके अनेक रासोपयोगी मण्डल रचना करिकें **श्रीनंदकुमार** श्रीपुरुषोत्तम किशोर स्वरूपसों खेलत हें. येहि बृहद्वामनपुराणमें

‘‘ना[४०]नारास रसोन्मत्तंयत्रगोपीकदंबकं तत्कदंबकमध्यस्थः किशोर कृतिरच्युतः. या श्लोकमें निरूपण कियो हे. ओर **श्रीमद्भागवतके विषें पंच्याध्यायीमें हु** या लीलाको वर्णन कियो हे. ओर नंदकुमार ऐसें कह्यो तासों नंदादिक हुं नित्यलीलामें सर्वदा हे. बाललीलाको अनुभव करत हें. यह सूचन कियो ।।१३।।

३९. श्यामा षोडशवार्षिकी.

४०. सदा अनेक प्रकारकी रासक्रीडाके रसकरिकें उन्मत्त ऐसी गोपीसमूह भगवद्धाममें हे ओर तासमूहके मध्य किशोरस्वरूपसों प्रभु बिराजे हें और शश्वद्रासरसमोन्मत्त ऐसो हू पाठ हे.

संस्कृत टीका

यत्र शतदलनयनसुन्दरी श्यामा षोडशवार्षिकी. जात्यभिप्रायेण एकवचनम्. ‘अप्रसूता भवेत् श्यामा श्यामा षोडशवार्षिकी’ इतिवाक्यात् तासां यानि अनेकयूथानि तैः सह रासमण्डलानि. तेषां रचनां कुर्वन् सन् श्रीनन्दकुमारः क्रीडां करोति. योगेश्वरेण कृष्णेन तासां मध्ये द्वयोः द्वयोः. प्रविष्टेन गृहीतानां कण्ठे स्वनिकटं स्त्रियः इत्यादिवचनात्.

अहो भाग्यमहो भाग्यं नन्दगोपव्रजौकसाम् ।
यन्मित्रं परमानन्दं पूर्णं ब्रह्मसनातनम् ।।
एषां तु भाग्यमहिमाऽच्युत तावदास्तामेकादशैव हि वयं बत भूरिभागाः ।
एतद्धृषीकचपकैरसकृत् पिबामः शर्वादयोऽङ्घ्युदजमध्वमृताऽऽसवं ते ।।
तद्भूरिभाग्यमिह जन्मकिमप्यटव्यां यद् गोकुलेऽपि कतमाऽङ्घ्रिरजोभिषेकम् ।
यज्जीवितं तु निखिलं भगवान्मुकुन्दस्त्वद्याऽपि यत्पदरजः श्रुतिमृग्यमेव ।। (भाग.पु.१०।१४।३२-३४)
यत्पादपांशुर्बहुजन्मकृच्छ्रतो धृताऽऽत्मभिर्योगिभिरप्यलम्यः ।

स एष यद्दृग्विषयः स्वयं स्थितः किं वर्ण्यते दिष्टमहो व्रजौकसाम् ।। (भाग.पु.१०।१२।१२) इतिदशमस्कन्धपूर्वार्द्धे. दशमस्कन्धे भ्रमरगीते च.
वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणां पादरेणुमभीक्ष्णशः ।
यासां हरिकथोद्गीतं पुनाति भुवनत्रयम् ।। (भाग.पु.१०।४७।६३) अथादिवाराहे.
कृष्णस्य रमणार्थं हि सहस्राणि च षोडश ।
गोप्यो रूपाणि चक्रुश्च तत्रा क्रीडति केशवः ।। महाकौर्ने.
अग्निपुत्रा महात्मानस्तपसास्त्रीत्वमागताः ।
भर्तारं च जगद्योनिं वासुदेवमजंविभुम् ।। पद्मपुराणे गीयते.

दण्डकारण्यवासिनः षोडशसहस्रः ऋषयः स्वाश्रमान्तिकागत-कोटिकन्दर्पाधिकलावण्य श्रीकोशलेन्द्रदर्शनजरिरंसाभावभरेण तं प्रार्थितवन्तः तदीयः स्त्रीत्वं तदा भगवान् एकपत्नीव्रतधरोहम् अधुना व्रजेवो मनोरथः सम्पत्स्यते इति प्रसादं कृतवान्. कुतर्कैः विशेषजिज्ञासायां ततो अवधेयम्. श्रीभागवते दशमस्कन्धे पूर्वार्द्धे.

अथानुस्मृत्य विप्रास्ते अन्वतप्यन् कृतागसः ।
यद् विश्वेश्वरयोर्याञ्चामहन्म नृविडम्बयोः ।
दृष्टवा स्त्रीणां भगवति कृष्णे भक्तिमलौकिकीम् ।
त्मानं च तया हीनमनुतप्ता व्यगर्हयन् ।।
धिग् जन्म नस्त्रिवृद् विद्यां धिग् व्रतं धिग् बहुज्ञताम् ।
धिक् कुलं धिक् क्रियादाक्ष्यं विमुखा ये त्वधोक्षजे ।।
नूनं भगवतो माया योगिनामपि मोहिनी ।
यद् वयं गुरुवो नृणां स्वार्थे मुह्यामहे द्विजाः ।।
अहो पश्यत नारीणामपि कृष्णे जगद्गुरौ ।
दुरन्तभावं योऽविध्यन्मृत्युपाशान् गृहाभिधान् ।।
नासां द्विजाति संस्कारो न निवासो गुरावपि ।

न तपो नात्ममीमांसा न शौचं न क्रियाः शुभाः ।
अथाऽपि ह्युत्तमश्लोके कृष्णे योगेश्वरेश्वरे ।
भक्तिर्दढा न चास्माकं संस्कारादिमतामपि ।।
ननु स्वार्थविमूढानां प्रमत्तानां गृहेहया ।
अहो नः स्मारयामास गोपवाक्यैः सतां गतिः ।।
अन्यथापूर्णकामस्य कैवल्याद्याशिषां पतेः ।
ईशितव्यैः किमस्माभिरीशस्यैतद् विडम्बनम् ।।
हित्वान्यान् भजते यं श्रीः पादस्पर्शाशया सकृत् ।
आत्मदोषापवर्गेण तद्याच्ञा जनमोहिनी ।।
देशः कालः पृथरद्रव्यं मन्त्रतन्त्रर्त्विजोऽग्नयः ।
देवता यजमानश्च क्रतुर्धर्मश्च यन्मयः ।।
स एष भगवान् साक्षाद् विष्णुर्योगेश्वरेश्वरः ।
जातो यदुष्वित्यशृण्म ह्यपि मूढा न विद्महे ।।
अहो वयं धन्यतमा येषां न स्तादृशीः स्त्रियः ।
भक्त्या यासां मतिर्जाता अस्माकं निश्चला हरौ ।।
नमस्तुभ्यं भगवते कृष्णायाकुण्ठमेधसे ।
यन्मयामोहितधियो भ्रमामः कर्मवर्त्मसु ।।
स वै न आद्यः पुरुषः स्वमायामोहितात्मनाम् ।
अविज्ञातानुभावानां क्षन्तुमर्हत्यतिक्रमम् ।।
इतिस्वाघमनुस्मृत्य कृष्णेते कृतहेलनाः ।

दिदृक्षवोप्यच्युतयोः कंसाद् भीता न चाचलन् ।। (भाग.पु.१०।२३।३७-५२)

यत्र साधारणस्त्रीणां एतादृशीभक्तिः जाता. तत्र ‘किमुत अधोक्षजप्रिया’ इतिशुकवाक्यात् सच्चिदानन्दपूर्णब्रह्म-पुरुषोत्तमप्रियाणां किं वक्तव्यम्. ‘‘तस्मान्नभिन्ना एतास्तु ताभिर्भिन्नो न वै प्रभुः’’इतितापिनीयश्रुतिः.

तत्रैका विधृता भर्त्रा भगवन्तं यथा श्रुतम् ।
हृदोपगूह्य विजहौ देहं कर्मानुबन्धनम् ।। (भाग.पु.१०।२३।३४)
अन्यैव काचित् सा सृष्टिर्विधातुर्व्यतिरेकिणी ।। इतिवाराहपुराणे मथुरामाहात्म्ये.
नेमं विरिञ्चो न भवो न श्रीरप्यङ्गसंश्रया ।
प्रसादं लेभिरे गोपी यत्तत् प्राप विमुक्तिदात् ।। (भाग.पु.१०।९।२०)

बृहद्वामनपुराणे गीयन्ते उत्तरस्थाने अखिलभृग्वादीन् प्रति ब्रह्मणो वाक्यानि.

षष्टिवर्षसहस्राणि मया तप्तं तपःपुरा ।
नन्दगोपव्रजस्त्रीणां पादरेणूपलब्धये ।।
तथाऽपि न मयाप्राप्तास्तासां वैपादरेणवः ।
श्रुत्वैतद्ब्रह्मणोवाक्यं भृगुः प्रहाथसादरं ।
वैष्णवानां पादरजो गृह्यते तद्विधैरपि ।।
सन्ति ते बहवोलोके वैष्णवा नारदादयः ।
तेषां विहाय गोपीनां पादरेणुस्त्वयापियत् ।।
गृह्यते संशयोमेत्र को हेतुस्तद्वदप्रभो ।
ततो ब्रह्मा भृगुं प्राह चिन्तयित्वा पुरातनीं ।
कथां सर्वश्रुतीनां यद्रहस्यं परमाद्भुतम् ।। ब्रह्मोवाच.

न स्त्रियोव्रजसुन्दर्य्यः पुत्रताः श्रुतयः किल ।
नाहं शिवश्च शेषश्च श्रीश्च ताभिः समाक्वचित् ।।
प्राकृते प्रलये प्राप्ते व्यक्तेऽव्यक्तं गतेपुरा ।
शिष्टे ब्रह्मणि चिन्मात्रे कालमायातिगेऽक्षरे ।
ब्रह्मानन्दमयोलोको व्यापिवैकुण्ठसंज्ञकः ।
निर्गुणोनाद्यनन्तश्च वर्तते केवलेक्षरे ।
अक्षरं ब्रह्म परमं वेदानां स्थानमुत्तमम् ।
तल्लोकवासी तत्रस्थैः स्तुतोवेदैः परात्परः ।
चिरं स्तुत्या ततस्तुष्टः परोक्षः प्राहतान्गिरा ।
तुष्टोऽस्मि ब्रूतभो प्राज्ञा वरं यन्मनसीप्सितम् । श्रुतयः ऊचुः.
नारायणादिरूपाणि ज्ञातान्यस्माभिरच्युत ।
सगुणं ब्रह्म सर्वेदं वस्तुबुद्धिर्नतेषु नः ।
ब्रह्मेति पष्यतेऽस्माभिर्यद्रूपं निर्गुणं परम् ।
वाङमनोगोचरातीतं ततो न ज्ञायते तु तत् ।
आनन्दमात्रमिति यद्वदन्तीह पुराविदः ।
तद्रूपं दर्शयास्माकं यदिदेयो वरोहिनः ।
श्रुत्वैतद्दर्शयामास स्वं लोकं प्रकृतेः परम् ।
केवलानुभवानन्दमात्रमक्षरमध्यगम् ।
यत्र वृन्दावनं नाम वनं कामदुधैर्द्रुमैः ।
मनोरम निकुञ्जाढ्यं सर्वर्त्तुसुखसंयुतम् ।

यत्र गोवर्द्धनो नामसुनिर्झुरदरीयुतः ।
रत्नधातुमयः श्रीमान् सुपक्षिगण सङ्कुलः ।
यत्र निर्मलपानी या कालिन्दीसरितांवरा ।
रत्नबद्धोभयतटी हंसपद्मालि सङ्कुला ।
नाना रासरसोन्मत्तं यत्र गोपीकदम्बकम् ।
तत्कदम्बकमध्यस्थः किशोराकृतिरच्युतः ।
दर्शयित्वेति च प्राहब्रूत किंकरवाणि वः ।
दृष्टोमदीयो लोकोऽयं यतो नास्ति परंवरम् ।। श्रुतयः ऊचुः.
कन्दर्पकोटिलावण्ये त्वयि द्रष्टे मनांसिनः ।
कामिनीभावमासाद्य स्मरक्षुब्ध्वानसंशयः ।
यथात्वल्लोकवासिन्यः कामतत्वेन गोपिकाः ।
भजन्तिरमणं मत्वा चिकीर्षाजनिनस्तथा । श्रीभगवान् उवाच.

दुर्लभोदुर्घटश्चैव युष्माकं सुमनोरथः, मयानुमोदितः सम्यक्सत्यो भवितुमर्हति, आगामि निविरञ्चौतु जाते सृष्ट्यर्थमुद्यते, कल्पं सारस्वतं प्राप्य वज्रे गोप्यो भविष्यथ, पृथिव्यां भारते क्षेत्रे माथुरेममण्डले, वृन्दावने भविष्यामीप्रेयान्वो रासमण्डले, जारधर्मेण सुस्नेहं सुदृढंसर्वतोधिकम्, मयि सम्प्राप्य सर्वेऽपि कृतकृत्याभविष्यथ, ब्रह्मोवाच. श्रुत्वैतच्चिन्तयन्त्यस्तारूपं भगवतश्चिरम्, उक्तकालं संमासाद्य गोप्यो भूत्वा हरिङ्गता इति ।।१३।।

१४ एणीपेरे नितनवली

एणीपेरे नितनवली लीला घोष वाद झंकार ।।
अंगस्वेदमकरंदे मोह्या मधुप करे गुंजार ।।१४।।

या प्रकार तें **नितनवली** सो नित्य नवीन जो **लीला** ता सम्बन्धी **घोष** जो किंकिणीकंकणादिनके शब्दसहित गान ओर **वाद** जो मृदंगवीणादिनके शब्द. यह सब मिलकें **झंकार** सो अव्यक्त मधुर शब्द होय रह्यो हे. ओर रासक्रीडाश्रमसों प्रभूनके तथा व्रजसुंदरीनके श्रीअंगको **स्वेद** जो प्रस्वेद तासों मिश्रित भयो ऐसो जो पुष्पमालानको **मकरंद** अथवा अंग स्वेदरूप ही जो मकरंद ताके पानसों सुगंधसों मोहित भये ऐसे जे **मधुप** मधु जो मकरंद ताको पान करनहारे भ्रमर वे जहां **गुंजार सो व्यक्त मधुर शब्द करत हें. क्यों जो जो म**[४१]धुपान करे ताके मुखतें व्यक्त शब्द नहीं निकसे. याहीतें **गुंजार** ऐसे कह्यो ओर मोह्या. यह विशेषण कह्यो. तासों यह सूचन कियो जो केवल मकरंदसो तो भ्रमरकूं तृप्ति होत हे. परंतु मोह नहीं होत हे. ओर या मकरंदमें तो श्री प्रभूनके तथा व्रजसुंदरीनके श्रीअंगको प्रस्वेद मिश्रित भयो हे यातें मधुपहू मोहित भये यातें प्रस्वेदको मकरंदते हू अधिक मधुरत्व मादकत्व अत्यंत सुगंधित्व सूचित भयो ।।१४।। ऐसे अक्षरब्रह्म जो गोलोक ओर परब्रह्म जो लीलासहित श्रीपुरुषोत्तम तिनको निरूपण करिकें अब सृष्टिको प्रकार निरूपण हेतु पूर्वक करत हें तहां प्रथम आपकी दीनता सूचन करत हें.

[४१] मधु ऐसो पुष्परसको ओर मधुको इन दो उनको नाम हे.

संस्कृत टीका

१५ ए प्रभुने मन इच्छा

ए प्रभुने मन इच्छा उपनी जस थावा विस्तार ।।
अधिकारी पांखेए वाणी नहि कोयने उच्चार ।।१५।।

प्रभु सो जिनको वर्णन कियो वेही आप श्रीपुरुषोत्तम श्रीगुसांईजी तिनके मनमें जस जो महात्म्यकीर्तन ताको विस्तार होईवेकी इच्छा उत्पन्न भई. परंतु **अधिकारी पांखें** सो अधिकारी बिना **एवाणी नहि कोयने उच्चार.** भगवल्लीला निरूपणकी वारीको उच्चार कोई नहि करि सकत हे. अथवा या लीलाकों तो जो अधिकारी होय सों पांखें. जानें. यातें ओर कोई वाणीसों उच्चार करि सके नाहीं यातें यह सूचन कियो जो में अनधिकारी हतो परंतु मोकों स्वचर्वित तांबूल देकें अधिकारी कियो तातें हृदयमें लीलास्फूर्ति भई ताको मेने वर्णन कियो ओर करत हों याको फलितार्थ यह जो भगवदनुग्रहबिना हृदयमें लीलास्फुर्ति होय नाहीं याहीतें **श्रीगीताजीमें** अर्जुनकों श्रीकृष्णने आज्ञा कीनी हे. दिव्यं द[४२]दामिते चक्षुःपश्य मे योगमैश्वरं. यातें श्रीगुसांईजीके अनुग्रह तें ही लीला वर्णन कीनी ओर करत हें ।।१५।।

[४२] में तोकुं अलौकिक नेत्र दउ हुं तातें मेरो ईश्वरताबोधक योग देख.

संस्कृत टीका

१६ भ्रूभंगेंथी सृष्टि नीपनी

भ्रूभंगेंथी सृष्टि नीपनी अतिसुंदर ब्रह्माण्ड ।।
चौद लोक नानावैचित्र्यें भूमण्डल नवखण्ड ।।१६।।

अब श्रीपुरुषोत्तमके **भ्रूभंगेंथी** भृकुटीके चलन मात्रसों **सृष्टि नीपनी** चराचरकी उत्पत्ति भई. ओर ब्रह्माण्ड उत्पन्न भयो सो केसो हे. **चौदलोक** जो सात. अधोलोक ओर सात ऊर्ध्वलोक ओर नवखण्ड जामे हें ऐसो **भूमण्डल** जो पृथ्वीमण्डल तिनकरिकें वैचित्र्य जो विचित्रता. ताकरिकें **अतिसुंदर** भगवल्लीलोपयोगी. ऐसो अब भूमण्डल नवखण्डात्मक कह्यो ओर सप्तदीपात्मक नहीं कह्यो ताको कारण तो श्रीमहाप्रभूननें **श्रीभागवत तत्वदीपमें** लक्षमात्रमियंभूमिः प्रायेणेतिमतिर्मम. या श्लोकमें आज्ञा करी सोई है ।।१६।।

या तुकमें सृष्टि कही सो कितने प्रकारकी हे ताको हेतुपूर्वक निरूपण करत हें.

संस्कृत टीका

१७ परपोतानी व्यक्ति

परपोतानी व्यक्ति करेवा सृष्टि ते द्विधा प्रकार ।।
दैवी आसुरी बे उपजावी प्रभु मन करी विचार ।।१७।।

परपोतानी प[४३]रकीयस्वकीयकी **व्यक्ति** स्पष्टता करिवेकों **द्विधा** दो प्रकारकी सृष्टि सो एक दैवी ओर दूसरी आसुरी यह दो उपजावी प्रगट कीनी याही रीतसों सृष्टिको द्वैविध **गीताजी** प्रभृतिनमें. द्वौ ''भू[४४]तसर्गौलोकेस्मिन् दैवआसुरएवच'' इत्यादिस्थलनमें स्फुट हें अब प्रभु जो श्रीपुरुषोत्तम तिनमें मनमें विचार करिकें. याको सम्बन्ध आगेकी तुकसों हे. विचार यह जो इन दोई सृष्टिको कछु अवलंब चाहिये ।।१७।।

या विचारसों दो पदार्थ उत्पन्न किये सो कहत हें.

---

[४३] या कल्पकी पृथ्वी लाख योजनकी हे ऐसो भासे हे.

[४४] प्राणीनकी सृष्टि यालोकमें दो प्रकारकी हें. एक देव और एक आसुर.

संस्कृत टीका

१८ भक्ति सुंदरीनें

भक्ति सुंदरीनें माया दासी बे मूरत प्रगटावी ।।
तेमां पेहेली नखशिखसुभगा श्रीहरीनें मन भावी ।।१८।।

भक्तिरूप एक सुंदरी प्रगट कीनी. अब भक्तिको सुंदरीरूप प्रगट कीनो ताको अभिप्राय यह जो सुंदरीभावसों भक्ति हे सोई मुख्य हे. भगवत्कृपाको

फल हे ओर नवधाभक्ति ते साधनभक्ति हें. याहीतें बृहद्वामनपुराणमें कह्यो हे. ‘‘स्त्रि[४५]योवापुरुषोवापिभर्तृभावेनकेशवं. हृदिकृत्वागतिं यांतिश्रुतीनां नात्रसंशयः’’. ओर **श्रीमद्भागवत** नवम स्कंधमें दुर्वासाकों आज्ञा कीनी हे. ‘‘व[४६]शेकुर्वंतिमांभक्त्यासत्स्त्रियःसत्पतिंयथा’’. याहीतें सर्वोत्तमजीमें हू. ‘रासस्त्रीभावपूरितविग्रहः’. ऐसो श्रीमदाचार्यनको नाम हे. और सौंदर्य ‘नि[४७]जहृदयगतं प्रकटितं स्त्रीगूढभावात्मकं’’. या श्लोकमें हू येही निरूपण कियो हे. याहीतें यासों अधिक सुंदर ओर कोन हे. क्यों जो कोटिकंदर्पलावण्य सबतें पर, साधनतें अप्राप्य ऐसे जो प्रभु ते जाकरिकें जीवके हु वश होत हें सोई प्रभूनमें आज्ञा कीनी हे. ‘‘भ[४८]क्त्याऽह मेकयाग्राह्यः’’. ओर गीताजीमें हू. भक्त्यात्वनन्ययाशक्यः. या श्लोकमें. याहीतें श्रीगीताजीमें या प्रेमलक्षणाभक्तिकों ब्रह्मज्ञानको हु फलरूपत्व निरूपण कियो हे. ‘‘ब्र[४९]ह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचते न कांक्षति. समःसर्वेषुभूतेषुमद्भक्तिंलभतेपरां’’. याहीतें भक्तिसुंदरी ऐसें निरूपण कियो. अब मायाकों दासी कही ताको अभिप्राय यह जो जेसें दासी हे ताकों स्वामीको सत्तासम्बन्ध हे तथापि स्वामिके मुख्यसेवक हें तिनकें हु पास जायवेकी वाकों योग्यता नाही हे. ओर नीचसोंहि याको सम्बन्ध होत हें. तेसें मोहकमाया हु भगवच्छक्ति हे तथापि भगवद्भक्तनके निकट हुं जाय नहीं सकत हे येही अभिप्राय. ‘‘ता[५०]वन्मोहोंऽघ्रिनिगडोयावत्कृष्णः न ज्ञायते. मा[५१]यापरैत्यभिमुखेचविलज्जमाना. विलज्जमानयायस्य स्थातुमीक्षापथेतुया’’. इत्यादि स्थलके विषें श्रीभागवतमें निरूपण कियो हे. ओर **श्रीगीताजी** में हुं ‘‘मा[५२]मेवयेप्रपद्यंतेमायामेतांतरंतिते’’. या श्लोकमें प्रभूनने आज्ञा कीनी हे. ओर आसुरजीवकों ही सदा लगी रहत हें. सोई श्रीगीताजीमें प्रभूनने आज्ञा कीनी हे. ‘‘मा[५३]ययापहृताज्ञानाआसुरंभावमाश्रिताः’’. या श्लोकमें श्रीमद्भागवतमें हू अनेकस्थलके विषें यह अभिप्राय निरूपण कियो हे. याहीतें मायादासी ऐसें निरूपण कियो. ओर सुंदरपनो ओर बुरोपनो तो अरूपी जो वायु हे तामें हू हे. अब ये दोनों अरूपी हें के रूपवान् हें यह शंका निवारण करिवेकों कह्यो बेमुरत प्रगटावी. यातें ये दोई भिन्न हे ओर मूर्त्तिमान हे यह सूचन कियो. अब वादी शंका करते हे. **नारदपंचरात्र** में ‘‘मा[५४]हात्म्यज्ञानपूर्वस्तुसुदृढःसर्वतोधिकः. स्नेहोभक्तिरितिप्रोक्तस्तयामुक्तिर्नचान्यथा’’. या श्लोककेविषें तथा ‘‘सा[५५]परानुरभक्तिरीश्वरे’’. या सूत्रके विषें भक्त्याचार्यशांडिल्यऋषिने हू स्नेहको भेद भक्ति हे ऐसें निरूपण कियो हे. तासो स्नेह पदार्थ सो तो अरूपी हे ओर माया हू अरूपी, व्यापक, सर्वत्र निरूपण कीनी हे तासों बेमूरत प्रगटावी यह निरूपण काहेकों कियो. प्रत्युत्तर, भक्ति तो रूपवंत हे केसें जो **श्रीमद्भागवत प्रथमस्कंध** प्रथमाध्यायके विषे. ‘‘पि[५६]बतभागवतंरसमालयं’’. या श्लोकके विषे भक्तिकों रसत्व निरूपण कियो हे. ओर रस सब मूर्तिमान हें सो रसशास्त्रमें निरूपण कियो हे. ओर पद्मपुराणस्थ श्रीभागवत माहात्म्यप्रभृति अनेक आर्ष ग्रंथनमें भक्तिकी मूर्ति अति स्फुट निरूपण करी हे. ओर श्रीमद् **भागवतदशमस्कन्ध** विषें अक्रूरनें स्तुति कीनी तहां ‘‘श्रि[५७]यापुष्टयागिरा कांत्यातुष्टयाकीर्त्येलज्जयोर्जयया. विद्ययाविद्ययाशक्त्या माययाचनिषेवितं’’. या श्लोकके विषे स्वानुभूतमायाकों हू मूर्तिमती निरूपण कीनी हे. तासों ही. बेमूरत प्रगटावी ऐसे कह्यो. शंका, तब श्रुतिस्मृतिके विषें इनदोनोंको मनोधर्मत्व जीवधर्मत्व निरूपण कियो ताको कारण कहा. प्रत्युत्तर,

पदार्थ सब आधिदैविकादिभेदकरिकें त्रिविध हें तासों मूर्ति जो इहां कह्यो सो आधिदैविक स्वरूप हे. अब लौकिकमें एक दो अंग जाके सुंदर होय ताकों हू सुंदर कहत हें. तेसें भक्ति काउ अंगसों सुंदर होयगी ओर भक्तिको ओर मायाको तुल्यसौंदर्य होयगो यह शंका निवारणार्थ कह्यो **तेहेमा पेहेला नखशिखसुभगा** तेहेमा प्रथम दोनों निरूपण कीनी तिनमें. पेहेली, प्रथम जाकों निरूपण कियो सो भक्ति सो नखशिखसुभगा नखसों केशपर्यंत सुंदर हे. अब सौंदर्य अत्युत्तम हे ताको असाधारण ज्ञापक कहत हें. **श्रीहरिनें मनभावी** श्री जो स्वामिन्यादिक तिनके हु हरि सो चित्तके हरण करिवेवारे तिनहुके मनमें भाई. यातें अधिक सौंदर्य ओर कोनको कहनो याहीतें श्रीहरीनें मनभावी. यह निरूपण कियो यातें सर्वाधिक सुंदर प्रभुनकों वश करनहारी प्रेमलक्षणाभक्ति हे ओर आसुरावेश करनहारी माया हे यह फलितार्थ भयो ॥१८॥

ऐसें द्विधासृष्टिको अवलंबन निरूपण करिकें अब द्विधासृष्टि निरूपण करत हें.

४५. स्त्री ओर पुरुषहु भगवानही अपने पतिहे ऐसे ध्यान करिकें श्रुतिनकी गतिकों पावत हें इतने नित्यलीला प्राप्त होते हे यामें कछु संशय नाहीं.
४६. मोकुं भक्त वश करत हें जेसे आछी स्त्रियें आछे पतिको वश करें.
४७. यह श्लोक श्रीगुसांईजीको हे यापें श्रीगोकुलोत्सवजीकृत संस्कृत टीका हे.
४८. एक भक्तिसे ही मेरो यथार्थज्ञान तथा दर्शन होय सके हे.
४९. जो ज्ञानतें ब्रह्मरूप होय हे सो सदा प्रसन्न रहे ओर वांको शोक तथा काम ना कछु भी होय नहीं सब प्राणीनमें वह समद्रष्टि होय हे वह जीवन्मुक्त मेरी फलरूपभक्ति हीं पावत हें.
५०. हे प्रभो जहांताई आपको जाने न होंय तहां ताई मोहरूप बेडी रहे.
५१. प्रभुनके सन्मुख ठाडी रहिबेमेहु माया लाज पायकें पाछी फिरजाय हे.
५२. जो मोकुंही शरण आवें ते ही या मायाकु तरें हें.
५३. मायानें हर्यो हे ज्ञान जिनको ऐसे जीव आसुरभावकों पावत हे.
५४. प्रभुनको असाधारण महात्म्य जानेसु कब हु नमिटे ऐसो दूढ ओर स्त्रीपुत्र धनादि सबनतें अधिक ऐसो जो प्रभुनमें स्नेह होय ताको भक्ति कहत

हें याहीतें परममुक्ति होय या बिना न हो.

५५. सर्वेश्वर जो प्रभु तिनमें असाधारण अनुराग सो परमभक्ति जानिये यह अर्थ श्वेताश्वेतरादिकन भक्तिमीमांसाभाष्यमें लिख्यो हे.

५६. मोक्षमें हु भगवद्भक्तिरस पान करो.

५७. श्रीपुष्टि आदि १२ प्रभुनकी मुख्य शक्ति हे.

संस्कृत टीका

१९ कृपाकटाक्षे हुआ

कृपाकटाक्षे हुआ अक्षरमा उपना सत्व अनंत ।।
भक्तिलीन हुआ सोभागी ते वैष्णवगुणवंत ।।१९।।

अब कटाक्ष जो सृष्टिकों इच्छापूर्वक देखनो ताकरिकें **अक्षरमा** सो अक्षरब्रह्ममें **हुवा** सो व्यु[५८]च्चरण प्राप्त भये. फेर भगवदिच्छा तें मायाबद्ध होयकें उपना सो देह धारण करिकें उत्पन्न भये वे कोन सो कहत हें. **सत्वअनंत** अनंत ते असङ्ख्यात ऐसे सत्व ते जीव अथवा जैसें अग्निमेंसो छोटे वि[५९]स्फुलिंङ्ग निकसत हें तेसें सत्व जो जीव ओर अनंत जो जाको प्रलयपर्यंत अंत नांहीं ऐसे पंचमहाभूत देवता इंद्रियादिक ये सब **उपना** उत्पन्न भये. शंका, श्रुतिस्मृतिव्याससूत्रमें तो जीवको व्यापक ओर नित्यनिरूपण कियो हे. ओर इहांनो इहांतो बाकी उत्पत्ति कही हे ताको कारण कहा. प्रत्युत्तर, व्यापक तो जीव नही हे अणुस्वरूप हे सो वेदमें निरूपण कियो हे परंतु याको चैतन्यगुण विसर्पी हे तातें व्यापक जेसो भासत हे. ओर भगवदंश हे यातें नित्यता कही हे

ओर बाकी उत्पत्ति सो ब्रह्मस्वरूपतें व्युच्चरण होत है ताहीतें अग्निविस्फुलिंगको द्दष्टांत **छांदोग्यबृहदारण्यकमुण्डकादिक उपनिषदनमें** दियो हे. जेसे विस्फुलिंग अग्निमेतें निकसतहें सो कछु नये उत्पन्न होयकें किसत नाहीं वे तो अग्निरूप ही हें परंतु न्यारेमात्र होत हें तेसें जीव हु ब्रह्मकी इच्छामात्रसों न्यारे होत हें. शंका, जीवभगवदंश हे तब याकों अज्ञान केसें संभवे. ओर सुखदुःखादिक हु जीवकों होत हें सो ब्रह्मकों प्राप्त होयेंगे. जेसें एक अंगको बाधा होत हे तो अंगीकोंही दुःख होत हे तेसें. प्रत्युत्तर, अज्ञानतो याकों भगवदिच्छासों माया लागत हे तब होत हे. ओर सुखदुःखादिक जो जीवकों होत हे सो तो ब्रह्मकों नहीं होय क्यों जो अग्निको स्फुलिंग तृणादिकमें पडिकें वृद्धि पावत हे ओर जलादिककरकें नाश पावत हे तासों कछु जो अग्निमेंसों वह स्फुलिंग निकसत हे ताकी वृद्धि अथवा नाश कछु नहीं होत हे तेसें जीव यद्यपि भगवदंश हे तथापि तामे जो कह्यो सो दोष इहां नहीं हे. यातें जीव अणुपरिमाण हे. ओर जैसें दीपकको प्रकाश विसर्पी हे तातें एक स्थलमें रहिकें सर्वशरीरमें चैतन्यगुणके प्रसारसों व्यापक जेसो भासत हे. येही श्रुतिस्मृतिमें निरूपण कियो हे. ओर व्याससूत्रमें हू द्वितीयाध्यायके तृतीयपादमें यह सब सविस्तर निरूपण कियो हे ओर प्राणेंद्रियादिकनकी हू उत्पत्ति ब्रह्ममेंसूं ही हे यह हू वाही अध्यायके चतुर्थ पादमें स्फुट कह्यो हे तातें उपना सत्वअनंत यह कह्यो हे तातें उपना सत्वअनंत यह कह्यो सो युक्त हे. अब इन सबनमें जिनपे कृपा भई वे केसे भये सो कहत हें. हुवा अक्षरमा. अक्षर इतनें जाको क्षरण न होय ऐसी मा[६०] सो ऐश्वर्यादिक संपत्ति जिनकें हे ऐसे शुकसनकादिक नित्यमुक्त ओर **वैष्णवगुणवंत** भगवदीय गुणयुक्त ऐसे दैवी भये येही अभिप्राय वेदमें निरूणण कियो हे. तथा श्रीविटठलनाथजीने हू **विद्वन्मण्डनमें** निरूपण कियो हे. अब वे पहिले कहे जो जीवन्मुक्त ओर वे जीव सो. **सौभागी** आछे सौभाग्य वारे क्यों जो प्रभूनकी कृपा उनपे भई ताहीतें वे सब भक्तिके विषें लीन भये ।।१९।।

अब प्रथम कटाक्षको कार्य निरूपणकरिकें दूसरे कटाक्षको कार्य एकतुक सों निरूपण करत हें.

[५८] व्युच्चरण सो वाहीमेंतें निकसिकें जुदो होनो.

[५९] आंचमेंतें चट चट होयकें जो चिनगारी उडत हें तिनको नाम विस्फुलिंग.

[६०] मा शब्द लक्ष्मीवाचक हे तातें समृद्धिवाचक हु होय सकेहे.

संस्कृत टीका

२० बीजे कटाक्षे जो

बीजे कटाक्षे जो जन उपना मायामां थया लीन ।।
कर्मजड आसुर अन्यउपासक भजन धर्म थी हीन ।।२०।।

अब प्रथम कटाक्षसो तो सब सृष्टि उत्पन्न करिकें कृपातें जीवन्मुक्त ओर सामान्य सब दैवीजीवकों उत्पन्न किये. अब दूसरे कटाक्षसों जे जन उत्पन्न भये ते मायामें लीन भये वे पांचप्रकारके भये सो कहत हे.

कर्मजड जो कर्म हे सो ब्रह्म हे ताबिना ओर ईश्वर नहीं हे ऐसे मानवेवारे केवल मीमांसा शास्त्रवारे ओर. **आसुर** सो जे जगतकों असत्य मानत हें ओर ईश्वर नहीं हे ऐसें कहत हें ते येही आसुरको लक्षण **श्रीगीताजी** में. अ[६१]सत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम्. या श्लोकमें कह्यो हे. अन्यउपासक. अन्य जो पुरुषोत्तमबिना ओर सब देवता तिनके उपासक अथवा. **अन्य उपासक** सो द्वैतभावनासों सेवाकरनहारे अब द्वैतभावना सो यह जो जाकीमें सेवा करत हुं ओरहे ओरमें ओर हुं याको अंश नहीं हूं या प्रकारकी भावना शंका. द्वैतभावनासों सेवा कियेको कहा दोष हे.**प्रत्युत्तर** द्वैतभावसों सेवाको दोष **बृहदारण्यकउपनिषदमें** कह्यो हे ओर भारतके आदिपर्वस्थ शाकुंतलोपाख्यानमें. यो[६२]न्यथासंतमात्मानमन्थाप्रतिपद्यते. किंतेन नकृतं पापं चौरेणात्मापहारिणा. या श्लोकमें हु ताको दोष कह्यो हे. ताहीतें इनकों हु मायामें लीन कहे. ओर **भजन** जो प्रभूनके विषें चित्त एकाग्र करनो तासों हीन रहित ओर **धर्म** जो वेदोक्तधर्म तातें हीन शंका मूलमेंतो धर्महीन ऐसें कह्यो हे ताको अर्थ वेदोक्तधर्महीन केसें करत हो. यातें ओर कहा धर्म नहीं हे. **प्रत्युत्तर** वेदोक्तहे सोई

धर्म हे ओर तो अधर्म हे ऐसो **श्रीमद्‌भागवत** के षष्ठस्कंधमें वे[६३]दप्रणिहितो. धर्मोह्यधर्मस्तद्विपर्ययः. या श्लोकमें कह्यो हे याहीतें वेदोक्तधर्म रहित जे नास्तिक यवनादिक ते हु मायालीन हें ओर वैष्णवको मुख्य लक्षण हु यह हे जो अपने वर्णाश्रमादिधर्मको त्याग सर्वथा न करनो सो **विष्णुपुराण** में यमनें स्वदूतप्रति कह्यो हे. न[६४]चलतिनिजवर्णधर्मतोयः सममतिरात्मसुहृद्विपक्षपक्षे. नहरतिनचहंतिंकिंचिदुच्चैःस्थितमनःसंतमवेहिविष्णुभक्तं. याश्लोकमें. याहीतें इन सबनकों मायालीन कहे. ऐसें दोय तुकसुं दैवजीवकुं मोक्षाधिकारित्व ओर आसुर जीवनकुं सर्वदा बंधाधिकारित्व निरूपण कियो सोही गीताजीमें प्रभूननें आज्ञा करी हे. दैवीसंपद्विमोक्षायनिबंधायासुरीमता. या श्लोकमें ।।२०।।

ऐसे द्विधा सृष्टि निरूपणकरिकें अब जगतमें प्रभुनके प्राकटयको प्रयोजनपूर्वक वर्णन करत हें.

६१. आसुरजीव या जगत्कों झूठो ओर तीनकालमें स्थिति रहित ईश्वर रहित कहते हे.

६२. ब्रह्मस्वरूप वेदादिकमें जेसें कह्यो हे तातें ओर रीतिको वाकों जो मनुष्य जाने हे आत्मस्वरूपको हरनहार चोर ऐसो जो वह मनुष्य ताकों सब पाप लगत हें.

६३. वेदमें कह्यो सो धर्म ओर वातें उलटो सो अधर्म.

६४. जो अपने वर्णाश्रमधर्ममें रंचहु न चुके ओर अपने मित्रके तथा शत्रुकेहु पक्षमें जाकी बुद्धि समान रहे ओर जो चौर्य हिंसादिक कछु न करे ओर जाको शुद्ध स्थिर मन होय ताकों वैष्णव जानिये.

संस्कृत टीका

२१ ऐणी प्रकारें सृष्टि

ऐणी प्रकारें सृष्टि द्विधा गुणमिश्रित चाली जाय ।।
भक्तिमारगी जीव स्वतंतर केवल भक्त न थाय ।।२१।।

ऐणीप्रकारें प्रथम जो प्रकार कह्यो ता रीतसों. द्विधा सों दैवी आसुरी दो प्रकारकी सृष्टि. **गुणमिश्रित** सो सत्वरजस्तम तिनकरिकें युक्त चली जात हे. परंतु निर्गुणभक्तिमार्गीय जो जीव हें ते स्वतंत्रतातें केवल भक्त होत नांही इतने उपदेशक आचार्य बिना निरूपाधिशुद्ध निर्गुण भक्तिकों प्राप्त होत नाहीं क्यो जे आचार्य बिना ज्ञान भक्ति कछु भी सिद्ध न होय ऐसों श्वेतकेतुविद्यामुण्डकोपनिषत प्रभृतिनमें कह्यो हे ।।२१।।

अब निर्गुणभक्ति प्राप्त होयवेतें दैवी जीवनको क्लेश मनमें बिचारिकें आपनें निर्धार कियो सो निरूपण करत हें.

संस्कृत टीका

२२ श्रीपुरुषोत्तमें वळी

श्रीपुरुषोत्तमें वळी विचार्युं हवे प्रकार श्यो करियें ।।
हमारी सेवा अने कथारस निरूपवा तनु धरियें ।।२२।।

पुरुषोत्तम जो निःसाधनजनके हितकर्ता तिननें प्रथम तो यह विचार कियो जो दैवीजीव सृष्टिके प्रवाहमें भ्रमण करत हें. भक्तिमार्गको अवलंब इनको नहीं मिलत हे अब **वळि** फेर यह विचार कियो जो इनको उद्धार होय ऐसो **प्रकार श्योकरियें** कोनसो प्रकार करे फेर क्षणमात्रमें आपने निर्धार कियो सो निरूपण करत हे **मारी सेवा अने कथारस** मेरी सेवाको ओर मेरी कथाको रस सो भक्तिरस सो **निरूपवा** निरूपणकरिवेको **तनुधरियें** देह धारन करें. अब देहवाचक तनुशब्द इहां धर्‌यो ताको अभिप्राय यह जो 'तनुविस्तारे' धातु हें तातें वंशविस्तारकरिकें दैवीजीव ओर पृथ्वी इनकों अनेकवर्ष पर्यन्त सुख देनों ऐसें आपनें विच्चारयो. याहीतें **सर्वोत्तमजी** में. भु[६५]विभक्तिप्रचारैककृते--स्वान्वयकृत्. यह श्रीमहाप्रभुनको नाम हे. शंका, विचार तो प्रथम दैवीजनके क्लेशको कियो ओर निर्धार तो सेवा ओर कथाके निरूपणको कियो ताको कहा कारण. **प्रत्युत्तर** भगवत्सेवा ओर यथार्थकथाश्रवण बिना प्राकृतगुणसम्बन्ध छूटत नहीं. ता बिना फलरूपभक्ति प्राप्ति नहीं होय ओर ये दोई पदार्थको जीवकों ज्ञान कहांतें. यातें भगवत्सेवा ओर भगवत्कथा श्रीसुबोधिन्यादिक ताके प्रादुर्भावार्थ ही आपनें प्रादुर्भावकी इच्छा कीनी याहीते येहि शिक्षा श्रीमहाप्रभुने **भ**[६६]क्तिवर्द्धिनीमें कीनी हे ओर सेवातें भजन ओर कथारसतें स्मरण सिद्धि होय तातें आगे सर्वसिद्धि होत हे यह अभिप्राय **च**[६७]तुःश्लोकी प्रभृति ग्रंथनमें स्फुट हे ।।२२।।

अब प्रभुननें ऐसी इच्छा करी ताके आनंदको मनमें अनुभव करिकें गोपालदासजी आपनो अभिप्राय कहत हे.

[६५] पृथ्वीमें भगवद्भक्तिको प्रकारकरिवेकुही अपने वंशको स्थापन श्रीमहाप्रभुनने कियो हे.
[६६] सेवायां वा कथायां वा यस्यासक्तिर्दृढा भवेत् इत्यादि.
[६७] स्मरणं भजनं चापि न त्याज्यमिति मे मतिः.

संस्कृत टीका

२३ भक्तजीवनां भाग्य

भक्तजीवनां भाग्य विस्तर्यां इच्छा करी हरिसार ।।
तेने हेतें आपोपें प्रगटया श्रीवल्लभराजकुमार ।।२३।।

भक्त जो भक्त ओर **जीव** जो ओर सब सामान्यजीव तिनके भाग्य विस्तरे भाग्य बढे क्यों जो भक्तनके सबकार्य सिद्ध भये ओर सामान्य जीवको हू दर्शन भये याहीतें कह्यो **भक्तजीवनाभाग्य विस्तर्यां.** अब याकों हेतु कहत हें. **इच्छाकरीहरिसार** हरी जो सबके दुःखहर्ता तिननें सार सो सुंदर इच्छा करी. अथवा, ‘सृगतो’ धातुको यह रू[६८]प हे तातें सार जो भूमिपर पधारनो ताकी इच्छा करि. याहीतें प्रथम कह्यो भक्तजीवनाभाग्य विस्तर्यां. **तेनेहेतें** जातें ऐसी इच्छा करी ताहीतें. अथवा ते जो भक्त हेत सो तिनके उपर प्रीति ताकरिकें **आपोपे प्रगटया** आपोआप प्रगट भये ओर आपोतें प्रगटया ऐसो हु पाठ हे ताको अर्थ. जिननें पहिलें विचार कियो. वे पुरुषोत्तम आपही यह प्रगट भये हें अंशकलादिरूपसों नहि. अब प्रगट भये ते कोन. **श्रीवल्लभराजकुमार** श्रीवल्लभ जो श्रीवल्लभाचार्यजी सोई राज सबके अधिपति अथवा ‘राजदीप्तौ’ धातुको राज यह रू[६९]प हे तातें श्रीस्वामिनीजी तिनके वल्लभ प्रिय ऐसे राज जो अग्नि श्रीमहाप्रभु श्रीपुरुषोत्तमके मुखारविंदाधिष्ठातृ अग्नि हें तातें श्रीस्वामिनीजीकों प्रिय हें याहीतें श्रीवल्लभराज ऐसें कह्यो तिनके कुमार पुत्र श्रीविटठलनाथजी ।।२३।।

अब या तुकमें तो केवल श्रीविटठलनाथजीकों ही पुरुषोत्तमत्व वर्णन कियो तातें कोईकों ऐसी शंका होय जो श्रीमहाप्रभुजी तो कश्यपवसुदेवजीतुल्य होयंगे. ताको निवारण करत हें.

---

६८. भावार्थ घयंतरूप.

६९. कर्त्रर्थ काच्प्रत्ययांत रूप.

संस्कृत टीका

२४ पूर्णब्रह्म श्रीलक्ष्मण

पूर्णब्रह्म श्रीलक्ष्मण सुत पुरुषोत्त श्रीविटठलनाथ ।।
श्रीगोकुलमां प्रगट पधार्या स्वजन कीधां सनाथ ।।२४।।

अब **लक्ष्मण** जो लक्ष्मणभटजी अक्षर ब्रह्मको स्वरूप ते पूर्णब्रह्म व्यापिवैकुण्ठरूप हें. याहीतें श्री जो भगवल्लीपयोगिसमृद्धि ताकरकें युक्त हें अब व्यापिवैकुण्ठकों पूर्ण ब्रह्मणत्व वेदमें हू निरूपण कियो हे. ओर **बृहद्वामनादिक** पुराणनमें हू प्रसिद्ध हे. अब लक्ष्मणभटटजी धामरूप हें तब श्रीमहाप्रभुजी ओर श्रीगुसांईजी यह कोन हें सो कहत हें **सुत पुरुषोत्तम श्रीविटठलनाथ** सुत सो पूर्वोक्तलक्ष्मण भटटजीके पुत्र श्रीमहाप्रभुजी ते पुरुषोत्तम हें ओर विटठलनाथ जो श्रीगुसांईजी तेहू पुरुषोत्तम हें क्यों जो निःसाधन जनहितकर्ता हें याहीते आपको विटठल यह नाम हे इहां पुरुषोत्तमशब्दको मध्यमणिन्यायसों दोउजग्गे सम्बन्ध हें **श्रीगोकुलमां प्रगट पधार्‌या.** श्री जो लक्ष्मीजी तिनकरिकें युक्त जो गोकुल सो श्रीगोकुल कहिये सोई **श्रीमद्‌भागवतदशमस्कंधमें** ह[७०]रेर्निवासात्मगुणैरमाक्रीडमभून्नृप. श्र[७१]यतइंदिराशश्वदत्रहि. इत्यादिस्थलके विषें निरूपण कियो हे ऐसो जो श्रीगोकुल तामें **प्रगट पधारया** प्रत्यक्ष पधारे याको अभिप्राय यह जो. अप्रत्यक्ष तो सर्वदा श्रीगोकुलमें बिराजे हें. सोई श्रीमद्‌भागवतदशमस्कंधमें प्रभूननें आज्ञा कीनी हे. भ[७२]वतीनां वियोगोमेनहिसर्वात्मनाक्वचित्. ओर (तत्वार्थदीपके भागवतार्थ प्रकरण) ग्रंथमे-**श्रीमद्‌भागवततत्वदीपमें** दशमस्कंध पूर्वार्द्ध विवरणमें. ब[७३]हिर्मुखदशायांतुनपश्यतीतिदुःखिताः. याकारिकाके विषें

श्रीमहाप्रभुनने येही निरूपण कियो हे ओर ऋग्वेदके **विष्णुसूक्त** में हू याहीरीतको निरूपण हे सो **विद्वन्मण्डन** में लिख्यो हे याहीतें प्रगट पधारया यह कह्यो. अब प्रत्यक्ष पधारिकें जो कार्य कियो सो निरूपण करत हें. **स्वजनकीधां सनाथ** स्वजन जे दैवीजीव तिनकों सनाथ किये. कृतकृत्य किये. जेसे स्वामी विदेशकूं जात हे तब परिजन सब अनाथ जेसे होय जात हें फेर स्वामी आवत हें तब सनाथ होत हें अथवा नाथृधातुको नाथ यह रूप हे सो नाथृधातु ऐश्वर्य ओर उपताप या अर्थमें प्रवृत्त होत हे. तातें ऐश्वर्यवान् ओर उपताप जो निजदर्शनकी आर्ति ताके दाता सो नाथ प्रभु तातें स्वजनकों युक्त किये प्रभूनको सम्बन्ध करायो. यातें स्वजनकीधां सनाथ ऐसे कह्यो. याको भावार्थ यह जो जेसे विवाहतें प्रथम कन्या अनाथ होत हे फेर पतिसम्बन्धसों सनाथ होत हे तेसें दैवीजीवनकों हु आपनें ब्रह्मको सम्बन्धकरायकें सनाथ किये यह अभिप्राय **यमुनाष्टककी टीप्पणीजीमें.** भ[७४]गवान्विरहंदत्त्वाभाववृद्धिंकरोतिहि. तथैवयमुनास्वामिस्मारणात्स्वीयदर्शनात्. अस्मदाचार्यवर्यास्तु ब्रह्मसम्बन्धकारणात्. तापक्लेशप्रदानेनस्वीयानांभाववर्द्धकाः. इन दोय कारिकानसुं **श्रीहरिरायजी** ने निरूपण कियो हे ओर गद्यार्थ **शिक्षापत्र** प्रभृतिनमें याको स्फुट विवेचन कियो हे याहीतें स्वजनकीधां सनाथ. यह निरूपण गोपालदासजीनें कियो ।।२४।। शंका. यह बानी तो श्रीविटठलनाथजीकी हे ओर या आख्यानके आरंभमें तो **श्रीविटठलनाथजीकों** वंदन कियो हे यह केसें संभवे.**प्रत्युत्तर.** जेसें वेदभागवतादिक हू भगवद्वाणी हे तथापि नारायणं नमस्कृत्य इत्यादिस्थलके विषें तथा वेदमें हू वंदन कियो हे तेसें इहां हू कियो हे. वादी कहत हे. उहां हू मेरी येही शंका हे.**प्रत्युत्तर.** याको कारण यह हे जो वेदादिक पुराणादिक यद्यपि भगवद्वाणी हे तथापि ब्रह्माजी वेदव्यास इत्यादिकनके मुखसों इनको प्रादुर्भाव भयो तासों वंदनको दोष नांही. क्यों जो कोई पदार्थ होत हे ताको स्वाभाविक कार्य ओर होत हे ओर पात्रांतर भयेसूं वाही पदार्थसों ओर कार्य होत हे तासों वह पदार्थ कछु अन्यथा न होय ताको द्दष्टांत जेसें सूर्यके किरण अत्यंत उष्ण हें तथापि चंद्रमें पडत हें तब ताप मिटावत हें तासों सूर्यकिरण कछु शीतल नहीं हें. ओर सूर्यकिरणके योगसुंही चंद्रप्रकाश करत हे यह बात **ज्योतिःशास्त्र** में प्रसिद्ध हे तेसें यह बानी तो श्रीविटठलनाथजीकी हे तथापि गोपालदासजीके मुखद्वारा प्रकट भयी तासों वंदनको दोष नांही. तेसें वेदपुराणादिकमें हूं वंदन कियो ताको येहि समाधान हे. शंका. तब तुमने प्रथम चिह्न बतायो जो श्रीविटठलनाथजीकी वाणी हे ताहीतें **श्रीरुक्मिणी बहुजी** को तथा **श्रीपद्मावती बहुजीको** नाम वर्णन नहीं कियो ताको हू अब कहा कारण रह्यो क्यों जो ओरके मुखद्वारा वाको हू कहा दोष हे.**प्रत्युत्तर ।** यह ठीक शंका करी परंतु यह गुर्जरभाषा हे ओर **गोपालदासजी** के मुखसों प्रकट भई तासों सर्वथा **आपकी वाणी हे.** यह ज्ञान होय नाहीं ओर या ज्ञानविना याके पाठको पूर्ण फल होय नहीं तासों जीवनपर कृपा करिकें यह बानी आपकी हे यह जनायवेके लियें यह चिह्न राख्यों हे यातें जो व्याख्यान कियो सो सब युक्त हे.

(७५)श्लोक प्रथमेवंदनंकृत्वासाक्षरं पुरुषोत्तमं ।।
निरूप्यतस्यप्राकटयमब्रवीत्सप्रयोजनम् ।।

।। इति श्रीमद्बालकृष्णचरणैकतान् श्रीमद्गोवर्द्धनगुरुपादपद्मरागलब्ध महोदयश्रीगोकुलोत्सवात्मजजीवनाख्येनविरचितं प्रथमाख्यानव्याख्यानं समाप्तिमफाणीत् ।।

७०. जबतें भगवान् प्रगट भये तबहीतें व्रजदेश भगवन्निवास ओर अपने गुण इन हेतुनतें लक्ष्मीजीको क्रीडास्थान होत भयो.

७१. इहां व्रजमें लक्ष्मीजी सर्वदा रहत हे.

७२. व्रजभक्तनकों संदेश कहवायो हे जो तुमकों कोई अंशसुबी मेरो वियोग कबहु नहीं हे.

७३. बहिर्मुखदशामें भगवान् दीखत नाहीं तातें दुःखित होत हे.

७४. भगवान् अपनो विरह देकें जीवनको भाव बडावत हे तेसेंही श्रीयमुनाजी अपनें दर्शनतें प्रभुनको स्मरण करायके भाव बडावत हे ओर श्रीमहाप्रभुजीतो ब्रह्मसम्बन्ध करवायकें भगवद्दर्शनार्थ ताप क्लेश देकें भाव बडावत हें.

७५. अब श्रीजीवनजीमहाराज या प्रकार प्रथमाख्यानको व्याख्यान करिकें याको समग्र अर्थ संक्षेपसों एक श्लोकमें लिखत हें ता श्लोकको अर्थ. प्रथमाख्यानमें पहिले श्रीगुसांईजीको वंदन तथा प्रार्थना करिकें अरु व्यापकरूप अद्वेत ब्रह्मजे या तुकसों लेकें अक्षरब्रह्म सहित पुरुषोत्तमको निरूपण करिकें ते प्रभुने मनइच्छाउपनी इत्यादि तुकसों सृष्टि निरूपणपूर्वक श्रीपुरुषोत्तममें वली विचारयुं इहांसु लेकें श्रीगुसांईजी रूपसु आप प्रकट भये यह निरूपण कियो ओर भक्तिमार्गीयजीवोद्धाररूप अवतार प्रयोजन हु कह्यो. ओर या आख्यानमें जा रीत क्षर अक्षर पुरुषोत्तमको निरूपण कियो हे ताही प्रकारको सविस्तर सप्रमाण निरूपण मैंने वेदांतचिंतामणी या नामके संस्कृत ग्रंथमें तथा ब्रह्मवल्ली प्रभृति उपनिषत्के व्याख्यानमें निरूपण कियो हे सो उहां देखनो. अब संक्षेपसों या आख्यातके समग्र अर्थको दोहा)

वंदन करि हरि धाम जुत लीला सहित बखान ।।
दुबिध सृष्टि सह हेतु हरि जन्म कह्यो आख्यान ।।१।।

।। इति श्रीव्रजवल्लभचरण सेवकस्यपंचनदिघनश्यामभटटात्मज गोवर्द्धनाशुकवेःकृतो प्रथमाख्यानव्याख्याटिप्पणं ।।

संस्कृत टीका

द्वितीयाख्यान

१ लक्ष्मणसुत

।। श्रीकृष्णाय नमः ।। ऐसें प्रथमाख्यानमें अक्षरब्रह्म ओर पुरुषोत्तमको स्वरूप निरूपण करिके ओर पुरुषोत्तमके प्राकटयको प्रयोजन वर्णन कियो अब दूसरे आख्यानमें जा स्वरूपसों प्रकट भये ता स्वरूपको तथा चरित्रको वर्णन करत हें. **राग रामकली** अब श्रीमहाप्रभुनके स्वरूपचरित्रको जामें वर्णन हे. ऐसो

जो यह आख्यान ताको प्रातःकालके विषें अवश्य गान करनो याही अभिप्रायतें प्रातःकालको राग रामकली हे तामें या आख्यानको गान गोपालदासजीनें कियो ।।

लक्ष्मणसुत श्रीवल्लभराय ।
स्मरण करतां दुष्कृत जाय ।।
कलिजन तरेवा नहीं अवर उपाय ।
यज्ञपुरुष हरिना श्रुति गुण गाय ।।१।।

लक्ष्मण. जो लक्ष्मणभटटजी अक्षरब्रह्मको स्वरूप तिनके सुत. सो कोन **श्रीवल्लभराय.** श्रीवल्लभ जिनकों नाम हे राय सो सब आचार्यनकें राजा अथवा श्री जो स्वामिन्यादिक तिनके **वल्लभ** जो पुरुषोत्तम सोई राय सो धन हे जिनके यातें सर्वदा आप प्रेमलक्षणाभक्तियुक्त हें यह फलितार्थ भयो. लौकिकमें हू जाके विषें सांचो प्रेम होत हे ताकोंधन करिकें जानत हें. तो श्रीमहाप्रभूनको धन श्रीपुरुषोत्तम हें तामें आश्चर्य कहा याहीतें सप्तश्लोकीमें [१] स्फुरत्कृष्ण प्रेमामृतरसभरेणातिभरिता यह विशेषणमें येही निरूपण कियो हे. अब ऐसे जो श्रीमहाप्रभुजी तिनके नामस्मरण मात्रसों **दुष्कृत.** जो पाप ते नाश पावत हें. अब नामस्मरणकों पाप नाशकत्व अजामिलके आख्यानमें प्रसिद्ध है ओर नृसिंहपुराणमें हू. नाम्नोस्तियावतीशक्तिः पापनिर्दहनेहरेः तावत्कर्तुंन शकनोतिपातकंपातकीजनः या श्लोकमें निरूपण कियो हे. ओर भक्तिमीमांसामें हू शांडिल्यमुनिनें या बातको सविस्तर विचार कियो हे याहीतें सर्वोत्तमजीमें स्मृतिमात्रार्तिनाशनः यह आपको नाम हे. याहीतें **कलिजन** कलि जो पापजन्यक्लेश ताकरकें युक्त जो जन अथवा कलियुगसम्बन्धि जे जन तिनकों **तरेवा** तरिवेकों अवर दूसरो उपाय नहीं हे. **यज्ञपुरुष** यज्ञस्वरूप अथवा यज्ञकर्ता याहीतें सर्वोत्तमजीमें यज्ञभोक्ता यज्ञकर्ता यह दो नाम हें. याही रीतसों [३]वेदमें हू निरूपण कियो हे ओर आप केसे हें हरि सबके दुःखहर्ता या रीतसों श्रुति आपको गुणगान करत हें सो श्रीमहाप्रभूनको वर्णन करनहारी श्रुतियां काशीस्थ श्रीगिरिधरजी महाराजने श्रुतिरहस्य ग्रंथमें लिखी हे ।।१।।

ऐसें प्रथम तुकमें श्रुति श्रीमहाप्रभूनको गुणगान करतें यह निरूपण कियो अब गुणगान तो वेदमें ब्रह्मरुद्रादिनको हूं कियो हे. परंतु विचार तो परब्रह्मको ही कियो हे तातें श्रीमहाप्रभूनको गुणगान वेदमें कियो होयगो परंतु परब्रह्मपदार्थ तो ओर होयगो या शंकाको एकतुकसों निवारण करत हें ।।

(१. प्रकट ऐसी जो श्रीकृष्णप्रेमरूप अमृतरसमूह ताकरिकें भर्यों भयो श्रीमहाप्रभुनको स्वरूप हें.
२. भगवन्नामकी पाप मिटायवेमें जितनी बडी शक्ति हे तितनें पाप पातकी मनुष्य नहि करिसके.
३. तैत्तिरी शाखा प्रकृतिमें यज्ञ हे सो निश्चय विष्णु हे ऐसे कह्यो हे.

संस्कृत टीका

२ गायश्रुति गुण

गायश्रुति गुण रूप अहर्निश करी ध्यानविचार ।।
आनंदरूप अनूप सुंदर पामे नहिं कोइ पार ।।२।।

अब जा स्वरूपको गुणगान श्रुति करत हें ताही स्वरूपको विचार करत हें यह सूचनार्थ ही गानवाचक **गाय.** यह शब्द कह्यो अब गुणगान करत हें यह निरूपण कियो तातें जा के गुणगान करत हें सो साकारहे के निराकार हे यह निश्चय होत नांही. क्यों जो निराकार आकाश वायु हे तिनके हू वेदमें गुणनिरूपण किये हें या शंकाके निवारणार्थ कह्यो **गायश्रुति गुणरूप** अब गुणगान तो प्रथमतुकमें निरूपण कियो. अब तो रूपमात्र कह्यो चहिये तो हू

गुणरूप कह्यो ताको यह अभिप्राय जो लौकिकमें कितनेक पदार्थ ऐसे हें जो गुण आछो होत हे ओर रूप बुरो होत हे जेसे चंद्रमें आल्हादकत्व प्रकाशकत्वादि गुण आछे हें ओर रूपसों तो कलंकी हे ओर कस्तूरीमें सुगंधगुण अत्युत्तम हे परंतु रूप तो मृत्तिका जेसो श्याम होत हे तेसें इहां नही हे. श्रीमहाप्रभूनके तो जेसे गुण अलौकिक हें तेसो स्वरूप हू अलौकिक हे. यह सूचनार्थ ही फेर हूं गुण शब्द पूर्वक रूप कह्यो. अब गुणगान एकबिरीयां श्रुतिनने कियो होयगो यह शंकानिवारणार्थ अहर्निश यह कह्यो. यातें श्रीमद्प्रभूनके गुण निरूपण बिना क्षणमात्र हू श्रुति रहत नाहीं यह सूचन कियो. अथवा श्रीमहाप्रभूनके गुण रूप अनंत हें. रात्रदिवस वेदगान करत हें तो हू वाको पार पावत नांही. अब केवल गानमात्र ही नहीं करत हे परंतु अहर्निश ध्यान ओर विचार हू करत हें. अब अहर्निश या शब्दको मध्यमणिन्यायसों गुणरूपगान ओर ध्यान विचार यह दोनों आड़ीसम्बन्ध हे. शंका श्रुति तो अक्षरात्मक हे मूर्तिमंत नही तब इनको ध्यान विचार करनो केसें संभवे प्रत्युत्तर श्रुतीनको मूर्तिमंतपनो तो श्रीमद्भागवतमें वेदायथा मूर्तिधरास्त्रिपृष्ठे इत्यादि स्थलके विषें ओर बृहद्वामनादिक पुराणमें स्तुतोवेदैः परात्परः इत्यादि स्थलमें प्रसिद्ध हे ओर वेदनकी [४]आध्यात्मिक मूर्तिनको निरूपण तो लक्षण चरणव्यूहादिकनमें स्फुट हे. अब जा स्वरूपको श्रुति ध्यान विचार करत हे सो स्वरूप केसो हे ताके निरूपण करत हे. **आनंदरूप** जेसें लौकिक स्वरूप अस्थि चर्म निर्मित होत हे तेसें नहीं, आनंदमात्र स्वरूप हें सो वेदमें ब्रह्मोपनिषत्प्रभृतिमें निरूपण कियो हें. सो वेदमें पंचरात्रमें हू. [५]''निर्दोषपूर्णगुणविग्रहआत्मतंत्रो निश्चेतनात्मकशरीरगुणैश्च हीनः आनंदमात्रकरपादमुखोदरादिः सर्वत्र च त्रिविधभेदविर्वजितात्मा''. या श्लोकमें हू निरूपण कियो हे याहीतें **अनूप** उपमारहित क्यों जो उपमा तो सादृश्य बिना नहि होत हे. ओर आपके सदृश तो कोई कहुं नहीं हे तातें अनुपम ऐसें कह्यो तेसें ही अर्जुनने हु श्रीगीताजीमें ''नत्वत्समोस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यः''. या श्लोकमें कह्यो हे ओर श्वेताश्वतरादि उपनिषदनमें हू यह बात स्फुट हे अब ऐसो स्वरूप सुंदर हे के नहीं यह शंका निवारणार्थ कह्यो. **सुंदर** आप कोटिकंदर्प लावण्य हें सोही बृहद्वामन पुराणमें ।। [६]''कंदर्पकोटिलावण्ये त्वयि दृष्टेमनांसिनः''. या श्लोकमें श्रुतिननें निरूपण कियो हे. अब ऐसो वर्णन करिवेकों योग्य स्वरूप तो परिमित भयो यह शंका निवारणार्थ कह्यो. **पामेनहीकोयपार** कोई वेदादिक हु पार पावत नहीं हे. क्यों जो [७]वेदमें अक्षरब्रह्मके आनंद पर्यंत गणना कीनी हे ओर पुरुषोत्तम तो अगणितानंद कहे हें याहीतें पामे नहीं कोय पार यह कह्यो ।।२।।

४. दोषरहित संपूर्णशांतिज्ञानादिक जो गुण तेही हे स्वरूप जिनको ऐसे प्रभु हें ओर स्वतंत्र हे प्राकृतगुण ओर शरीर तिनते रहित हें ओर जिनके श्रीहस्त चरण मुख उदर इत्यादि सब अवयव आनंदरूप हे ओर जिनतें जडजीव अंतर्यामी कछु वस्तु जुदी नही हे या रीतते याश्लोकको अर्थ निबंधमें लिख्यो हे.

५. हे प्रभो दूसरो काई आपके सद्दश भी नहीं हे तब अधिक तो कहांते.
६. कोटि कामदेव जेसो लावण्ययुक्त आपको स्वरूप देखिके हमारे मन कामतें क्षोभ पावत हें ऐसे श्रुतिननें पुरुषोत्तमकों कह्यो हे.
७. ब्रह्मवल्ली उपनिषदमें.

संस्कृत टीका

३ प्राणपतिप्रागटयकारण

प्राणपतिप्रागटयकारण कांईएक कहुं मतिमंद ।।
हर सुर विधाता नवलहे साक्षात् ब्रह्मानंद ।।३।।

अब श्रीमहाप्रभूनको अलौकिक स्वरूप अनुभवपूर्वक निरूपण कियो तातें प्रेमलक्षणा भक्तिको हृदयमें उदय भयो तातें **प्राणपति.** ऐसें कह्यो. अब केवल पति नही कहे ओर प्राणपति कहे ताको कारण यह जो लौकिकमें किंचित् पोषणमात्र करत हे तातें सो पति कहावत हे. परंतु लौकिक पति सो यथार्थ नही क्यों जो आप सर्वदा सर्वत्र निर्भय होय ओर भयमात्रतें सर्व रीतसों रक्षा करे ताको नाम पति सो श्रीमद्‌भागवत पंचमस्कंधमें "सवैपतिः स्यादकुतोभयः स्वयंसमंततः पातिभयातुरंजनं या श्लोकमें ओर लौकिक पति प्राणकी रक्षा करी सकत नांहीं ओर श्रीमहाप्रभुजी तो जीवनकों मुक्त करिकें जन्ममरण भयरहित करत हें यातें प्राणपति यह विशेषण कह्यो. अब ऐसे जो श्रीवल्लभाचार्यजी तिनको प्राकटय जो प्रादुर्भाव ताको **कारण** जो प्रयोजन सो **कांईएक.** कछुक कहत हुं अब याको कारण यह जो **मतिमंद.** मेरी मति जो बुद्धि सो मंद हे थोड़ी हे याते सब कारण कहिवेकी मेरी शक्ति होय नहीं सकत हे ताको हेतु मतिमंद यह कह्यो तातें यह शंका उत्पन्न होत हें जो जाकी अधिक मति होय सो प्राकटयको कारण यथार्थ निरूपण करे ताहूको

निवारण करत हे हर. जो शिवजी ओर सुर. जो इंद्रादिकदेव ओर **विधाता.** जो ब्रह्माजी ये सब साक्षात् ब्रह्मानंदको अनुभव नहीं कर सकत हें. सोई श्रीभागवतमें [९]‘‘यतों प्राप्यनिवर्तंतेवाचश्चमनसासह अहंचान्यदिमेदेवास्तस्मैभगवतेनमः‘‘ या श्लोकमें कह्यो हे. ओर [१०]वेदमें हू ऐसो निरूपण कियो हे याको भावार्थ यह जो प्रभूनके साक्षात् स्वरूपको अनुभव ब्रह्मादिकनकों हू नांही तिनके प्राकटयको कारण निरूपण करे ऐसी जीवकी शक्तिल कहांसो ।।३।।

अब प्राकटयको कारण निरूपण करिवेको उपक्रम करत हें तहां पहिलें श्रीमहाप्रभूनको स्वरूप निरूपण करत हें.

८. जो आप कहिसूं भी भय न पावे ओर भयातुर अपने जनकी चारो आडीसुं रक्षा करे सो पति कह्यो जाय.

९. तृतीयस्कंध षष्ठाध्यायमें मैत्रेयनें कह्यो हे वाणी ओर मन जा भगवत्स्वरूपको प्राप्त न होयकें निवृत्त होत हे अर्थात् जो स्वरूप मनसूं विचार्यो नहि जाय ओर वाणीसुं कह्यो नहि जाय ओरमें तथा ये सब देवता जिनकों नहि पावत हें तिन भगवानकों हम प्रणाम करे हें.

१०. ब्रह्मवल्ली तृतीय मुण्डक ब्रह्मदारण्यक इत्यादि उपनिषदमें.

संस्कृत टीका

४ श्रीवृंदावन चंदमुखरुचि

श्रीवृंदावन चंदमुखरुचि अग्नि ते अवतार ।।
द्विजतिलक त्रिभुवन नाम निरुपम रूप अंगीकार ।।४।।

अब **श्री** जो शोभा ताकरिकें युक्त जो **वृंदावन** ताके विषें चंद्र जेसे ताको भावार्थ यह जो जेसें रात्रि चंद्रतें ही शोभत हे तेसें वृंदावनकी हू शोभा आपसों ही हे. अथवा श्री जो स्वामिन्यादिक तिनके वृंद. जे समूह तिने **अवन** सो पति तारूप **चंद्र** अथवा जो ब्रजसुंदरी तिनके वृंदके अवन सो अधिपति श्रीस्वामिन्यादिक तिनके चंद्र सो आनंददेवेवारे क्यों जो चदिधातु आह्लाद अर्थमें प्रवृत्त होत हे ताको चंद्र यह शब्द हे. अब ऐसे वृंदाबनचंद जे प्रभु तिनके मुखकी रुचि कांति ताकरिकें युक्त जो **अग्नि** सो भगवन्मुखारविंदके अधिष्ठाता अग्नि तिनके अवतार ऐसे कोन ते. सो श्रीवल्लभाचार्यजी अब मुखचंदकी रुचियुक्त अग्नि कहे ताको तात्पर्य यह जो लौकिक अग्नि तो सन्निधिसों ताप करत हे ओर ये अलौकिकाग्नि तो सन्निधिसों शीतलता करत हें दूर हे ताकों ताप करत हें यह सूचनार्थ श्रीवृंदावनचंद मुखरुचि अग्नि ते अवतार यह कह्यो. अब अग्निहे सो भगवन्मुखरूप हे यह निरूपण [११]वेदमें कियो हे ओर श्रीमद्भागवतमें हू. [१२]नाभिर्नभोग्निर्मुखमंबुरेतः इत्यादि स्थलके विषें निरूपण कियो हे. अब केसो स्वरूप धारण कियो सो निरूपण करत हें **द्विज.** जो ब्राह्मण तिनके **तिलक** सो शिरोमणि क्यों जो सब वर्णके शिरोमणि ब्राह्मण हें ओर तिनके शिरोमणि आचार्य हें यह श्रीमद्भागवतके एकादशस्कंधमें [१३]आचार्यमां विजानीयान्नावमन्येतकर्हिचित् नमर्त्यबुध्यासूयेतसर्वदेवमयोगुरुः या श्लोकमें प्रभूननें आज्ञा कीनी हे याहीते द्विजतिलक यह कह्यो. अब पुरुषोत्तमकों द्विजमात्रके ही तिलक कहें तातें न्यूनता आई ताको निवारण करत हें. **तिलकत्रिभुवन** केवल द्विजके ही तिलक नांही त्रिभुवनके हू आप तिकल हें. अब इहां तिलक शब्दको देहली दीपक न्यायतें द्विज शब्दसों ओर त्रिभुवन शब्दसों सम्बन्ध हे. ओर आपनें कहा कियो सो कहत हें. **नाम निरुपमरूप** सो जाकों उपमा नहि ऐसे अंगीकार किये हें केसें जो लौकिकमें जेसो नाम होत हे तेसो रूप नांही होत हें ओर गुण हू नाहीं होत हे. ओर श्रीमहाप्रभुनको तो नाम श्रीवल्लभ हे ताको अर्थ यह जो श्री शोभा ताकरिकें युक्त ऐसे वल्लभ सो प्रिय अब आप कोटिचंद्र जेसे सुंदर हे ओर गुणनकरिकें तो वागधीश हें क्यों जो आप भगवन्मुखारविंदाधिष्ठातृ अग्नि हे अब ऐसो नाम ओर रूप लौकिक पदार्थको होत नांही तातें नामनिरुपमरूप अंगीकार ऐसें कह्यो. अथवा **द्विज.** जो चंद्र ताके **तिलक.** सो वंदनीय क्यों जो प्रथम श्रीकृष्णावतार धारण करिकें वाको कुल पावन कियो याहीतें श्रीमद्भागवत नवम स्कंधमें श्रीशुकदेवजीनें [१४] वंशःसोमस्यपावनः ऐसें कह्यो ओर अब चंद्रकी प्रजा जो ब्राह्मण तिनको कुल पावन कियो येही अभिप्रायसों द्विजतिलक यह कह्यो. ओर ब्राह्मण चंद्रकी प्रजा हें सो तो [१५]वेदमें निरूपण कियो हे ओर श्रीमद्भागवतमें हू. [१६]विप्रौषध्युडुगणा नांचब्रह्मणाकल्पितः पतिः या श्लोकमें कह्यो हे ओर आप केसे हें **त्रिभुवननाम.** त्रिभुवनमें नाम सो कीर्ति हे जिनकी ताको अंगीकार कियो हे. नहिं तो लौकिकरूप वारेको तीन लोकमें नाम कहांसो होय याहीतें द्विजतिलक त्रिभुवननाम निरुपमरूप अंगीकार यह कह्यो अथवा. द्विज जो ब्राह्मण तिनके तिलक सो मूल कारण क्यों जो आप भगवन्मुखारविंद हें ओर ब्राह्मणकी उत्पत्ति

भगवन्मुखारविंदतें हें सोई [१७]वेदमें निरूपण कियो हे. ओर श्रीमद्भागवत द्वितीयस्कंधमें [१८]पुरुषस्यमुखंब्रह्म. या श्लोकमें वर्णन कियो हे याहीतें द्विजतिलक यह कह्यो. अब या रीतसों तो आपकों भगवन्मुखारविंद रूपत्व आयो तासों आप पूर्णपुरुषोत्तम न होयंगे या शंकाको निवारण करत हें **त्रिभुवननाम.** तीनों ही भुवनमें जिनके नाम हें. याको आशय यह जो तीनों लोकमें जितने नाम हें सो आपके ही हें ओर पार्थमें तो केवल व्यवहारार्थ नामकी प्रवृत्ति हे सो हू महाकूर्म पुराणमें कह्यो हे. [१९]सर्वेषांतदधीनत्वात्तत्तच्छब्दा भिधेयता अन्येषांव्यवहारार्थमिष्यतेव्यहर्तृभिः या श्लोकमें याको फलितार्था यह जो पुरुषोत्तम ही सर्वशब्दवाच्य हें यातें जो शंका कीनी ताको निवारण कियो. अब स्थानोत्कर्ष ओर नामोत्कर्ष निरूपण करिकें स्वरूपतोत्कर्षनिरूपण करत हें. निरुपमरूप अंगीकार अब लौकिकमें रूप जो देह ताको अंगीकार जो धारण करनो सो गर्भसम्बन्धसों हे सोई श्रीमद्भागवत तृतीय स्कंधमें कपिलदेवजीनें [२०]स्त्रियाःप्रविष्टः उदरंपुंसोरेतः कणाश्रयः या श्लोकमें निरूपण कियो हे ओर आप तो अग्निकुण्ड सों प्रकट भये हें सोई श्रीद्वारिकेशजीनें मूलपुरुषमें अग्निचहुंधामध्यबालक यह निरूपण कियो हे याही अभिप्रायसों निरुपमरूप अंगीकार यह कह्यो शंका श्रीवल्लभाचार्यजी भगवन्मुखारविंदाधिष्ठातृ अग्निको अवतार हें यामें कहा प्रमाण **प्रत्युत्तर.** अग्निपुराणमें भविष्योत्तर खण्डके विषें [२१]अग्निरूपोद्विजाचारोभविष्यामीहभूतले वल्लभोह्यग्निरूपः स्याद्विटठलः पुरुषोत्तमः या श्लोकमें प्रभूननें आज्ञा कीनी हे. सोई श्रीसुबोधिनीजीके प्रारंभ में अर्थ तस्यविवेचितुं या श्लोकमें तथा व्याससूत्रके द्वितीयाध्यायके द्वितीयपादके छबीसमें सूत्रके भाष्यमें हु महाप्रभुननें आपको अग्निरूपत्व स्फुट निरूपण कियो ।।४।।

अब अलौकिक रूपसों प्रकट भय ताके चिह्ननको सूचन करत भये. प्राकटयके समयके आनंदको वर्णन करत हें.

११. पुरुषसूक्तादि स्थलमें.

१२. आकाश प्रभुनकी नाभि हे ओर अग्नि हे सो मुख हें ओर जल हे सो वीर्य हे.

१३. भगवानने आज्ञा कीनी हें जो आचार्यनकों मेरो स्वरूप जानने ओर कभी हू विनको अपमान न करनो ओर विनपें मनुष्य बुद्धि लायकें ईर्ष्या न करनी क्यों जो गुरु हे सो सर्व देवतारूप हे.

१४. चंद्रको वंश श्रोतानकों पवित्र करनहार हे.

१५. तैत्तिरीय संहिताके अष्टम प्रपाटकके दशमानुवाकमें सोम हमारो ब्राह्मणको राजा हे ऐसे लिख्यो हे ओर तैत्तिरीय ब्राह्मणमें हू याही रीतसुं लिख्यो

हे.

१६. ब्रह्माजीनें चंद्रमाकों ब्राह्मण औषधी नक्षत्रगण इन सबनको पति कियो हे.

१७. पुरुषसूक्तादिकनमे.

१८. ब्राह्मण प्रभुनके मुखरूप हें.

१९. यद्यपि सब शब्द भगवद्वाचक ही हें तथापि सब पदार्थ भगवानके आधीन हें भगवानमेंसू उत्पन्न होत हें ताहीतें भगवत्कृत संकेतानुसारतें वे वे शब्द वा वा पदार्थमें प्रवृत्त होत हें ओर एकेक पदार्थके जुदे जुदे नाम न होय तो व्यवहार न चले तातें व्यवहारार्थ नामरूपविभाग हे याहीको नामरूप व्याकरण कहत हें सो वेदमें श्वेतकेतु विद्यप्रभृति स्थलमें स्फुट हे ओर वेदांतिचिंतामणिमें मेनेहु निरूपण कियो हे.

२०. पुरुष वीर्यबिंदुको आश्रय करिके जीव स्त्रीके नर्भमें जात हे.

२१. में अग्निस्वरूपसों ब्राह्मण्यके अनुसार यथार्थ आचरण करनहार अवतार भूतलपे लउंगो याहीतें श्रीमहाप्रभु ओर श्रीगुसांईजी साक्षात् अग्निरूप हें ओर पुरुषोत्तम हें.

संस्कृत टीका

५ देवलोक दुंदुभि

देवलोक दुंदुभि वाजिया आनंद करे रे निसंक ।।
असुरतिमिर उछेदवा भुवि वल्लभदेव मयंक ।।५।।

देवलोकदुंदुभिवाजिया अब देवलोकमें देवताननें दुंदुभि बजाये इहां दुंदुभि शब्द तो उपलक्षणमात्र हे यातें सब वाद्य देवताननें बजाये अब देवलोक कह्यो ताको कारण यह जो दिवु धातुतें देव यह शब्द होत हे सो दिवु धातु दश अर्थमें प्रवृत्त होत हे तामेंसों नव अर्थ सूचन करिवेकों देवलोक कह्यो सोई स्फुट करत हें. दिवु धातु क्रीडा, विजीगीषा, व्यवहार, द्युति, स्तुति, मोद, मद, स्वप्न, कांति, गति, इतने अर्थमें प्रवृत्त होत हे. अब आपको प्राकटय भयो तातें आनंदसो नृत्यादि क्रीड़ा करत हें. ओर असुरनकों जीतिवेकी इच्छासों रहित हते सो अब आपको प्राकटय भयो तासों फेर असुरनकों जितिवेकी इच्छा भई. ओर आसुरनके प्राबल्यसों यज्ञादिकनके व्यवहार सब बंद हते सो हू प्रवृत्त भये. ओर आपकी स्तुति करत भये ओर आपके प्रागटयसों मोद जो आनंद ताकरिकें युक्त भये. ओर श्रीवल्लभाचार्यजी जेसे हमारे धनी प्रकट भये अब हम जेसो धन्य कोन हे या मदसों युक्त भये. ओर असुरनके प्राबल्यसों द्युति जो शोभा ताकरिकें हीन होय रहे हते सो आपके प्राकटयतें पाछे शोभायुक्त भये. ओर आपके दर्शनकी कांति जो इच्छा ताकरिकें युक्त भये. ओर भूतलके विषें गतिहीन भये हते सो अब आपके प्राकटय मात्रसों गतियुक्त भये ओर स्वप्न या अर्थको तो देवतानमें संभव ही नहीं क्यों जो [२२]अस्वप्न ऐसो उनको नाम हे तातें दिवु धातुके नव अर्थ सूचनार्थ ही देवलोक यह कह्यो. अब याको फलितार्थ यह जो जासमें चंपकारण्यमें आप प्रकट भये तासमें कोई हू मनुष्य नहीं हतो केवल देवतानकों ही प्रादुर्भावके दर्शन भये तातें देवलोक दुंदुभि वाजिया यह कह्यो अथवा श्रीकृष्णको प्रादुर्भाव वसुदेवजीके घर होनहार हतो तासों वसुदेवजीके जन्मसमें देव दुंदुभि [२३]बजे तेसें श्रीमहाप्रभूनके घर हू श्रीविटठलनाथजी रूपसो प्रकटेंगे यह सूचन करिवेकों देवलोक दुंदुभि वाजिया यह कह्यो. अब या रीतसों तो पूर्णपुरुषोत्तम जो श्रीमहाप्रभुजी तिनकों वसुदेवजीकी तुल्यता भई ताको निवारण करत हें. **आनंदकरेरेनिसंक** निःशंक सो भयरहित होयकें आनंद करत हें. अब वसुदेवजीको जन्म भयो तब यद्यपि देव दुंदुभि बजे तथापि भयनिवृत्ति नहीं भई. ओर आपके तो प्राकटय मात्रासों ही भयनिवृत्तिपूर्वक आनंद भयो यह पुरुषोत्तमके प्राकटयको चिह्न हे अब याको फलितार्थ यह जो आप पूर्णपुरुषोत्तम हें ओर श्रीविटठलनाथजी हु पूर्णपुरुषोत्तम हे यातें दोउ स्वरूप एकहि हें. अब आनंदयुक्त भये ऐसेल नहीं कह्यो ओर आनंद करे ऐसे कह्यो ताको अभिप्राय यह जो जय जय ऐसे शब्द करत भये. तथा पुष्पकी वृष्टि करत भये अब आनंद को करत भये. ताको नाम नही कह्यो तातें यह सूचन कियो जो तीन लोकमें सब दैवीजीव आनंद करत भये. अब सब आनंद करत भये ताको हेतु कहत हें. **असुरतिमिरउछेदवा** असुर तो प्रथमाख्यानमें जिनको निरूपण कियो ते आसुरी सृष्टिके जीव तिनको जो पाखण्डरूप तिमिर ताको उच्छेदवा नाशकरिवेकों **भुवि.** सो भूतलके विषें आप **मयंक** सो मृगांक चंद्र हें सो कोन **वल्लभदेव.** सो श्रीवल्लभ जिनको नाम हे. ओर देव सो पुरुषोत्तम अथवा असुरतिमिरको नाश कियो ताको हेतु यह जो **वल्लभदेव** वल्लभ सो प्रिय हें देव सो दैवीजीव जिनकों ते वल्लभदेव याको फलितार्थ यह

जो आपकों दैवजीव प्रिय हें तातें उनके उद्धारार्थ ही आपनें असुरतिमिरकों नाश कियो. अब अधिकतिमिर नाशकत्व तो सूर्यकों हे. तथापि आपकों मयंक कहे ताको अभिप्राय यह जो सूर्य यद्यपि तिमिर मिटावत हे तथापि तापकर्ता हे. ओर आप तो असुरतिमिरको नाश करत हें ओर दैवी जीवनकों शीतल करत हें. इत्यादिक अनेक अभिप्रायसों मयंक आपकों कहे अथवा भगवन्मनोरूपत्व सूचन करिवेकों मयंक आपको कहे. याहींते सर्वोत्तमजीमें. [२४]श्रीकृष्णहार्दवित् यह आपको नाम हे. ओर चंद्रको भगवन्मनोरूपत्व तो प्रथम ही निरूपण कियो हे ।।५।।

अब प्राकटयको निरूपण करिकें प्रकट होयकें जो कार्य कियो सो निरूपण करत हें ।।

२२. देवतानको स्वप्न सो निद्रा नही हे तातें वे अस्वप्न कहे जात हें याहीतें आदित्याऋभवोऽस्वप्ना ऐसो अमरकोशमें कह्यो हे.

२३. वसुदेवजीके जन्मसमें देवतानमें दुंदुभि बजाये याहीतें वसुदेवजीको नाम आनक दुंदुभि ऐसो हे यह बात नवमस्कंधके चोबीसमें अध्यायमें देवदुंदुभयोनेदुरानका यस्यजन्मनि वसुदेवंहरेःस्थानंवदंत्यानकदुंदुभिः या श्लोकमें.

२४. श्रीकृष्णके मनकी बात जानिवेवारे आप हे.

संस्कृत टीका

६ पूरण पुरुष प्रमाणपंथा

पूरण पुरुष प्रमाणपंथा व्याख्याता वेदांत ।।

ग्रंथ सर्वे रसरूप कीधा पोताने सिद्धांत ।।६।।

पूरणपुरुष पूरण जो अक्षरब्रह्म ओर पुरुष जो पुरुषोत्तम ताको **प्रमाण** जो वेद ताको **पंथ** सो [२५]मार्गरूप ऐसो जो [२६]**वेदां** सो तत्वसूत्र जाकों व्याससूत्र कहत हें ताके **व्याख्याता** सो भाष्यकरिवेवारे ताहीतें सर्वोत्तमजीमें [२७]तत्वसूत्रभाष्यप्रदर्शनः यह आपको नाम हे. अब पूर्णशब्द अक्षरब्रह्मवाचक ओर पुरुष शब्द परब्रह्मवाचक हे यह तो कठवल्यादिकनमें निरूपण कियो हे. अथवा पूरणपुरुष जो परब्रह्म ताकों प्रमाणभूत जो कर्ममार्ग ताके व्याख्याता सो भक्तिको ओर ज्ञानको साधनरूप मानिकें प्रवृत्तिकर्ता याहीतें [२८]कर्ममार्गप्रवर्तकः [२९]यागादौभक्तिमार्गैकसाधन त्वोपदेशकः ये दोई नाम सर्वोत्तमजीमें आपके हें. ओर प्रमेयस्वरूपको जामें निरूपण हे ऐसो जो वेदांत ताके हू व्याख्याता व्याख्यान करिवेवारे इहां व्याख्याता या शब्द मध्यमणिन्यायसों प्रमाणपंथा ओर वेदांत ये दोई शब्दनसों सम्बन्ध हे शंका. कर्ममार्गपरब्रह्मको प्रमाणभूत केसें हे वामें तो कर्मको निरूपण हे प्रत्युत्तर. कर्म कियेसो कछु हू अपूर्वफल होत हे परंतु दाता बिना फल कहांतें मिले तातें जो कोई फलको दाता सोइ परब्रह्म यह [३०]व्याससूत्रमें स्फुट हे. या रीतसों कर्मद्वार ब्रह्मको ज्ञान होत हे तातें कर्म परब्रह्मको प्रमाणभूत हे ओर वेदांतमें तो केवल प्रमेय स्वरूपको ही निरूपण हे. अब याको फलितार्थ यह जो कर्ममार्गमें कर्मफलदातापनें सों ब्रह्मस्वरूपको बोध होत हे. ओर वेदांतमें साक्षात् स्वरूपको ही बोध होत हे या रीतको जो विचारपूर्वक श्रीकृष्ण सम्बन्धिज्ञान सो जीवकों आप देत हें. याहीतें श्रीकृष्णज्ञानदः. यह सर्वोत्तमजीमें आपको नाम हे शंका. प्रथम तो कर्ममार्ग द्वारा ओर वेदांतमार्गद्वारा परब्रह्मको ज्ञान होत हे यह निरूपण मूलमें कियो. ओर वेदशास्त्रको हू येही सिद्धांत हे तथापि फलितार्थमें श्रीकृष्णको ज्ञान ऐसें कह्यो ताको कहा कारण प्रत्युत्तर. परब्रह्म सोई श्रीकृष्ण यह [३१]वेदमें हू निरूपण कियो हे. ओर हरिवंश कृष्णजन्म खण्डादिकमें हू निरूपण कियो हे तातें श्रीकृष्णको ज्ञान कह्यो सो युक्त हे शंका या रीतसों तो वेदांत मुख्य भयो ओर कर्म गौण भयो तब प्रथम कर्ममार्ग क्यों कह्यो ओर पाछे वेदांत क्यों कह्यो प्रत्युत्तर. प्रथम सामान्य ज्ञान होय पीछें विशेषज्ञान होय तासों प्रथम कर्मद्वारा ब्रह्म हें ऐसें जाने फेर वेदोंद्वारा वाकों यथार्थ ब्रह्मस्वरूपको ज्ञान होय तातें प्रथम कर्ममार्ग कह्यो. अब व्याख्याग्रंथके आप कर्ता हें यह निरूपण करिकें ओर मूलग्रंथके हू कर्ता आप हें यह निरूपण करत हें. ग्रंथसर्वेरसरूपकीधा रसरूप इतने रस जो वेदोक्त आनंदमय प्रभु तिनको रूप सो निरूपण जिननमें हे ऐसे अथवा ब्रह्मवल्युक्त रीतिसों रस सो आनंदात्मक पुरुषोत्तम तथा उनको भक्तिरस इन दोउनके रूप सो निरूपण करनहारे ऐसे सब ग्रंथ आपनें किये अथवा. रसरूप सो साक्षात् भगवद्रूप सब ग्रंथ आपनें किये हें याहीतें श्रीयमुनाष्टकादिसर्वग्रंथनको एक एक भगवदवयवरूपत्व श्रीहरिरायजीनें निरूपण कियो हे तासों **ग्रंथ सर्वेरसरूप कीधा** यह कह्यो अब ये सब ग्रंथ कोनके सिद्धांतको अवलंबन करिकें किये सो निरूपण करत हें पोताने सिद्धांत. आपको जो सिद्धांत

शुद्धाद्वैतसिद्धांत तदनुसार सब ग्रंथ किये अब शुद्धाद्वैत सों यह जो मायोपाधिविना कार्यकारणभाव होयके हू प्रपंचको ब्रह्मके संग अभेद याको फलितार्थ यह जो सब ग्रंथ करिके [३२]शुद्धाद्वैत ज्ञान सहित पुष्टि-[३३]भक्तिमार्ग आपने प्रवृत्त कियो याहीतें भक्तिमार्गे सर्वमार्ग वैलक्षण्यानुभूतिकृत् ये सर्वोत्तमजीमें आपको नाम हे शंका. टीकाग्रंथ करनो तो गौणकार्य हे ओर मूलग्रंथ करनो तो मुख्यकार्य हे तो हू टीकाग्रंथकर्तृत्व प्रथम निरूपण क्यों कियो प्रत्युत्तर. टीकाग्रंथ जो व्याससूत्रको भाष्य सो किये बिना आचार्य पदवी नहीं मिले तातें आप पुष्टिपथाचार्य हें यह सूचनार्थ ही प्रथम टीकाग्रंथ कर्तृत्व आपको निरूपण कियो याहीतें सर्वोत्तमजीमें [३४]भक्तिमार्गाब्जमांर्त्तडः यह आपको नाम हे ॥६॥

अब ज्ञानकार्य निरूपण करिकें यशको निरूपण करत हें.

२५. वेदार्थनिश्चयकी प्राप्तिको साधन.

२६. वेदांत ऐसो उपनिषदनको नाम हे जो उपनिषद हें सो वेदके अंत इतने शिरोभागरूप हें ओर उपनिषद्विचारक व्याससूत्रनकों हू वेदांत कहत हें अथवा वेदको अंत सो निश्चय जा शास्त्रमें होय ताकूं वेदांत कहिये ओर वेदार्थ निश्चयके कारण तो व्याससूत्रही हें तातें व्याससूत्रको वेदांत कहत हें.

२७. व्याससूत्रके अलौकिक भाष्यकों प्रकट करिकें या लोकमें दिखावनहारे श्रीमहाप्रभुजी हें.

२८. कर्ममार्गके प्रवर्तक श्रीमहाप्रभुजी हें क्यों जो श्रोतस्मातं नित्यकर्म जेसें बने तेसे सर्वथा वैष्णवनकें छोडनो नहि ऐसो आपको सिद्धांत हे.

२९. यज्ञादिक जे वैदिककर्म हें ते भक्तिमार्गको मुख्य साधन हें ऐसें श्रीमहाप्रभूनने निबंधादिक ग्रंथनमें आज्ञा कीनी हे.

३०. तृतीयाध्यायके २ पादके ३८ सूत्रमें.

३१. तापनीयश्रुतिमें कृष ऐसो सदंशको नाम हे ओर ण ऐसो आनंदको नाम हे तातें कृष्ण ऐसी सदानंदपरब्रह्मको नाम हे ऐसों कह्यो हे.

३२. शुद्धाद्वैत यथार्थस्वरूप निरूपण सविस्तर मेनें वेदांत चिंतामणि प्रभृतीनमें कियो हे सो तहां देखनो.

३३. भक्तिमार्गमें सर्वमार्गनतें विलक्षणताको अनुभव करायवेवारे श्रीमहाप्रभुजी हें.

३४. भक्तिमार्गरूपकमलके विकास करिवेवारे सूर्य आप हें.

संस्कृत टीका

७ रसिकरसना रसिकवाणी

रसिकरसना रसिकवाणी जाणी नर नवखण्ड ।
ऊर्ध्वपंथा सुजस पसर्यो वाधियो ब्रह्माण्ड ।।७।।

रसिक सो रसभोक्ता प्रभु तिनकी **रसना** सो वेदरूप वाणी ताके रसकरिकें युक्त सो **रसिक** ऐसी जो भाष्यसुबोधिन्यादिरूप **वाणी** सो नवखण्डात्मक जो पृथ्वी ताके विषें सब **नर** जो मनुष्य तिननें **जाणी** सो जानी अब नवखण्डात्मक पृथ्वी कही सप्तद्वीपात्मक नहीं कही ताको कारण तो प्रथमाख्यानके व्याख्यानमें लिख्यो हे ओर **सरवेनवखण्ड** ऐसो हू पाठ हे ताको अर्थ ओर टीकानमें लिख्यो हे अथवा वह वाणी केसी हे **नवखण्ड** नव सो नवीन उत्पन्न भये ऐसे जो मायावादादिमत तिनकी खण्ड सो खण्डन करनहारी शंका प्रथम तो प्रभूनकों रसरूप कहे ओर अब रसभोक्ता केसें कहे प्रत्युत्तर ब्रह्म तो विरुद्धधर्माश्रय हे ओर ब्रह्मतें जुदो कछुबी हे नहीं यातें रस हू ब्रह्म हे ओर रसभोक्ता हू ब्रह्म हे यह अभिप्राय कठवल्ली बृहन्नारायण भृगुवल्लयादिक उपनिषदनमें निरूपण कियो हे ओर श्रीमद्भागवतमें हू षष्ठस्कंधमें [३५]नहिविरोधउभयंभगवत्यपरिगणितगुणगणईश्वरेऽनवगाह्य माहात्म्ये या गद्यमें निरूपण कियो हे यातें रसिक यह कह्यो सो युक्त हे अथवा **रसिक** जो प्रभु तिनकी [३६]रसना सो [३७]कृष्णप्रेमामृत रसभरित जो श्रीमहाप्रभुजी तिनकी वाणी अथवा रस जो प्रभु तिनके भोक्ता [३८]संगलीलानुभव करनहारे सो रसिक जो भक्त तिनकी **रसना** जो जिव्हा ताद्वारा रसिकवाणी जो श्रीसुबोधिन्यादिक तिनको नवखण्डके विषें सब मनुष्यनमें जानी अब याको फलितार्थ यह जो आपको यश भक्तनके मुखद्वारा सब पृथ्वीमें फेल्यो अब भूमिके विषे आपको यश फेल्यो यह कछू अधिक बात नहीं हे तातें हू यश अधिक हे सो निरूपण करत हे. **ऊर्ध्वपंथासुजसपसर्यो** ऊर्ध्व सो आकाशमें हे पंथ सो मार्ग जिनको ऐसे जे स्वर्गादिक सब

लोक तहांतांई आपको सुजस पसर्यो सो फेल्यो अब केवल यश नहिं कह्यो ओर सुजस कह्यो ताको अभिप्राय यह जो ओरको यश तो कालांतरकरिके क्षीण होत हे ओर आपको यश तो अनंत हे. ओर सुजस थयो ऐसें नहीं कह्यो ओर पसर्यो यह कह्यो ताको अभिप्राय यह जो नवीन यश होय तो थयो ऐसें कहें परंतु आपको यश तो अनादि वेदवर्णित हे तातें अनादिसिद्ध हे. अभी तो याको प्रसार मात्र भयो याको फलितार्थ यह जो आपको यश नित्य हे.नित्यसो जाको आदि हू न होय ओर अंत हू न होय तेसो आपको यश हे याहीतें ऊर्ध्वपंथासुजसपसर्यो यह कह्यो शंका श्रीवल्लभाचार्यजीको वर्णन कहूं वेदमें नहीं हे तो हू वेदवर्णित यश कह्यो ताको कारण कहा प्रत्युत्तर श्रीवल्लभाचार्यजी भगवन्मुखारविंदधिष्ठाता अग्निस्वरूप हें यह तो प्रथम प्रतिपादन कियो हे तातें वेदमें जहां जहां भगवन्मुखारविंदको ओर अग्निको वर्णन हे सो सब श्रीमहाप्रभूनको वर्णन हे अथवा जेसें लौकिकमें देह भिन्न ओर देहाभिमानी जीव भिन्न तेसें कछू प्रभूनके श्रीअंगमें नहीं हे ओर जेसें चरण अधम अंग ओर मस्तक उत्तम अंग तेसें उत्तमाधम भाव हू प्रभूनके श्रीअंगमें नहीं हे भगवदंग तो सब भगवद्रूप हें सो [३९]वेदमें निरूपण कियो हे. ताते श्रीमहाप्रभुजी भगवन्मुखारविंद सो भगवद्रूप हें तातें सब वेदादिकमें वर्णन आपको ही हे याहीतें हरिवंशमें [४०]वेदोरामायणे चैव पुराणेभारतेतथा. 'आदावंते च मध्ये च हरिः' सर्वत्रगीयते यह कह्यो हे ओर श्रीमहाप्रभूनके प्रतिपादक अनेक श्रुतिवाक्य हू श्रुतिरहस्यादिकग्रंथनमें लिखे हें यातें वेदवर्णित हमनें कह्यो सो युक्त हे. अब पृथ्वीसों लेकें उपरके सब लोकमें आपको यश फेल्यो परंतु सात अधो लोकमें यश नहीं फेल्यो होयगो या शंकाको निवारण करत हें. **वाधियोब्रह्माण्ड** सब ब्रह्माण्ड पर्यंत यश बढयो यातें सात नीचेंके लोक हू आय गये अब प्रथम ऊर्ध्व लोकनमें सुजस फेल्यो यह सूचन कियो ओर पाछे अधोलोकमें सूचन कियो ताको अभिप्राय यह जो ऊर्ध्वलोकतो सब अंतरिक्षमें हें उनके आडो कच्छू व्यवधान नाहीं हे तातें प्राकटय भयो तबसो ही पूर्णावतारके सब चरित्रके ऊर्ध्वलोकवासिनकों दर्शन भये यातें प्रथम सुजस उहां फेल्यो ओर अधोलोकमें शेषादिकनकों तो जब पाखण्डमतको खण्डन करिकें पृथ्वीको भार न्यून कियो ओर चरणारविंदके स्पर्शसों पृथ्वीकों शीतल करी तब आपके चरित्रको अनुभव भयो यातें अधोलोकमें पीछें यश फेल्यो यह सूचन कियो. अथवा श्रीमहाप्रभुजी अग्निरूप हें ओर पृथ्वी गंधवती हे तातें इन दोनोंनके संगसों यश फेल्यो सो सुगंधधूमरूप हे यह सूचनार्थ प्रथम ऊर्ध्वलोकमें सुजस फेल्यो यह कह्यो. अब जेसे सुगंधयुक्त धूम हे सो ओरकों लगत हे ताकों हू सुगंधयुक्त करत हे तेसें आपके हू यशको जो गान करे ताको हू यश होत हे ओर धूम जेसें प्रथम ऊंचो जात हे फेर अधिक होत हे तब नीचे फेलत हे तेसें सुजस हू ऊर्ध्व लोकमें फेलकें अधोलोकमें फेल्यो ओर जेसें चंदनादि सुगंध पदार्थको अग्निसों संयोग होत हे तब सबनको सुगंध सुख अग्नि देत हे. ओर वा सुगंध पदार्थकों आपरूप करत हे तेसें श्रीमहाप्रभूननें हू पृथ्वीकों आपके चरणको स्पर्श करायकें स्वलीलोपयोगी आपरूप करी ओर पृथ्वीमें पधारे पीछें अब यशरूपी सुगंधसुख सबनकों देत हें इत्यादिक अनेक अभिप्राय सूचन करिवेको प्रथम ऊर्ध्वलोकमें सुजसको प्रसार सूचन कियो. ओर यशकी सुगंधरूपता तो वेदमें [४१]निरूपण

कीनी हे ।।७।।

अब श्रीमहाप्रभुजी तो पूर्णपुरुषोत्तम हें सो आपके तो एक एक रोमरंध्रमें अनेक ब्रह्माण्ड फिरत हें सो श्रीमद्‌भागवत दशमस्कंध पूर्वार्धमें ब्रह्मस्तुतिमें [42] कवेदृग्विधाविगणिताताण्ड पराणुचर्यावाताध्वरोमविवरस्यचतेमहित्वम् तथा उत्तरार्द्धमें हू वेदस्तुतिके अध्यायमें [43]खे इव रजांसि वांति या श्लोकमें निरूपण कियो हे तथा ओर हू अनेक स्थलमें निरूपण कियो हे तातें एक ब्रह्माण्डमें आपको यश फेल्यो यह कछू अधिक नहीं हे यातें ओर हू अधिक निरूपण करत हें.

३५. अगणित हें गुणसमूह जिनके ऐसे ओर अत्यंत दुर्ज्ञेय हे माहात्म्य जिनको ऐसे जे सब समर्थ भगवान् तिनके विषें शीतलोष्णत्वादिक दोई तरहके धर्म विरुद्ध होत नाहीं.

३६. रसना शब्द बाहुलकसिद्धकरणार्थ कचच्प्रत्ययांत हे ताको इहां केवल यौगिक अर्थ लियो हे.

३७. श्रीमहाप्रभूनको स्वरूप भगवत्प्रेमरूप अमृत रससों भरित हे सोही सप्तश्लोकीमें श्रीगुसांईजीने निरूपण कियो हे.

३८. अब हू भगवदनुग्रहसों जीव प्रभुनके संग लीलानुभव करत हें सो ब्रह्मवल्ली प्रभृतिनमें निरूपण कियो हें.

३९. बृहदारण्यकादि उपनिषदमें ऐसें लोनको ढेर बाहेर भीतरसूं सगरो रससमूहरूप होय तेसें भगवत्स्वरूप बाहेर भीतरसूं सगरो प्रज्ञानघनहे ऐसें कह्यो हे.

४०. वेद, रामायण, पुराण, भारत इन सबनमें आरंभमें समाप्तिमें ओर बीचमें सब जग्गे केवल भगवानको ही गुणगान कियो हे.

४१. तैत्तिरीयशाखाके नारायणोपनिषदमें. जेसें आछीरीत पुष्पयुक्तवृक्षको दूरसूं सुगंध आवे हे तेसें पुण्यकर्मको हू सुगंध दूरसुं आवे हे ऐसे कह्यो हे.

४२. हे प्रभु ऐसे अगणित ब्रह्मांण्डरूप परमाणनके उडिवेके लिये गवाखारूप जिनके रोमरंध्र हें ऐसे जो आप तिनको महिमा कहां ओर में कहां ऐसें ब्रह्माजीनें बीनती करी हे.

४३. जेसें आकाशमें सूक्ष्म रज सदा उडयो करे हे तेसे प्रभुनके स्वरूपके भीतर अनेक ब्रह्मांड उडयो करे हें.

संस्कृत टीका

८ एक ब्रह्माण्डे जेना

एक ब्रह्माण्डे जेना जस न माया तेना हुवां कोटि अनंत ।
तोऐ त्यांथकी वाधियो जई वस्यो मुख धीमंत ।।८।।

अब **जेना** सो जिन श्रीमहाप्रभुनके यश **एकब्रह्माण्डे** एक ब्रह्माण्डके विषें **नमाया** नही समाये **तेना** तिनके सों यशके **कोटिअनंत** कोटि जो सो लक्ष सो हू एक दो नही **अनंत** जिनको पार नांहीं. इतने अनंतकोटी ब्रह्माण्ड आपके यशकी स्थितिके अर्थ भये अथवा. अनंत जो आकाश ते कोटिसङ्ख्यांक भये याको फलितार्थ यह जो एकब्रह्माण्डमें एक ही आकाश होत हे तातें अनेक आकाश कहे. ते सब आपके यशके पात्र भये यह सूचन कियो शंका. ब्रह्माण्डमें तो अनेक पदार्थ हें तो हू आकाशकों अनंत कह्यो ताको कहा कारण प्रत्युत्तर शब्द आकाशको गुण हे ओर शब्द द्वारा ही यश प्रकट होत हे तातें कोटिअनंत यह कह्यो ताको कारण यह जो आकाश अनंत हे ते हू अनंतसङ्ख्याक भये तो हू आपके यशको अंत आयो नांहीं. अब सब स्वरोमविवरस्थब्रह्माण्डमें आपको यश बढयो ये हू कछू अधिक बात नांहीं क्यों जो आप तो पुरुषोत्तम हें तातें आपके श्रीअंगमें ही आपको यश रह्यो तामें अधिकता कहा भयी तातें ओर हू अधिक हे सोई स्फुट करत हें **तो एत्यांथकीवाधियो.** अनंत आकाश यशकें पात्र भये तोय तो हू त्यांहांथकी सो अनंतब्रह्माण्डतें यश वाधियो बढयो सो कहां रह्यो सो कहत हें **जइवस्यो मुखधीमंता.** [४४]धीमंत जो अलौकिक हे धी सोबुद्धिजिनकी ऐसे जे लीलास्थ भक्त तिनके मुखमें जायके यश बस्यो. याको फलितार्थ यह जो लौकिकमें अलौकिकमें सब ठिकानें आपको यश फेल्यो शंका. ओर टीकाकारने तो धीमंत जो व्यासादिक ऐसो अर्थ कियो हे ओर युक्त हू ऐसें ही दीखत हें क्यों जो पुराणादिकनमें आपको वर्णन हे तथापि तुम लीलास्थ भक्त यह अर्थ काहेको करत हो **प्रत्युत्तर** यद्यपि व्यासादिक धीमंत हें ओर पुराणादिकनमें श्रीमहाप्रभुको वर्णन हू कियो हे तथापि यह सब ब्रह्माण्डके भीतर हे ओर मूलमें तो तोए त्यांथकी वाधियों ऐसें कह्यो हे. यातें ब्रह्माण्डतें बाहिर कछू चहिये सो बाहिर तो गोलोक हे ओर वामें तो धीमंत लीलास्थभक्त हें सो आपके यशको गान करत हें.

सोई श्रीमद्भागवत दशमस्कंध पूर्वार्द्धमें [४५]अक्षण्वतांफलमिदंनपरं विदामः. या श्लोकमें निरूपण कियो हे शंका. या श्लोकमें वल्लभाचार्यजीको यश कहां हे **प्रत्युत्तर.** या श्लोकमें [४६]वक्रंव्रजेशसुतयोः ऐसे कह्यो हे तासूं या श्लोकमें मुख्य उद्देश श्रीमुखको हे ओर श्रीवल्लभाचार्यजी श्रीमुख हें यातें यामें वर्णन आपको ही हे ओर [४७]गावस्तुकृष्णमुखनिर्गतवेणुगीतपीयूष मुत्तमितकर्णपुटैःपिबंत्यः या श्लोकके श्रीसुबोधिनीजीमें हू यह तात्पर्य स्फुट दीसत हे यातें हमनें ऐसो अर्थ कियो हे ।।८।।

अब यशको निरूपण करिकें तेजको ओर प्रतापको वर्णन करत हें.

४४. धीमंत शब्दमें मतुपूप्रत्यय प्राशस्त्यरूप अर्थमें हे ओर प्रशस्त सो अलौकिक.

४५. वेणुगीतमें व्रजभक्तनको वचन हे जो सर्वप्रकारसुं भगवत्सम्बन्ध सोही इंद्रियवान्को फल हे ओर कछु हम नहिं जानें.

४६. व्रजेश जो श्रीनंदरायजी इनके पुत्र जे प्रभु ओर बलदेवजी वे जब गायनके पिछाडी अङ्गगोपनकुं आगें करिकें पाछें पधारत हें तब अनुरासहित कटाक्षनतें युक्त ओर वेणुसहित ऐसो जो उन दोउनको मुखारविंद ताको आदर सहित दर्शन करनो यह ही नेत्रको परम फल हे यह अर्थ सुबोधिनीजीमें तथा लेखमें स्फुट हे.

४७. भगवन्मुखारविंदनेसो निकस्यो ऐसो जो वेणुनादरूप अमृत ताको गायें निश्चय उंचे कान करिकें पान करत हें.

संस्कृत टीका

९ अतूल अमल उद्योत

अतूल अमल उद्योत उदयो भूतल द्विजमार्तंड ।
भक्तिमारग केसरी गज मायिकमत शतखण्ड ।।९।।

अब भूतलके विषें आप **मार्तंड.** जो सूर्य ताजेसे उदय भये याको भावार्थ यह जो प्राची दिशातें सूर्य उदय होत हे परंतु कछू प्राचीसों उत्पन्न नहीं होत हे तेसें आपहू द्विजकुलमें प्रादुर्भूत भये हें अथवा **द्विज.** जो चंद्र ओर **मार्तंड.** जो सूर्य तेसें आप हें अब चंद्र सूर्य तो लौकिक हें यातें आपकों लौकिकतुल्यता आई ताको निवारण करत हें अब आप केसे हें **अतुल.** सूर्यचंद्रके तेजकी हू आपको तुलना नही हे याहीतें गीताजीमें [४८]''दिवि सूर्यसहस्त्रस्य भवेद् युगपदुत्थिता. यदिः भाः सदृशी सा स्याद् भासस्तस्य महात्मनः'' यह निरूपण कियो हे ओर आप केसे हें **अमल.** सूर्यचंद्रकों तो मेघ, राहु यह सब मलिन करत हें ओर आप तो सर्व बाधासों रहित हें ओर आप केसे हें **उद्योत.** सो अलौकिक तेजोरूप आपके तेजसों ही सब तेजस्वी हें सोई [४९] कठमण्डकोपनिषदमें निरूपण कियो हे तथा श्रीगीताजीमें हू आपनें आज्ञा करी हे [५०]''यदादित्यगतंतेजगद्भासयतेऽखिलं यच्चंद्रमसियच्चाग्नौतत्तेजोविद्धिमामकं'' या श्लोकमें अब सूर्यकी उपमा दीनी ताको भावार्थ यह जो जेसें सूर्य अंधकारकों मिटावत हे सबनकों प्रकाश करत हे कमलको विकास करत हे उलूककों गतिहीन करत हे तेसें आप हू मायावादको नाश करत हें शुद्धाद्वैत वेदांतको उपदेश करिकें हृदयमें प्रकाश करत हें भक्तनकों दर्शनमात्र सों प्रफुल्लित करत हें बहिर्मुखनकों गतिहीन सो परास्त करत हें इत्यादिक अनेक अभिप्रायसो सूर्य उपमा दीनी ओर शीतलत्वादिक धर्म सूचन करिवेकों चंद्रकी उपमादीनी अब तेजको निरूपण करिकें पराक्रमको निरूपण करत हें **भक्तिमारग केसरी.** भक्तिमार्ग जो पुष्टिमार्ग ताकेविषें आप केसरी जो सिंह ता जेसे हें याहीतें **गजमायिकमतशतखण्ड.** मायिक जो मायावाद तिनको मत जो सिद्धांत तारूपी गज जो हस्ती ताके शत सो अनेक खण्ड सो टूक किये अब भक्तिमारग केसरी ऐसें कह्यो ताको भावार्थ यह जो जेसें सिंह जा मार्गमें होत हे तहां हस्तिप्रभृति ओर कोई प्राणी नजीक हू नही आवत हे तेसें पुष्टिमार्गमें आपके प्रतापसों कोउ दुःसंगरूप पशु नजीक हू आय नहीं सकत हे तब बाधा तो कहांसों करिसके ओर सिंह जेसे ओर अपेक्षारहित अकेलो ही पराक्रम करत हे तेसें आपहू केवल प्रतापमात्रसों सब कार्य करत हें इत्यादि अनेक अभिप्रायसों भक्तिमारग केसरी यह कह्यो अथवा मायिक जो मायावादी ते ही गजरूप तिनको **मत.** जो सिद्धांत ताको आपनें खण्डन कियो अब मायावादी गजरूप कहे ताको अभिप्राय यह जो जेसे गजपशु हे तेसें मायावादी हू पूज्य देवता स्वरूपकों सिद्ध दशामें मिथ्या मानत हें तातें पशु हें सोई अभिप्राय [५१]वेदमें निरूपण कियो हे ओर जेसें हस्ती दूर पदार्थ देखत हे ओर समीपको पदार्थ नहीं

देखत हे तेसें मायावादी हू अपनो आत्मना जो ब्रह्म ताको स्वरूप नहीं जानत हें ओर शास्त्रसों दूर जो कुतर्क तिनकों देखत हें ओर हस्ती जेसें प्रथम स्वच्छ होत हे तो पाछें अपनें माथेमें धूर डारत हे तेसें मायावादी हू स्वच्छ ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न होत हें वेदशास्त्रको अध्ययन करत हें तोहू मायावादरूपी धूरसों आप मलिन होत हें इत्यादिक अनेक अभिप्रायसों मायावादिनकों गजरूप कहे अब ऐसे आप हें याहींते सर्वोत्तमजीमें [५२]मायावादनिराकर्त्ता यह आपको नाम हे हू ओर सप्तश्लोकीमें हू श्रीविटठनाथजीनें [५३]मायावाद करींद्रदर्पदलनेन या श्लोकमें येही अभिप्राय निरूपण कियो हे शंका तुमेनं कही जो पुष्टिमार्गमें आपके प्रतापसों दुःसंगरूप पशु नजीक हू आय नहीं सकत हे परंतु पुष्टिमार्गमें आये हें तिनकों अनेकनकों दुःसंग भयो दीखत हें **प्रत्युत्तर.** सिंहके समीप अंतराय रहित जो रहे हें ताकों ओर पशुनकी बाधा नहीं होत हे तेसें आपको हू जो हृदयमें राखे ताकों दुःसंग बाधा नहीं करत हें ओर बहिर्मुख हें तिनकों दुःसंग बाधा करत हें यातें हमने ऐसें कह्यो सो युक्त हे याको फलितार्थ यह जो श्रीमहाप्रभुनको निरंतर ध्यान स्मरण करे ताकों दुःसंग नहीं लगत हे ।।९।।

अब मायावादको हू खण्डन कियो यह कछू अधिक बात नहीं हे तातें याहूतें अधिक निरूपण आधी तुकसों करत हें.

४८. जो आकाशमें हजार सूर्यनको तेज एकसंग उदय पावे तो प्रभुनके तेजके कछूक सदृश कदाचित् कह्यो जाय.

४९. वा भगवद्धाममें सूर्यचंद्र तारां विद्युत यह कोई प्रकाश नहीं करिसकें तब ये अग्नि तो कहासूं प्रकाश करे क्यों जो यह सब प्रभुनके प्रकाशसूं ही प्रकाशवान होत हे.

५०. जो तेज सूर्यमें रहिकें आखे जगतमें प्रकाश करत हे ओर जो चंद्रमें तेज हे ओर अग्निमें हे हे अर्जुन सो सब मेरो तेज जान.

५१. बृहदारण्यमें.

५२. श्रीमहाप्रभुजी मायावादके खंडन कर्ता हे.

५३. मायावादरूप बड़े हाथीके गर्व मिटायवें प्रभृति कार्यनतें आप निरूपम हें.

संस्कृत टीका

१० दिग्विजय दशदिशायें

दिग्विजय दशदिशायें कीधो परिक्रमाने व्याज ।
तीरथ सकल सनाथ कीधां चरणरेणुसमाज ।।१०।।

।। **पिरक्रमा** ।। जो पृथ्वीपरिक्रमा ताको ।। **व्याज** ।।

सो मिषमात्र हे क्यों जो अपूर्ण होय ओर फलकी आकांक्षा करत होय सो परिक्रमा करे ओर आप तो पूर्णपुरुषोत्तम हें आकांक्षारहित हें तासों परिक्रमाको तो मिष हे ता द्वारा दशदिशानको आपने विजय कियो शंका चार दिशा पूर्व दक्षिण पश्चिम उत्तर ओर चार विदिशा सो कोण आग्नेय नैर्ऋत्यव वायव्य और ईशान इन आठ दिशानमें तो सब पण्डितनको जय कियो सो ठीक हे परंतु अंतरिक्ष ओर अधोलोकके विषें दिग्विजय केसे संभवे प्रत्युत्तर अंतरिक्ष दिशाको स्वामि वायु हे सो [५४]वेदमें निरूपण कियो हे ओर वायुको अवतार मध्वाचार्य हें तिनकों आपनें जीते ओर अधोलोकमें मुख्य शेष हें तिनको अवतार रामानुजाचार्य हें तिनको हू आपने जीते यातें दिग्विजय दशदिशामें कीधो यह निरूपण कियो सों युक्त हे अब परिक्रमाके मिषसों आपनें दोय कार्य किये हें तातें दिग्विजयरूप एक कार्यको निरूपण करिकें दूसरे कार्यको निरूपण आधी तुकसे करत हे.

सो सब **तीरथ.** तिनको **चरणरेणुसमाज.** जो चरणारविंदकी रजको समूह ताकरिकें **सनाथ.** सो कृतकृत्य किये अथवा नाथ जो अधिदेवता तिनतें रहित सो **सनाथ.** ऐसे जो तीर्थ तिनकों सकल सो कलासहित किये याकों भावार्थ यह जो अनेक पातकीनके पातकके सम्बन्धसों सब तीर्थ कलाहीन होय रहे हते तिनकों चरणरज करिकें कलासहित किये यातें चरणरजको अलौकिकत्व द्योतन कियो क्यों जो लौकिक रजसों तो सब पदार्थ मलिन होत हें ओर

आपकी चरणरजसों तो तीर्थ कलाहीन हते सो कलायुक्त भये याहीतें तीरथसकलसनाथ कीधां यह निरूपण कियो अब तीर्थनकों पातकीनके पाससों मलिनता आवत हे सो तो श्रीमद्भागवत नवमस्कंधमें भगीरथ राजासों श्रीगंगाजीने आज्ञा कीनी हे [५५]नरामय्यामृजंत्यधम् या श्लोकमें फेर भगीरथनें कही जो [५६]साधवोसन्यासिनः शांताब्रह्मनिष्ठालोकपावनाः. हरंत्यघंतेंगसंगात्तेष्वास्तेह्य-घभिद्धरिः ओर प्रथम स्कंधमें युधिष्ठिरने विदुरजीप्रति कह्यो हे [५७]तीर्थीकुर्वंति तीर्थानि स्वातंःस्थेनगदाभता याको फलितार्थ यह जो साधु जो भगवद्भक्त तिनके हृदयमें प्रभु बिराजत हें तातें सब तीर्थनके पाप वे धोवत हें अब आपके भक्तनको ऐसो प्रताप हे तब आप पधारें तासूं तीर्थ निर्मल होय यामें आश्चर्य कहा ।।१०।।

ऐसे सन्मुख आये जो पण्डित तिनकों सबनको जीते सो वर्णन करिकें अब ग्रंथद्वारा जीते सो निरूपण करत हें अब श्रीमहाप्रभुजी काशिमें बिराजते हते तब अनेक पण्डित आयकें वाद करत हते यातें भगवत्कथाको तथा सेवाको प्रतिबंध होत हतो याते पत्रावलंबन ग्रंथ करिकें विश्वेश्वर महादेवजीके मंदिरमें चोहोटायो ओर डोंडी बजाई जो यह ग्रंथ बांचे पिछें शंका जाके मनमें रहे सो हमारे पास आवे फेर तो यह ग्रंथ बांचके हि अनेक पण्डित परास्त भये सो आधी तुकसों निरूपण करत हें.

५४. तैत्तिरीय शाखामें वायु अंतरिक्षको अधिपित हे ऐसें कह्यो हे.

५५. मनुष्य मेरे विषें पाप धोवे हें.

५६. त्यागी शांत ब्रह्मनिष्ठ जगतकों पवित्र करिवेवारे सत्पुरुष अपुनें शरीर संसर्गगसों तुममेते पाप दूर करेंगे जाते सब पातकनको काटिवेवारे प्रभु विनमें बिराजे हें.

५७. अपने मनमें बिराजते ऐसे जे प्रभु तिनकरिकें सत्पुरुष तीर्थनकों हू तीर्थ करत हें अर्थात् पवित्र करत हें.

संस्कृत टीका

११ पत्रावलंबे पण्डित

पत्रावलंबे पण्डित जीत्या मायिक मत्तमातंग ।।
श्रीकृष्ण पूरण ब्रह्म थाप्या जेना रूप कोटि अनंत ।।११।।

अब **पत्रावलंब.** जो पत्रावलंबन ग्रंथ ताकरिकें पण्डितनकों जीते सो कोनसे पण्डित सो कहत हें **मायिक.** जे मायावादी तिनिरूी जे **मत्तमातंग** मदोन्मत्त हस्ती शंका प्रथम गजमायिकमतशतखण्ड यह निरूपण कियो हे अब फेर जीत्यामायिकमत्तमातंग यह क्यों कह्या प्रत्युत्तर प्रथम तो मायिकमतरूपी जो गज ताको खण्डन कियो ऐसें निरूपण कियो ओर अब तो मायिक जो मायावादी सो हू मदोन्मत्त हस्ती जेसे हें तिनकों पत्रद्वारा जीते यह निरूपण कियो याको भावार्थ यह जो मत्तहस्ती होत हे सो पांवकी सांकर तोडिकें ओरको घात करत हें तेसें दुराग्रही मायावादी हें ते आपको जय होयवेके लिये वितंडवाद करत हें तिनकों हू आपनें जीते यह सूचनार्थ मत्तमातंग यह कह्यो याहीतें सर्वोत्तमजीमें [५८]सर्ववादिनिरासकृत् यह आपको नाम हे याको फलितार्थ यह जो मत्तहस्ती हे सो अंकुशकों तो सर्वथा मानत नाहीं ओर भाला चरखी इत्यादिक अनेक उपकरणनसों जीत्यो जात हे अब ऐसे जो मायावादी तिनकों पत्रमात्रसों जीते यह आपको अलौकिक प्रभाव हे याही तें पत्रावलंबेपण्डितजीत्यामायिक मत्तमातंग यह निरूपण कियो तातें पुनरुक्ति नहीं हे युक्त ही हे अब इन सबनकों जीतकें कौनको स्थापन कियो सो आधी तुकसों निरूपण करत हें.

श्री. जो स्वामिन्यादिक तिनकरिकें सहित जो **कृष्ण.** पूर्ण ब्रह्म ते श्रीकृष्ण कहिये वे केसे हें **जेना.** जिनके रूप **कोटि.** सो असङ्ख्यात जे **अनंत.** सो काम तिन जेसें हें सोई श्रीमद्भागवतमदशमस्कंधपंचाध्यायीमें [५९]साक्षान्मन्मथन्मथःया स्थलमें निरूपण कियो हे तथा बृहद्वामन पुराणमें हू श्रुतीननें [६०] कंदर्पकोटिलावण्येत्वयिद्रष्टेमनांसिनः या स्थलके विषे निरूपण कियो हे ओर श्रीकृष्ण पूर्णब्रह्म हें सो [६१]वेदमें तथा श्रीमद्भागवतमें [६२]कृष्णस्तुभगवान्स्वयम् [६३] यन्मित्रंपरमानंदपूर्णब्रह्मसनातनं इत्यादिक अनेक स्थलमें तथा अनेक पुराण इतिहास तंत्रनमें निरूपण कियो हे याको फलितार्थ यह जो जे नित्यलीलाविशिष्ट

पुरुषोत्तम हें तिनकों ही वेदमें परब्रह्म कहत हें अथवा श्रीकृष्ण एक हें तो हू **कोटि** सो असङ्ख्यात हें रूप जिनके ऐसे हें सोई वेदमें [६४]निरूपण कियो हे ओर विष्णु सहस्त्रनाममें हू अनेकानेकः ये दो नाम कहे हें अब ऐसे हें तो हू **अनंत.** लौकिकाकार रहित हे सो वेदमें निरूपण कियो हे. ओर गीताजीमें हू [६५]'सर्वेंद्रियगुणाभासंसर्वेंद्रियविवर्जितं' यह निरूपण कियो हे याको फलितार्थ यह जो पुरुषोत्तमको स्वरूप विरुद्धधर्माश्रय हे इतनें लौकिकवस्तु ताको अर्थ यह जो साकार होत हे सो निराकार होत नांहीं. परंतु पुरुषोत्तम तो साकार हूं हे ओर निराकार हू हें साकार सो आनंदमात्रस्वरूप ओर निराकार सो लौकिकाकार रहित ऐसो पुरुषोत्तम स्वरूप आपनें वेद पुराण शास्त्रकी यथार्थ संमतिसों संस्थापन कियो याहीतें सर्वोत्तमजीमें [६७]साकारब्रह्मवादैकस्थापकः यह आपको नाम हे याहीतें श्रीकृष्ण पूरणब्रह्मथाप्याजेनांरूपकोटिअनंत यह निरूपण कियो ।।११।।

अब या रीतसों शुद्धाद्वैतमतको स्थापन करिकें फेर आपनें कहा कियो सो एक तुकसों निरूपण करत हें.

५८. श्रीमहाप्रभुजी सब वादनके खंडन करिवेवारे हें.

५९. साक्षात्कामदेवके हू कामदेव प्रभु हें.

६०. याको अर्थ पहिले लिख्यो हे.

६१. तापनियोपनिषदमें कृष ऐसो सदंशको नाम हे ओर कृष्ण ऐसो आनंदको नाम हे तातें जे सदानंद परब्रह्म हें ते ही कृष्ण कहावत हें ऐसें कह्यो हे.

६२. ओर सब अवतारनमें कितनेक अंशरूप हे कितनकेक कलारूप हें ओर श्रीकृष्णतो साक्षात् अवतारी परब्रह्म हें.

६३. दशमस्कंधमें ब्रह्माजीने कह्यो हे जो नंदरायजी ओर गोप ओर सब ब्रजवासी इन सबनके अहो बडे भाग्य हें क्यों जो परमानंद अनादि पूर्णब्रह्म श्रीकृष्ण जिनके मित्र हें.

६४. तैत्तिरीयशाखाके नारायणोपनिषदकी पांचमी रुचामें ब्रह्म एक हें अव्यक्त हें अनंतरूप हे ऐसें कह्यो हे.

६५. जे आकार निषेधक श्रुति हें तें प्राकृत आकारको निषेध करत हें ओर जो आकार प्रतिपादक श्रुति हे ते अलौकिक आकारको प्रतिपादन करत हें या रीतसों श्रुत्यर्थ निर्णय व्यास सूत्रके तृतीयाध्याय द्वितीयाध्यामें कियो.

६६. सब इंद्रियनके गुण जे देखनो सुननो इत्यादिक ते ब्रह्ममें सर्वत्र रहे हें ओर वह प्राकृत सब इंद्रियनतें रहित हे.
६७. ब्रह्म साकार हे या रीतके सिद्धांतके ही स्थापनकर्ता आप हें निराकार वादके तो खंडक हें.

संस्कृत टीका

१२ स्वमारग स्थिर

स्वमारग स्थिर थापवा आपवा भजनानंद ।
नाम आप्यां जीवने शुभ मिष्ट मुखमकरंद ।।१२।।

अब **स्वमारग.** जो पुष्टिमार्ग ताकों स्थिर तासों स्थापन करिवेकों ओर भजनको आनंद देवेको जीवनकों **नाम आप्या.** नाम जो अष्टाक्षर मंत्र सो दियो अब आप्यां यह बहुवचन कह्यो तातें तीन बिरियां या मंत्रको [६८]उच्चार करावत हें यह सूचन कियो फेर आपके मुखको मकरंदरूप जो पंचाक्षरसहित गद्य ताको उपदेश आप जीवनकों किये अथवा आपको **मुखमकरंद.** जो श्रीसुबोधिनीजी ताको दान आप जीवनकों करत हें यह तात्पर्य सर्वोत्तमजीमें [६९] कृष्णाधरामृतास्वादसिद्धिरत्रनसंशयः या श्लोककी व्याख्यामें स्फुट हे ओर तदुक्तमपिदुर्बोधं या उपक्रमानुरोधसू हु ऐसें ही भासत हे अब आपके मुखकी गद्यसुबोधिन्यादिरूप वाणी ताको मकरंद जेसें कही तातें श्रीमुखकों कमलत्व सूचन कियो ओर मकरंद ऐसें भ्रमर ही पीवत हे तेसें याके अधिकारी दैवीजीव ही हें इत्यादिक अनेक अभिप्राय सूचन किये अब यह मकरंद केसो हे **शुभ.** ओर मकरंद तो सर्वदा रहत नहीं हे ओर वासों तृप्ती हूं क्षणमात्र रहत हें ओर आपकी वाणी रूप मकरंद तो नित्य हे ओर याको जो आस्वाद करे सो सदा तृप्त रहत हे यह सूचनार्थ शुभ यह विशेषण कह्यो ओर यह मकरंद केसो हे

मिष्ट. सो मधुर ताको अभिप्राय यह जो ओर मकरंद तो जीभकों ही मिष्ट लगत हें ओर यह मकरंद तो जीभ तथा कान इन दोउनकों ही मिष्ट लगत हें ओर अर्थज्ञानसों मनकों हूं मिष्ट लागत हे याही अभिप्रायसों मिष्ट यह कह्यो अथवा मिष्टसों भ्रष्ट कहियें अर्थात शुद्ध क्यों जो मृजुशुद्धौधातुको यह रूप हे याको अभिप्राय यह जो ओर मकरंदकों तो रज ओर भ्रमर मलिन करत हें ओर यह मकरंद सर्वदा शुद्ध हे याको जो आस्वाद करे सो हू शुद्ध होय याहीतें मिष्ट यह विशेषण कह्यो अथवा भजन जो सेवास्मरणादिक ओर आनंद जो प्रभु तिनकों देवेकों याको भावार्थ यह जो अष्टाक्षर मंत्र ओर गद्यसहितपंचाक्षर रूप आत्मनिवेदनको मंत्र तद्द्वारा जीवनकों भजनसेवाधिकारी करत हे ओर ब्रह्मको सम्बन्ध करावत हे अब आनंद शब्द ब्रह्मको वाचक हे सोतो [७०]वेदमें निरूपण कियो हे शंका शरणमंत्र ओर आत्मनिवेदनमंत्र जीवको उपदेश करत हें ताको एक प्रयोजन तो स्वमारगस्थिर स्थापवा यह कह्यो सो युक्त हे क्यों जो अनेक शिष्य होयं तब मार्ग स्थिर रहे परंतु भजनानंदतो ओर मार्गीमें हू हे तातें आपवा भजनानंद यह क्यों कह्यो **प्रत्युत्तर.** भजन जो गुणगान नामस्मरण ओर मार्गमें हे तथापि भजिसेवायांधातु हे ताको यह रूप होत हे सो फलरूप सेवा तो प्रेमलक्षणाभक्तिद्वारा निरोध होय तब बने क्यों जो फलरूप सेवाको लक्षण [७१] चेतस्तत्प्रवणंसेवा यह कह्यो हे ओर निरोधको लक्षण [७२]प्रपंचविस्मृतिपूर्वक भगवदासक्तिर्निरोधः यह कह्यो हे यातें सेव्य तो या मार्गमें पुरुषोत्तम भये क्यों जो मंत्राधीन नहीं ओर प्रेमलक्षणा भक्तितें ही मिलें ऐसे तो पूर्ण पुरुषोत्तम हें ओर अन्यमार्गमें तो मंत्राधीन गोपालादिक विभूति हें यातें पुरुषोत्तमकी सेवाको अधिकार तो जीवकों आपनें ही दियो ओर आनंद जो प्रभु तिनको दान जो सम्बन्ध सो आपनें ही करायो याहीतें सर्वोत्तमजीमें [७३]अदेयदानदक्षः यह आपको नाम हे अथवा ज्ञानमार्गीय तो भक्तिकों केवल साधन मानें हें तातें उनको भजनानंद नहीं हे ओर इतरमार्गवर्ति मार्गादिकभक्तनकों हू भगवान मोक्षरूप फल देत हें सो श्रीभागवतमें [७४]भगवान्भजतांमुकुंदोमुक्तिंददाति कर्हिंचित्समरनभक्तियोगं इत्यादि स्थलनमें स्फुट हे तातें मार्यादिक भक्तनकों हू फलदशामें भजनानंदानुभव नहीं हे तातें भजनानंद जो अप्राकृत देह तें फलरूप भगवत्सेवात्मक अपरिगणितानंद सो तो पुष्टिमार्गमें ही हे यह सब फलप्रकरणके श्रीसुबोधिनीजीमें [७५]ब्रह्मानंदात्समुद्धृत्यभजनानंदयोजने इत्यादि ग्रंथसों स्पष्ट कह्यो हे ओर अणुभाष्य चतुर्थाध्याय चतुर्थपादमें हू सविस्तर विवेचना कियो हे यह भजनानंद इतर मार्गमें नहीं हें यातें **आपवा भजनानंद.** यह कह्यो सो युक्त हे ।।१२।।

अब या रीत सों जीवनपर एक देशमें ही बिराजिकें आपने कृपा कीनीके ओर हू कहूं पधारे हते ता शंकाको निवारण आधी तुकसों कहत हें.

६८. याहीतें गौतम तंत्रमें दक्षकर्णेवदेन्मंत्र त्रिवारंपूर्णमानसः ऐसें कह्यो हे ये सब वचन मेनें सत्सिद्धांत मार्तंड या नामके संस्कृत ग्रंथमें लिखे हें.

६९. सर्वोत्तमजीके आरंभमें तो श्रीमहाप्रभुनकी वाणी दुर्बोधि हे तो हू या सर्वोत्तमस्तोत्रके पाठ तें सुबोध होय ऐसें कह्यो हे ओर ता पीछे प्रभूनके अधरामृतके आस्वादकी सिद्धि यातें होय ऐसें कह्यो हे तासूं उपक्रमोपसंहारेकवाक्यता करिकें विचार करिवेसूं कृष्णाधरामृत शब्द करिकें श्रीसुबोधिनीजी प्रभृति ग्रंथनको इहां ग्रहण हे ओर इन ग्रंथनको कृष्णाधरामृतत्वयुक्त हे क्यों जो आप भगवन्मुखारविंद हे ओर आपकी यह वाणी हे तातें.

७०. ब्रह्मवल्लयादिकनमें.

७१. सिद्धांतमुक्तावलीमें यह लक्षण श्रीमहाप्रभुननें कह्यो हे चित्तको प्रभुनमें परोवनो सो मानसी सेवा कहिये अथवा भगवत्प्रवण जो चित्त सो ही मानसी सेवा कहिये याको विशेष विवेचन द्वितीयस्कंधादिकनमें देवानांगुणलिंगानां इत्यादि स्थलनके श्रीसुबोधिनीजीमें कियो हे.

७२. देहादिक सर्व लौकिकपदार्थको अनुसंधान भूलिकें प्रभुनमें ही आसक्ति होय सो निरोध कहिये याको विशेष विचार निरोधलक्षण निबंध सुबोधिनीजी प्रभृति ग्रंथनमें कियो हे.

७३. कोईसूं न दिये जाय ऐसे जे भगवत्साक्षात्कारादिक तिनके हू दानमें आप चतुर हें.

७४. भगवान् मार्यादिकभक्तनकों मुक्ति दे हें परंतु फलरूप भक्ति कब हू नहि दें.

७५. ब्रह्मानंदमें सों उद्धार करिकें भजनानंदको योगमें जो लीला हे सो फल प्रकरणमें निरूपण करी हे.

संस्कृत टीका

१३ अनेक जीवनें कृपा

अनेक जीवनें कृपा करवा देशांतर परवेश ।।

कोमल पद ज्यां कमल विलसे धन्य कहुं ते देश ।।१३।।

अनेक सो असङ्ख्यात जो **जीव.** तिनपर कृपा करिवेकों **देशांतर.** जो अनेक देश तिनकें विषें आपने प्रवेश कियो अब यह आपकी दयालुताको हृदयमें अनुभव भयो ताको आनंद गोपालदासजीकों भयो सो आधी तुकसों सूचन करत हें.

कोमल सो सुकुमार ऐसे. **पद** जो चरण तारूपी **कमलज्यां** सो जहां. **विलसे** शोभत हें अब आपके पदकों कमल ऐसें कह्यो. तासों जहां आपके पदकमल पधारत हें सोई देश. **धन्य** सो [७६]सरस हे. क्यों जो कमलको विलास नीरस देशमें होत नहीं हे. अथवा. जहां पद विलसत फिरत हें ता देशकोंमें धन्य कहत हो. अथवा. विष्णुसहस्त्रनाममें. अनेक. ऐसो नाम हे ओर पुरुषोत्तम सहस्त्रनाममें हू. अनंतमूर्तिः. यह नाम हे. ओर पुराणादिकनमें हू ऐसें निरूपण कियो हे तातें अनेक जो प्रभु तिनके जीव जो दैवीजीव तिनपर कृपा करिवेकों सो भजनसेवाधिकार देवेको. देश. जो हृदयदेश ताको. अंतर. जो मध्य ताकें विषें आपनें प्रवेश कियो. याहीते गोपालदासजी कहत हें **कोमल** ऐसे. **पद** सो ज्ञानरूप चरण क्यों जो पदिगतौ धातुको पद शब्द हे और जो धातु [७७] गत्यर्थक सो ज्ञानार्थक हू होय यातें ऐसो सो पद जामें रहत हे सो. **कमल** जो [७८]अष्टदलपद्मकोश जेसो हृदय सोई. देश. सो ध्यानादिककों स्थान ताको. धन्य. सो कृतकृत्य हे ऐसें कहतहूं. याहीतें [७९]सर्वोत्तमजीमें. स्वयशोगानसंहृष्टहृदयांभोजविष्टरः. यह आपको नाम हे ।।१३।।

अब सब देशनमें जीवनपर अनुग्रह करिवेकों पधारे यह निरूपण कियो यातें यह शंका होत हे जो निषिद्ध देश हें तिनमें हू आप पधारे होंयंगे तो तामसदेशनको पाप नाश केसें भयो ता शंकाको निवारण एक तुकसों करत हें. ओर दशमी तुकमें चरण रजसों सब तीर्थनको कलायुक्त किये यह कह्यो हतो तातें हू अधिक निरूपण करत हें.

[७६] रस ऐसो आनंदको ओर भक्त्यादि रसको तथा जलको हू नाम हे.
[७७] येगत्यर्थकास्तेजज्ञानार्थका ऐसो महाभाष्यको सिद्धांत हे.
[७८] यह सब बात तैत्तिरीयनारायणोपनिषदमें स्पष्ट हे.

७९. आपके यशके गान करिकें आछी रीतसों प्रफुल्लित भये ऐसे जो भक्तनके ह्रदयकमल तेही श्रीमहाप्रभूनको स्थान हें.

संस्कृत टीका

१४ अंग बंग कलिंग

अंग बंग कलिंग कीकट मगध मरु सुर सिंध ।।
ते तामसना अघ हर्या परताप पदरजगंध ।।१४।।

अब अंग सों आदि लेकें आठ निषिद्ध देश कहे सो उपलक्षणमात्र कहे तातें जितने निषिद्धदेश हें ते तामस देश हे. तिनके. **अघ** जो पाप तिनकों आपके. **पद** जो चरण जो तिनकी **रज** जो धूली ताको **गंध** जो सुगंध ताकरिके हर्या. सो हरे ये ही आपको प्रताप अब पदरजगंध ऐसें कह्यो तातें पदनकों कमलपनो सूचन कियो. ओर यह हू सूचन कियो जो आपके चरणकमलके रजको स्पर्श जाकों हे ऐसो जो वायु ताकरिके विन तामस देशनके पाप दूर भये क्यों जो वायुद्वारा हू गंध दूर जात हे गंधवह यह वायुको नाम हे. याहीतें ते तामसनां अघहर्या परताप पदरजगंध. यह निरूपण कियो. **शंका** ओर टीकाकारननें तो ऐसो अर्थ कियो हे जो इन सब देशनमें आप पधारे. ओर तुमनें तो नही पधारे ऐसो अर्थ कियो ताको कहे कारण. **प्रत्युत्तर** ओर टीकाकारननें अर्थ कियो सो युक्त ही होयगो परंतु हमकों तो यह अर्थ युक्त लगत हे. क्यों जो प्रथम तुकमें. अनेक जीवनें कृपा करवा देशांतर परवेश. यह निरूपण कियो फिर ये सब देश न्यारे कहिवेको कहा प्रयोजन. ताहूमें. तेतामसनाअघहर्यांपरतापपदरज. इतनोही नही कह्यो गंध यह कह्यो तातें येही निश्चय होत हे जो रज तो साक्षात् चरण पधारे तहां जाय ओर इन देशनमें तो सर्वत्र आप पधारे नहीं तातें रजतको गंध वायुद्वारा उन देशनमें गयो यातें

तिनके पापको नाश भयो. शंका. इन देशनमें तो कहूं कहूं श्रीमहाप्रभुनकी बेठक हें. **मरु** जो मारवाड तामें पुष्करजीमें बेठक हे अरु. **बंग** जो बंगाल तामें गंगासागर संगमपें बेठक हे ओर कीकटमें गयाजीहू आप पधारे हे ओर मगध देशमें हाजीपुरमें हरिहरक्षेत्रमें बेठक हे ओर. **सौराष्ट्र** जो सोरठ तामें जूनागढ़में बेठक हे तो हूं इन देशनमें आप नहीं पधारे ऐसो अर्थ करो हो ताको कारण कहा. **प्रत्युत्तर** इन देशनमें तीर्थनिमित्त ही आप पधारे हें. क्यों जो इन देशनमें तीर्थनिमित्त जायवेकों दोष नहीं हे सो बृहद् पाराशरस्मृतिमें कह्यो हे. [८०]अंगबंगकलिंगा श्चसौराष्ट्र-मगधावपि. केरलाः सिंधुसौवीरामरुजानपदस्तथा. केकयाम्लेछसौगर्त्ताब्रह्मचीनोष्टलोध्रकाः. यावनाः पार्वतीयाश्चब्रह्मकर्मसुगर्हिताः. अरु शातातपस्मृतिमें हुं [८१]अंगबंगकलिंगेषुसौराष्ट्र मगधेषुच. तीर्थयात्रांविना-गत्वापुनस्संस्कारमर्हति. ऐसें कह्यो हे याहीतें तीर्थके गाम इन देशनमें जितने हें तहां तहां पधारे. परंतु इन सब देशनमें नही पधारे तातें चरणरजके गंधतें इन सबनके पाप हरे याहीतें. ते तामसानां अघहर्या परतापपदरजगंध. यह निरूपण कियो ।।१४।।

अब अलौकिक कार्य निरूपण करिकें ओर लौकिकमें राजसन्मान सबनसों अधिक हे ताके निरूपण द्वारा वैराग्यको ओर यशको निरूपण करत हें.

८०. अंगादिक २० देश यज्ञादिक ब्रह्मकर्ममें निंदित हें देशस्थितिविषयक विशेष विवेचन मेंने सत्सिद्धांतमार्तंड या नामके संस्कृत ग्रंथमें कियो हे.
८१. अंगादिक देशनमें तीर्थयात्राविना ओर निमित्तसुं ब्राह्मण जाय तो वाको पुनः संस्कार करनो चाहिये इतने फेर जनेउ देनो चहिये.

संस्कृत टीका

१५ कनकस्नान शतमणसुवर्णें

कनकस्नान शतमणसुवर्णें कराव्युं महिपाल ।।
ते मुकीनें वेगें चालिया राय दृष्टि न पाछी वाल ।।१५।।

कनकस्नान सो कनकाभिषेक सो. **शतमण** जो सो १०० मण. **सुवर्ण** सोनो तातें. **महीपाल** जो कृष्णदेंव राजा तानें करायो. तब सो मण सुवर्णकों छोडिकें वेगसों पधारे. ओर [८२]राय जो सुवर्णरूपी धन ताके सामें पाछें दृष्टी हू नहीं फिराई. यह वार्ता चरित्रचिंतामणि संप्रदायप्रदीप-मूलपुरुष निजवार्ताप्रभृतिनमें प्रसिद्ध हे. अब राजा वाचक महीपाल शब्द कह्यो ताको भावार्थ यह जो मूहपूजायांधातुको [८३]मही यह शब्द योगरुड हे. केसें जो सबनकी आधारभूत ओर पञ्चमहाभूतमें सब[८४]गुणनसों युक्त येही हे ओर विराट स्वरूपकी कटिकरूप हू हें ओर भगवत्पत्नी हे ऐसो हू पुराणादिकमें वर्णन कियो हे तातें मही सों पूज्य ऐसो यौगिक अर्थ भयो. रुड तो प्रसिद्ध ऐसी जो मही ताको पाल सो पालन करनहारो. तानें हू आपको सर्वाधिक जानिकें आपको कनकाभिषेक करायो यातें आपको बडो यश सूचन कियो ओर सोमण सुवर्ण छोडिके पधारे यह वैराग्यसूचन कियो ।।१५।।

८२. संस्कृतमें रै शब्द द्रव्यवाचक हे ताको भाषामें राय ऐसो अपभ्रंश हे.

८३. या रीतसों मही शब्दकी व्युत्पत्ति अमरकोशकी वाक्यसुधा या नामकी टिकामें लिख्यो हे.

८४. जा शब्दको व्युत्पत्तिसों अर्थ होय सके ओर फिर वह शब्द वाही पदार्थमें प्रवृत्त होय सो योगरूढ शब्द कह्यो जाय ऐसें पंकज शब्द पंक सो कीच तामें तो जो उत्पन्न होय सो पंकज यह योग भयो अब पंकमेंसों तो कीटकादिक हु उत्पन्न होय हे परंतु पंकज ऐसो कमलको ही नाम होय यह रूढी भयो तातें पंकजादिक शब्द योगरूढ हें.

८५. शब्द स्पर्श रूप रस गंध इन पांच गुणनसों.

संस्कृत टीका

१६ त्यांथी दक्षिण प्रभुपावधारिया

त्यांथी दक्षिण प्रभुपावधारिया पांडुरंग श्रीविटठलनाथ नेत्र मळतां वात कीधी वचन दीधुं हाथ ।।१६।।

त्यांथी सो विद्यानगरतें. प्रभु. जो श्रीवल्लभाचार्यजी दक्षिण पधारे सो कहां पधारे सो कहत हें. पांडुरंगश्रीविटठलनाथ. पुंडरीकपुरस्थ श्रीविटठलनाथजीके दर्शनकों पधारे. अथवा. दक्षिण जो चतुर पंडित तिनके. प्रभु. सो स्वामि केसें जो पांडित्य वाणीसों होत हे तातें. [८६]वाक्पतिः. विबुधेश्वरः. यह दोई सर्वोत्तमजीमें आपके नाम हें याहीतें दक्षिणप्रभु ऐसें कह्यो सो युक्त हे अब कहां पधारे सो कहत हें. पांडुरंग श्रीविटठलनाथ. पांडु सो गौर हे रंग जिनको ऐसे श्री जो रुक्मिणीजी ओर विटठलनाथजी तिनके दर्शनकों आप पधारे. अब आप श्रीविटठलनाथजीके दर्शनकों पधारे ता समयकी वार्ताको वर्णन करत हें. नेत्र मळतांवातकीधी. श्रीमहाप्रभूनके नेत्रसों श्रीविटठलनाथजीके नेत्र मिले ताहीसमें श्रीविटठलनाथजीनें बात कीनी जो एक बचन हम आपसों मांगें हें. तब श्रीमहाप्रभुजीनें. बचनदीधुंहाथ. श्रीविटठलनाथजीके श्रीहस्तमें वचन दियो जो जेसें आप आज्ञा करोगे तेसें में करोंगो ।।१६।।

[८६] वाणीके पति ओर पंण्डितनके तथा देवतानके ईश्वर हू आप हें.

संस्कृत टीका

१७ वचन निश्चे श्रीनाथें

वचन निश्चे श्रीनाथें मांग्यु कीधी श्रीवल्लभजी सूंवात अमने ते इच्छा एह छे जे हुं नंदन तमे तात ।।१७।।

श्री जो लक्ष्मीजी ताके. **नाथ** जो श्रीविटठलनाथजी तिननें. **श्रीवल्लभजी** श्रीमहाप्रभु तिनसों निश्चय वचन लेकें बात करि सो कहा बात सो कहत हें. **अमनेतेइच्छाएहछेजे** हमकुं तो इच्छा यह हे जो. हुं नंदनतमे तात. मे पुत्र ओर तुम तात अब हूं नंदन या रीतसों आपकों एकवचन कह्यो. ओर तमे तात या रीतसों श्रीमहाप्रभुनकों बहुवचन कह्यो तातें आगे पितापुत्रके सम्बन्धकों अनुभव करनो हे सो सूचन कियो. ओर पुत्र वाचक नंदन शब्द कह्यो. ताको अर्थ यह जो जो आनंद दे ताको नाम नंदन तातें यह सूचन कियो जो पितापुत्रभाव तो जीवके विषे हे. ओर आप तो दोई एक स्वरूप हे परंतु पितापुत्र सम्बन्धको अनुभव करिवेकी इच्छा भई ओर जीवनकों हू वंशद्वारा आनंद देवेकी इच्छा भई तासों यह वचन मांग्यो. इत्यादिक अनेक अभिप्राय सूचनार्थ नंदन शब्द कह्यो ।।१७।।

अब स्वरूपसौंदर्य गुणको एक तुकसों वर्णन करत हें.

संस्कृत टीका

१८ ते पुरुषोत्तम प्रगटशे

ते पुरुषोत्तम प्रगटशे श्रीविटठल रूपनिधान ।।
नेत्रकमलें नानाभावें देशे भक्तने सन्मान ।।१८।।

ते पुरुषोत्तम सो वे पुरुषोत्तम जिननें श्रीवल्लभाचार्यजीतें वचन लियो. अब जब प्रभु प्रकट होत हें तब स्वरूपतें अभिन्न जो श्रीलक्ष्मीजी तिनतें ओर अवतारके गुणनकों योग्य जो नाम तातें सहित प्रकट होत हें तेसें आप हू प्रकट होयंगे यह सूचन करिवेकों कहत हें. **श्रीविटठल** श्री जो रुक्मिणीजी पद्मावतीजी तिनकरिकें युक्त ओर विटठल सो ज्ञान रिहत निःसाधन जनकों हम उद्धार करेंगे यह सूचन करिवेकों विटठल यह नाम ताकरिकें युक्त प्रगटेंगे. ओर आप केसे हें. **रूपनिधान** रूप जो दशावतारचतुर्विंशत्यवतार-प्रभृति तिनके निधान आधारभूत अवतारि श्रीकृष्ण. याहीतें श्रीमद्भागवत प्रथमस्कंधमें. [८७] एतेचांशकलाःपुंसः कृष्णस्तुभगवान्स्वयं. ऐसें निरूपण कियो. ऐसे जो श्रीकृष्ण सोई आप प्रगटेंगे यह सूचन करिवेकों ओर प्रथम पुरुषोत्तम शब्द कह्यो ताके विषें [८८]उपचारशंका निवारण करिवेको रूपनिधान ऐसें कह्यो. अब सौंदर्य निरूपण पूर्वक भक्तानंददातृत्व निरूपण करत हें. नेत्रकमलेनानाभावें. नेत्रकमलतें नानाभावसों भक्तनकों सन्मान देहिंगे. या निरूपणतें रसरूपत्व हू सूचन कियो. अथवा नेत्रकमलनतें कृपादृष्टिरूप सन्मान देहिंगे ओर नाना भावसों अनेक भक्त हें तिनकों जाको जेसो भाव ताकों तेसो सन्मान देहिंगे. सो गीताजीमें आज्ञा करी हे. [८९]''येयथामांप्रपद्यंतेतांस्तथैवभजाम्यहं''. या श्लोकमें ओर [९०]वेदमें हू ऐसें ही कह्यो हे ओर श्रीभागवतमें हू [९१]''यद्यद्धियात उरुगायविभावयंतितत्तद्वपुनःप्रणयसेसदनुग्रहाय''. इत्यादिक वचनमें यह बात स्पष्ट हे. अथवा. या तुकमें निरूपण किये सो वचन श्रीविटठलनाथजीके हें क्यों जो प्रकटशे यह भविष्यत्प्रयोग कह्यो. ओर गोपालदासजीनें वर्णन कियो तब तो आपको प्राकटय होय चुक्यो हतो तातें ये हू वचन श्रीविटठलनाथजीके हें. इहां ते पुरुषोत्तमसो जिनकी आज्ञातें आप प्रकटे ओर जिनको मुखारविंद आप हो ते पुरुषोत्तम. ओर सब अर्थ तो प्रथम लिख्यो हे तेसेंही युक्त हे. अब प्रथम तो श्रीविटठलनाथजीनें आज्ञा कीनी जो हू नंदन. ओर पाछे आज्ञा कीनी ते पुरुषोत्तम याते सूचन कियो जो जाकी आज्ञासों आप प्रकटे. ओर जाको मुखारविंद आप हें सोईमें हों. ओर नेत्रको कमल कहे तातें आनंददातृत्व रक्तत्व सजलत्व ओर कनीनिकाकों भ्रमरत्व सूचन कियो ।।१८।।

अब दक्षिण यात्राको निरूपण करिकें व्रजयात्राको निरूपण कहत हें.

८७. ओर सब अवतारनमें कोई अंशावतार हे कोई कलावतार हें ओर श्रीकृष्ण तो साक्षात् भगवान् हें.

८८. जेसें तेजस्वि मनुष्य होय ताकों कहत हें जो यह सूर्य हे परंतु वह कछु साक्षात् सूर्य नहि होय सब तेजस्वितारूप धर्म तें सूर्यशब्दकी वा मनुष्यमें प्रवृत्ति सो औपचारिक हे तेसें इहां हू पुरुषोत्तम शब्द लाक्षणिक होयगो या शंकाके निवारणार्थ रूपनिधान यह कह्यो.

८९. जे जा प्रकारसों मोकूं भजे हें तिनकुं में तांही प्रकारसों भजू हुं.

९०. बाकी जेसी जेसी उपासना करत हे तेसो होत हे यह छांदोग्यादिकनमें प्रसिद्ध हे.

९१. हे प्रभो भक्त जेसी जेसी बुद्धिसों आपकी भावना करें हें आप सत्पुरुषनके अनुग्रहार्थ तेसो स्वरूप धारण करत हो.

संस्कृत टीका

१९ त्यांहांथी वृंदावन

त्यांहांथी वृंदावन पांउधारिया ज्यां मधुप करे झंकार कुसुमद्रुमनवमल्लिका मकरंदनो नहीं पार ।।१९।।

त्यांहांथी सो दक्षिण देशतें व्रज पधारे सो कोनसो स्थलमें पधारे सो कहत हें. **वृंदावनपांउधारिया** वृंदावन पधारे. अब ओरस्थल पधारे सो नहीं कह्यो. ओर वृंदावन पधारे यह कह्यो ताको कारण यह जो मुख्य रमणस्थान यह हे युगल स्वरूपके लीलानंदको अनुभव वहां ही होत हे तातें प्रथम वृंदावन पधारे सो वृंदावन केसो हे जहां मधुप झंकार करत हें. अब भ्रमरवाचक मधुप शब्द कह्यो तातें वृंदावनमें सब जातिके पुष्प सर्वदा प्रफुल्लित रहत हें. ओर सर्वदा तिनके मकरंदको पान भ्रमर करत हें तातें सर्वदा मधुर शब्द करत हें यह सूचन कियो ओर. ज्यांमधुपगणझंकार. ऐसो हू पाठ हे ता पक्षमें मधुपगण

सों भ्रमरनके समूह तिनको जहां झंकार शब्द होत हे. अब अनेक भ्रमर सर्वदा मकरंदको पान करत हें तातें मकरंद न्यून होयकें शोभाकों न्यूनता होयगी यह शंका निवारण करत भये वृंदावनकों वर्णन करत हें. **कुसुमद्रुम** जिनमें सुंदरवर्णके सुंदरसुगंधके पुष्प लगत हें ऐसें वृक्ष ते हू नव सर्वदा नवीन रहत हें तातें सुगंधको ओर शोभाको नित्यत्व सूचन कियो. **ओर नवमल्लिका** नवशब्दको देहली दीपक न्यायतें कुसुमद्रुममल्लिका इन दोइनमें सम्बन्ध हे. अब मल्लिकाको नाम तो उपलक्षण रीतसों कह्यो तातें यह सूचन कियो जो जिनमें सुंदर सुगंधके पुष्प लगत हें ऐसे अनेक गुल्म हें तिनके मकरंदको पार नहीं हे याहीतें जो प्रथम शंका कीनी ताको निवारण कियो केसें जो मकरंदको पार नहीं हे ताते अनेक भ्रमर सर्वदा पान करत हें तो हू शोभाकी न्यूनता होत नाहीं. यातें अलौकिकत्व सूचन कियो ।।१९।।

ओर वृंदावनमें कहा शोभा हे सो कहत हें ।।

संस्कृत टीका

२० तरु तमाल अतिशोभता

तरु तमाल अतिशोभता हेमजूथिका संघोड ।।
ललना ते सुभगा लटकतां हीं डे ते मोडामोड ।।२०।।

तरुतमाल सो तमालके वृक्ष यह उपलक्षण रीतसों कह्यो. तातें यह सूचन कियो हे जो जिसमें सुंदर स्वादके फल ओर सुंदर पत्र हें ऐसे अनेक वृक्ष

हें ओर. **हेमजूथिकासंघोड** हेमजूथिका सो सोनजूही ताकें [९२]संघोड सो समूह हें. प्रथम मल्लिका कही सो श्वेतपुष्पके उपलक्षणसो कही. ओर हेमजूथिका कही सो ओर सब रंगके पुष्पके उपलक्षण रीतसुं कही. अब स्थावर शोभा निरूपण करिकें जंगम शोभा निरूपण करत हें. **ललना** जे स्त्रीयें वे केसी हें. तो. सो वे प्रसिद्ध श्रुतिरूप याहीतें. **सुभगा** सो भगवत्सम्बन्धतें अखण्ड सौभाग्ययुक्त ऐसी अथवा भगवान्कीनांई [९३]ऐश्वर्यादिषडगुणयुक्त ऐसी. अब श्रुतियें गोपिका स्वरूपसों वृंदावनमें फिरत हें यह बात तो बृहद्वामनपुराणमें श्रुतिनकों प्रभूननें. [९४]कल्पंसारस्वतंप्राप्यव्रजेगोप्योभविष्यथ. यह वर दियो हे ताहीतें स्फुट होत हे. अब वे कहा करत हें सो कहत हें. **हींडेतेमोडामोड** प्रभूनकों रिझायबेकें लियें मोडामोड सो अनेक प्रकारकी रसोद्बोधक शरीरकी चेष्टा करिकें [९५]हींडे सो चलत हें. याहींते बृहद्वामनपुराणमें प्रभु सों श्रुतिननें कह्यो हे. [९६]कंदर्पकोटिलावण्येत्वयिदृष्टेमनांसिनः. कामिनीभावमासाद्यस्मरक्षुब्धान्यसंशयम्. अथवा. **लटकतां** या पदसूं स्मरोद्बोधक चेष्टा लेनी क्यों जो ऐसी चेष्टाकोही गुर्जरभाषामें लटका ऐसो नाम हे ओर मोढ-मोढ सो प्रत्यक्ष व्रजभक्त वृंदावनमें फिरत हें सो महानुभावनकूं दर्शन होत हें याको फलितार्थ यह जो श्रीमहाप्रभुननें वृंदावनमें व्रजभक्तनकूं प्रत्यक्ष फिरत देखे ओर गोपालदासजीकूं हूं यह गान करती बिरियां ऐसे ही प्रत्यक्ष दर्शन भये ऐसें भासत हे याहीतें मोढामोढ यह कह्यो ।।२०।।

अब नेत्रानंदघ्राणानंदको वर्णन करिकें श्रवणानंदको वर्णन करत हें.

९२. समूहवाचक संघ शब्दको अथवा संघात शब्दको यह अपभ्रंश हे ओर संघोड सो संग ऐसो हू अर्थ भासत हे तातें हेमजुथिकासंघोड सो सोनजुहीके संग श्याम तमालके वृक्ष अत्यंत शोभत हें यातें वृंदावनमें तासांमद्धेद्व्योर्द्वयोः कृत्वा तावंतमात्मानंयावतीव्रंज्योषितः इत्यादि श्रीभागवतोक्त व्रजभक्त सहित प्रभुनकी लीला नित्य हे ऐसे सादृश्य निब धलक्षणासों सूचन कियो क्यों जो व्रजभक्तनके श्रीअंगको वर्ण सोनजूही ऐसो पीत हे ओर प्रभुनके श्रीअंगको वर्ण तमाल जेसो श्याम हे.

९३. ऐश्वर्यादिक ६ गुण भगवशब्दवाच्य हे सो विष्णुपुराणमें कह्यो हे ऐश्वर्यस्य समग्रस्यवीर्यस्ययशसः श्रियः ।। ज्ञानवैराग्य योश्चेतिषणणांभगई तीरणाये ।।६।। गुण प्रभुनमें हें ताहीतें वे भगवान कहे जात हें.

९४. हे श्रुतियो व्रज सारस्वतकल्प प्राप्त होयगो तब व्रजमें गोपिका होउंगी.

९५. इहां हीडे ऐसें कह्यो तातें वृंदावनमें अद्यापि व्रज भक्तनकी चरणरेणु विनकी कृपासूं मिलि सके ऐसें सूचन कियो सो ही दशमस्कंधमें उद्धवजीनें

प्रार्थना कीनी हे आसामहोचरणरेणुजुषामहंस्यांवृंदावनेकिमपिगुल्मलतोषधीनां ओर वा चरणरेणुकों ही सर्व फलसाधकत्व बृहद्वामन पुराणमें कह्यो हे तासां पादरजःस्तुत्यंनित्य वृंदावने भुवि. तत्प्राप्यतत्कामन यायांत्यहोगोपिकागतिं. या श्लोकमें.

९६. हे प्रभु कोटिकाम जेसे सुंदर जो आप तिनके दर्शनतें हमारे मन स्त्रीभाव पायके निश्चय कामतें क्षोभ पावत हें.

संस्कृत टीका

२१ तानधुनि मुनि

तानधुनि मुनि मयूररूपें सांभडे धरि ध्यान ।।
नित्यलीलागान श्रवणें करे ते मधुपान ।।२१।।

तानधुनि तान उनंचास कूटतान ताकी धुनी जो शब्द. अथवा. तान. ओर. धुनी सो वेणुवीणामृदंगप्रभृति बाजेनको शब्द ताकों मुनिजन हें ते सुनत हे. सो कोनसीरीतसों सुनत हें सों कहत हें. **मयूररूपें** मयूरकों स्वरूप धीरकें सुनत हें सो हू केसे सुनत हें. **धरिध्यान** एकाग्र चित्तसों सुनत हें अथवा. जा लीलाको श्रवण करत हें ताको ध्यान करत हें. अब मयूररूपें यह तो उपलक्षणमात्र कह्यो यातें यह सूचन कियो जो अनेक पशुपक्षीनको स्वरूप धारण करिकें लीलानुभव करत हें. अथवा. मयूररूपें यह कह्यो ताको यह कारण जो मुनिको स्वरूप हे सो शांतिरसोद्बोधक हो. सो श्रृंगाररससों विरुद्ध हें और प्रभु ओर प्रभुनके लीलास्थान वृंदावनादिक तो श्रृंगार रस रूप हें. ओर मयूरको स्वरूप हे सो श्रृंगार रसोद्बोधक ओर प्रभूनकों अत्यंत [९७]प्रियहे यातें मयूरको स्वरूप धारण करिकें लीलानुभव करत हें याहीतें मयूररूपें यह कह्यो. अब प्रथम तानधुनि यह कह्यो तातें गान होत हे यह सूचन कियो. परंतु काहेको गान

करत हें या शंकाको निवारण करत हें. **नित्यलीलागान** प्रभुनकी जो नित्यलीला लीलाकों नित्यत्व तो [९८]वेदमें तथा. [९९]जयतिजननिवासोदेवकीजन्मवादः. इत्यादिक स्थलकें विषे श्रीमद्‌भागवतमें हू निरूपण कियो हे ताको जो गान तारूप जो मधु सो सेहेत ताको पान करत हें. अब गाननो ध्वनीरूप हे ताको पान केसें संभवे. या शंकाको निवारण करत हें. **श्रवणेकरे** श्रवण जो कान ता द्वारा पान करत हें अब लीलाको मधुत्व निरूपण कियो तातें मिष्टत्वासाररूपत्व सूचन कियो. अथवा. **मधु** सो मकरंद यातें रसरूपत्व सूचन कियो. ओर जो व्रजभक्त गान करत हें तिनके मुखको कमलत्व द्योतन कियो. अथवा. मधु. जो वसंतऋतु सो वृंदावनमें रहिकें लीलागानको श्रवण करत हें. यातें सर्वसुखदाता वसंतऋतु हे ताकों हू सुख देनहारो लीलागान हे तातें सुखरूप हे यह सूचन कियो. ओर सदा वृंदावनमें [१००]वसंत रहत हें तातें अखण्ड शोभा विशिष्टत्वको सूचन कियो. अथवा. मधु. सो [१०१]आसव यातें जे नित्यलीलागानको श्रवण करत हें तिनको सर्वदा निरोध सिद्ध रहत हे यह सूचन कियो केसें जो जेसें आसवको पान जे करत हें तिनको देहादिकको हू भान नहीं रहत हें तेसें नित्यलीलागानके श्रवण मात्र सों ही [१०२]प्रपंचविस्मृति होत हे. ओर आसवपानसों जेसे विषयादिकमें अधिक रुचि होत हे तेसें नित्यलीलागानतें भगवदासक्ति होत हे येही निरोधको लक्षण हे प्रपंचविस्मृतिपूर्विकाभगवदासक्तिर्निरोधः. यातें लीला गानको फलरूपत्व सूचन कियो. इत्यादिक अनेक अभिप्रायसों मधुपान ऐसे [१०३]कह्यो ।।२१।।

अब लीला सामग्रीको वर्णन करिकें लीलाको वर्णन करत हें.

९७. याहीतें प्रभु मयूरपिच्छको धारण श्रीमस्तकपें करत हें.

९८. कठवल्ली छांदोग्य बृहदारण्यकादिकनमें.

९९. सब जननके आधारभूत ओर सबनके हृदयमें निवास करनहारे ओर देवकीजीके गर्भमें जन्म लियो यह जिनको कथनमात्र हे क्यों जो नित्य हें ऐसे प्रभु सर्वदा सर्वोत्कर्षसुं विराजत हें या श्लोकमें. व्रजपुरवनितानांवर्धयन्कामदेवं. इत्यादि शत्रंत प्रयोग करिकें ओर जयति यह वर्तमान प्रयोग करिकें लीलाको नित्यत्व सूचन कियो हे ताको विशेष विवेचन विद्वन्मंडनमें कियो हे.

१००. यह अभिप्राय मधुपतिरवगाह्यचारयनगाः या श्लोकके श्रीसुबोधिनीजीमें मधुपतिर्वसंताधीपः या व्याख्यानसूं द्योतन कियो हे.

१०१. मधु ओर आसव यह कोई मदिराके नाम हे.

१०२. जगत्को भान न रहिकें केवल प्रभुनमें ही आसक्ति होय ताकों निरोध कहत हे.

१०३. या तुकमें जो वर्णन कियो हे सो सब अभिप्राय वेणुगीतमें गोविंदवेणुमनुंमत्तमयूरनृत्य तथा प्रायोबतांबविहगामुनयोवनेस्मिन इन दोय २ श्लोकके श्रीसुबोधिनीजीमें स्फुट हे.

संस्कृत टीका

२२ कुंजसदन सोयामणा

कुंजसदन सोयामणा शोभातणो नहीं पार ।।
विविध रासमण्डल रचना रचि खेले श्रीनंदकुमार ।।२२।।

कुंजसदन जो लतागृह सो. **सोयामणा** सुंदर हें. अब वृंदावनतो अलौकिक हे अपरिमितशोभायुक्त हे. ओर वर्णन कीनी सो परिमित शोभा हे. या शंकाको निवारण करत हें. **शोभातणोनहींपार** शोभाको पार नहीं हे याको भावार्थ यह जो शोभा वर्णन कीनी सो तो [१०४]उपलक्षणरीतसों करी वस्तुतः शोभाको कछू पार नहीं हे एक जिव्हासोंमें कितनी वर्णन करों अब ऐसो जो वृंदावन ताके विषें. **विविधरासमण्डलरचनारची** नाना प्रकारके रासमण्डलनकी रचना रचिकें. **खेलेश्रीनंदकुमार** श्री जे स्वामिन्यादिक तिनतें युक्त जो नंदकुमार सो खेलत हें. अब खेले यह वर्तमान प्रयोग कह्यो तातें गोपालदासजीकों वा समें लीलानुभव भयो ऐसो भासत हें. ओर लीलाको हू नित्यत्व सूचन कियो ।।२२।।

अब ऐसो जो वृंदावन ताके विषें श्रीमहाप्रभु पधारे तहां आपकों विशेषानुभव कहा भयो सो कहत हें.

१०४. शोभाकी थोडीसी दिशा दिखायी उपलक्षणको स्वरूप पहिले लिख्यो हे.

संस्कृत टीका

२३ रंगे ते रमता

रंगे ते रमता डीठडा बलदेव श्रीगोविंद ।।
ए पुत्रभावें प्रगटशे मन उपनो आनंद ।।२३।।

ते सो वह जाको वर्णन कियो सो. **रंग** सो रागादिक सहित नृत्यको स्थान वृंदावन ताके विषें. अथवा. रंग. सो आनंद ताकरिकें. **बलदेव** बल जो पराक्रम ता करिकें देव सो क्रीडा करिवेवारे प्रमाणरूप. ओर श्रीसहित गोविंद सो [१०५]अनन्याश्रित व्रजके पति प्रमेयरूप श्रीकृष्ण तिन दोनोंको. **रमता डीठडा** बालभावतें खेलते देखे याहीतें. ए पुत्र भावें प्रगटशे मन उपनो आनंद. ये पुत्रभावतें प्रकट होयकें ऐसेही बाललीलाको सुख देहिंगे. यह आनंद श्रीमहाप्रभूनके मनमें उत्पन्न भयो. याहीतें श्रीमहाप्रभुजी भूतलमें जहांतांई बिराजे तहांतांई प्रायशः गोपीनाथजी श्रीविटठलनाथजीके बाललीलाको ही अनुभव कियो ओर पुत्रभावें ऐसे निरूपण कियों यातें लौकिकभावकी निवृत्ति करी. ओर अलौकिक भावात्मक स्वरूपको सूचन कियो सोई श्रीमद्भागवतमें. [१०६]यद्यद्धियात उरुगाय विभावयंतितत्तद्वर्पुनः प्रणयसेसदनुग्रहाय इत्यादिक स्थलके विषें स्फुटनिरूपण कियो हे याहीतें पुत्रभावें. ऐसे कह्यो ।।२३।।

अब बलदेवजी ओर श्रीकृष्ण श्रीवल्लभाचार्यजीके घर प्रगट भये ताको प्रत्यक्षानुभव गोपालदासजीकों भयो ताको स्फुट वर्णन करत हे.

१०५. व्रजको इंद्रयागरूप अन्याश्रय छुडाये पीछे जब इंद्रने वृष्टि कीनी तब प्रभुनने तस्मान्यमच्छरणगोष्ठमन्नाथंमत्परिग्रहं. यह विचार करिकें गायगोप प्रभृतिनकी रक्षा कीनी फेर याही कारणतें इंद्रनें ओर सुरभीनें अभिषेक करिकें गोविंद ऐसो नाम धर्यो हे तातें इहां टीकामें जो गोविंद शब्दको अर्थ कियो सो युक्त हे.

१०६. याको अर्थ पहिलें लिख्यो हे फलितार्थ यह जो भक्त जेसी भावना करे तेसोही प्रभु स्वरूप धरे.

संस्कृत टीका

२४ बलदेव श्रीगोपीनाथ

बलदेव श्रीगोपीनाथ कहिये श्रीविटठल नंदनंद ।।
ए वेदपथ विस्तारशे जन आपशे आनंद ।।२४।।

जिनकों श्रीगोपीनाथजी. **कहियें** सो कहत हें. ते बलदेवजीको स्वरूप हें. ओर जिनको श्रीविटठल कहत हें ते [१०७] **नंदनंद** जे फलरूप श्रीकृष्ण ते हें. अब दोउ स्वरूपकों कार्य कहत हें. एवेदपथविस्तारशे यह वेदपथ जो मर्यादा ताको स्थापन करेंगे श्रीगोपीनाथजी ओर

श्रीविटठलनाथजी. **जनआपशे आनंद** जन जो दैवीजीव तिनकों आनंद देहिंगे. अथवा. दोउ स्वरूपनके दोई कार्य हें. अथवा. ऐसो यह जामें गोपालदासजीकों अंगीकार कीये हें ऐसो वेदपथ जो वेदप्रतिपादित पुष्टिमार्ग ताको दोउ जन विस्तार करेंगे ओर जन सो अभी जन्ममरण दुःखित ऐसे जे दैवीजीव तिनकों आनंद सो अगणितांनंदरूप पुरुषोत्तम तिनकों प्राप्त करेंगे याको फलितार्थ यह जो वेदप्रतिपादित ऐसे जे स्वमार्गीय सेवादिसाधन ते करवायके जीनकों पुरुषोत्तमकी प्राप्ति आप करावेंगे याहीतें. एवेदपथविस्तारशे जन आपशे आनंद यह कह्यो ।।२४।।

१०७. नंदरायजीके नंद सो नंदन पुत्र.

संस्कृत टीका

२५ त्यांथी केशिघाट

त्यांथी केशिघाट पाउधारिया कहि कथा तत्वसमाधि ।।
रसपुंज पुरुषोत्तम प्रमाण्या सरस्वती तजिआधि ।।२५।।

त्यांधी सो जहां श्रीबलदेव श्रीकृष्णके दर्शन भये ता स्थलतें. **केशिघाटपाउधारिया** वृंदावनमें केशिघाट प्रसिद्ध हे तहां पधारे. फेर तहां कहा कियो सो कहत हें. **कहिकथा** दामोदरदासादिक हते तिनकों कथा कही सो कहा कथा कही या शंकाको निवारण करत हें. **तत्वसमाधि** तत्व जो श्रीकृष्ण तिनके विषें समाधि सो चित्तकी एकाग्रता जातें होय ऐसी निरोध फलकथा कही. अथवा. तत्व. जो वेदशास्त्रपुराणादिकनको तत्व तारूप ऐसी जो. समाधि. सो

समाधि भाषा व्यासजीकी श्रीमद्‌भागवतरूप ताकी कथा कही. अथवा. तत्व. जो श्रीमद्‌भागवत तत्वदीप आपनें ग्रंथ कियो हे तदनुसार समाधिभाषा जो श्रीमद्‌भागवत ताकी कथा कही. अथवा. तत्व. जो तत्वसूत्र व्याससूत्र ओर. समाधि. जो श्रीमद्‌भागवत तिनतें कथा कही सो उपदेश कियो. अब उपदेशमें कहा सिद्धांत कह्यो सो कहत हें. **रसपुंज पुरुषोत्तमप्रमाण्या** श्रीपुरुषोत्तम रसरूप हें. यह सिद्धांत श्रुतिस्मृतिव्याससूत्ररूपप्रमाणसों सिद्ध कियो. अब रसरूप सो सर्वरसरूप यह [११०८]वेदमें निरूपण कियो हें अब सर्व रसरूप हें. परंतु [१०९]परिछिन्न स्वरूप होयंगे. यह शंका निवारणार्थ ओर [११०]रसकी स्थिति निराश्रय केसें संभवे याहु शंकाके निवारणार्थ पुंजशब्द कह्यो यातें [१११]सर्वरसाभिन्नपरिछिन्न पुरुषोत्तम हें यह सूचन कियो. अब सर्व रसरूपत्व निरूपण कियो यातें जो जो रसके जो जो अंग हें तदभिन्न पुरुषोत्तम हें यातें मायावादी निराकार मानत हें ताको निराकरण कियो ओर [११२]सर्वरसाभिन्नानंदैकरूपविग्रहवान्. हें यह सिद्ध कियो. शंका. परब्रह्मस्वरूप तो निर्गुण निराकार हे ओर विग्रहादि विशिष्ट स्वरूप तो [११३]विद्योपहितचैतन्य जाकों ईश्वर ऐसें कहत हें ताको ये यातें यह स्वरूप तो परब्रह्मको नहीं होयगो. यह शंका निवारणार्थ पुरुषोत्तम शब्द कह्यो. पुरुषोत्तम सो अक्षरतें हू उत्तम हें सोई श्रीमद्‌भगवद्‌गीतामें. [११४] यस्मात्क्षरमतीतोहमक्षरादपिचोत्तमः. अतोस्मिलोकेवेदेचप्रथितः पुरुषोत्तमः. या श्लोकमें प्रभूननें आज्ञा कीनी हे ओर याही रीतसों **कठवल्ली ब्रह्मवल्ली मुण्डकप्रभृतिउपनिषदनमें** पुरुषोत्तम स्वरूप निरूपण करिकें विनको आनंदरूपाकारत्व निरूणण कियो हे. ओर यह ही निर्णय तत्वसूत्रमें हू तृतीयाध्यायतृतीयपादमें स्फुट हे तासों निर्गुणनिराकाप्रतिपादक श्रुतिवाक्य केवल प्राकृत धर्म ओर प्राकृताकारको निषेध करत हें. अप्राकृतको निषेध करत नाहि ये सब वेदादिप्रमाणनमें अति स्फुट हें. ओर तदनुसार श्रीमहाप्रभूननें हू आछी रीतसूं विवेचन कियो हे ताहीतें रसपुंजपुरुषोत्तमप्रमाण्या ऐसें कह्यो. अब ऐसो सिद्धांत स्थापन कियो तब कहा भयो सो कहत हें. **सरस्वती तजिआधि** सरस्वती जो वाग्देवता तानें आधि जो मनोव्यथा ताको त्याग कियो. याको अभिप्राय यह जो ओर मतवारेनकों सरस्वतीके निरूपण कियो यातें सरस्वतीकों बहोत मनोव्यथा हती ओर आप तो सरस्वतीके पति हें यातें वाके हृदयको सब अभिप्राय जानत हें तातें यथार्थ पुरुषात्तमको स्वरूप निरूपण कियो तब सरस्वतीनें आधि जो मनोव्यथा ताको त्याग कियो. सोई श्रीविटठलनाथजीनें वल्लभाष्टकमें. [११५]नह्यन्योवागधीशाच्छु तगणवचसांभावमाज्ञातुमीष्टेयस्मात्साध्वीस्वभावंप्रकटयतिवधुरग्रतःपत्युरेव. या श्लोकमें निरूपण कियो हे याहीतें सरस्वतीतजीआधि यह कह्यो ।।२५।।

अब वृंदावनते गिरिराजजी पधारे ताको निरूपण करत हें.

१०८. छांदोग्यउपनिषदमें शांडिल्यविद्यामें भगवान् सर्वकाम हें सर्वगंध हें सर्वरस हें ऐसो कह्यो हे.

१०९. मनुष्यादिकनकीनांई परिमित हे स्वरूप जिनको ऐसे होयंगे व्यापक न होयंगे.

११०. रस सो पात्रों पदार्थ पात्रादिरूप कछु भी आश्रय बिना रिह सके नहि ओर श्रृंगारादि रस हू नायक नायीकादिरूप आश्रय बिना रहि सके नाहि.

१११. श्रृंगारादि सर्व रसरूप ओर अपरिछिन्न सो व्यापक.

११२. यह सर्वरसन्सो जे वेदमें तथा दशमस्कंधादिकमें भगवल्लीला मात्र विषयके सर्वथा प्राकृतवस्तुसम्बन्धरहित जे वर्णन किये हे ते समझने लौकिकरस न समझने प्रभुनको विग्रह सो स्वरूप अलौकिकसर्वरसात्मक और आनंदमात्ररूपहस्तपादादि सहित ऐसो हे.

११३. विद्या सो शुद्धसत्वप्रधान माया तातें बांध्यो भयों ऐसो जो निर्गुणब्रह्मचैतन्य ताको शंकरमतमें शबलब्रह्म ईश्वर ऐसें कहत हे ओर वाहीको जगत्कर्ता मानत हे ताको सुलभयुक्तिसों खंडन मेने वेदांतचिंतामणि शुद्धाद्वैतचंद्रोदयादि ग्रंथनमें लिख्यो हे.

११४. जातें प्रभु जगततें या जगततें पर हें ओर अक्षरब्रह्मतें हू उत्तम हें ताहीतें शास्त्रमें तथा वेदमें पुरुषोत्तम कहे जात हें.

११५. वाणीके पति जे श्रीमहाप्रभुजी तिनबिना ओर कोई वेद समूहके वचनको तात्पर्य यथा जानिवेको समर्थ नांहीं क्यों जो पतिव्रता स्त्री पतिके आगें ही आपुनो तात्पर्य स्फुट करे यह बात कऋग्वेदकी एक ऋचामें हू हे सो विषय वल्लभस्तोत्रकी टीकामें मेने लिख्यो हे और प्रभुननें हू गीताजी तथा एकादशस्कंधमें वेदांतकृद्वेद विदेवचाहं. इत्षस्याहृदयंलोकेनान्योमद्वेदकश्चन. इत्यादि श्लोकनमें यह ही आज्ञा कीनी हे.

संस्कृत टीका

२६ गिरिराजनें आश्वास

गिरिराजनें आश्वास दीधो धरी कोमलचरण ।।
हरखें ते सामा आविया श्रीगोवर्द्धनउद्धरण ।।२६।।

गिरिराज गिरि जो पर्वत तिनके राजा. अथवा. गिरि जो पर्वत तिनके विषें अत्यंत [११६]शोभावान्. अथवा. गिरि जो पर्वत तिनके विषें अलौकिक तेजवारे. ऐसो जो गोवर्द्धनर्पवत ताकों आपनें कोमलचरण धरिकें श्रीवल्लभाचार्यजीनें. **आश्वास दीधो** सो धीरज दीनी. शंका. श्रीनाथजी तो जब गिरिराजजीके उपर बिराजत हते तब गिरिराजजीकों कहा दुःख हतो जो आपनें धीरज दीनी. प्रत्युत्तर. श्रीमद्भागवतदशमस्कंधके विषें. [११७]हरिदासवर्यः. ऐसो नाम कह्यो हे यातें भगवद्भक्तनमें गिरिराजजी श्रेष्ठ हें यातें श्रीनाथजीको ओर श्रीवल्लभाचार्यजीको परस्पर विरहताप इनसों सहन होत नाहीं तासों दुःखी हते तातें उनको श्रीमहाप्रभुननें कोमलचरण धरिकें स्पर्शसुख दीयो ओर यह आश्वास सूचन कियो जो अब हम दोउ स्वरूप मिलेंगे ता सुखको तुमकों अनुभव होयगो. ओर वंशद्वारा अनेक वर्ष तुमकों आनंद देहिंगे याहीतें गिरिराजने आश्वास दीधो धरीकोमल चरण ऐसें कह्यो सोई आगे स्फुट करत हें. **हरखें तेसामाआविया** ते सो वे जिननें झाडखण्डिमें आज्ञा कीनी हती ते. सामा आविया सन्मुख पधार वे कौन सो कहत हें. **गोवर्द्धनउद्धरण** गो जो स्वर्ग ताको वर्द्धन सो पोषणकरनहार इंद्र ताकों गर्वरूप समुद्रतें उद्धारकरनहारे. अथवा. गो जो वाणी ताकी अपनें यशतें वृद्धि करनहारे ओर उद्धरण सो स्वकीयनको उद्धार करनहारे. अथवा. गो जो गाय. तिनके वर्द्धन सो तृणजलादिकतें वृद्धि करनहारे पर्वत श्रीगिरिराजजी तिनके उद्धरण सो उठायवेवारे. सो गोवर्द्धनउद्धरण श्रीनाथजी सो सन्मुख पधारे ।।२६।।

११६. राजादीप्तौ या धातुको अचप्रत्ययांत राजशब्द मानिकें शोभाको ओर तेजको अर्थ कियो.

११७. वेणुगीतमें हंतायमद्रिरबलाहरिदासवर्यः या श्लोकमें यह नाम कह्यो हे याको अर्थ हरिके दास सो सात्विक भक्त तिनमें हू श्रीगिरिराजजी वर्य सो श्रेष्ठ हें क्यों जो निर्गुणभक्त हें प्रभुनके सुखसुं ही सुखवान हें सो सब बात याही श्लोकके श्रीसुबोधिनीजीमें स्फुट हे याहीतें श्रीनाथजीकों प्रत्यक्ष पुष्टिमार्गीय सेवारहित बिराजते देखिकें दुःखी हते परंतु अब श्रीमहाप्रभुनके संयोगसों यथोचित सर्वसेवामार्गकी प्रवृत्ति होयगी ऐसें जानिकें आश्वास प्राप्य भये ये ही अभिप्राय टीकामें सूचन कियो.

२७-२८ हली मनीने

हली मनीने चालीया चरणाट ज्यां निजधाम ।।
नवरंगनागर प्रगटिया मनपूरवा बहु काम ।।२७।।

हलीमलीने सो श्रीनाथजीसों हिलिमिलिकें इतनें परस्पर स्वमनोगतकथनपूर्वक मिलकें. **चालिया** सो पधारे सो कहां पधारे सो कहत हें. **चरणाटज्यांनिजधाम** चरणाद्री काशीसों सात कोस हें वहां शिलामें प्रभुनके चरणारविंदको चिह्नहे ता पर्वतकी तरहटीमें. निजधाम सो आपको घर हे तहां पधारे. अब निजधाम कह्यो यातें यह सूचन कियो जो. काशीमें आपको सासरो हे तहां पधारिकें उहां तें महालक्ष्मीजीकों संगलेके कछु दिन अडेलमें बिराजे वहां श्रीगोपीनाथजीको प्राकटय भयो. फेर चरणाटमें पधारिकें घर करिकें बिराजे. अब वहां श्रीगुसांईजीको प्राकटय भयो सो कहत हें. **नवरंगनागरप्रगटिया** नव सो नित्यनवीन रंग सो रसादिकनृत्यको स्थान वृंदावन ताके विषें नागर सो विहारचतुर श्रीकृष्ण सो प्रगट भये. अथवा. नवरंग. सो [११८]तदेवरम्यंरुचिरं नवंनवमित्यादिवचनसों प्रतिक्षण नवीन ऐसो रंग जो भक्ति आनंद तामें नागर सो चतुर ऐसे श्रीगुसांईजी प्रकट भये. अब प्रभुनको प्राकटय प्रयोजन विना होय नहीं यातें प्रयोजन कहत हें. **मनपूरवाबहुकाम** मन जो श्रीमहाप्रभुनको मन ताके काम जो मनोरथ सो बहु अनेक तिनकों पूर्ण करिवेकों प्रकट भये ।।२७।। अब श्रीगुसांईजीकी आज्ञातें माहात्म्यपूर्वक श्रीगुसांईजीके प्राकटयपर्यंत श्रीवल्लभाचार्यजीको चरित्र ।।२८।। अटठाइस तुकसों वर्णन कियो ताको कारण निरूपण कहत हें. ओर श्रीगुसांईजीको वर्णन करिवेकी आज्ञा मांगत हें.

११८. जा वस्तुमें भगवत्सम्बन्ध होय सो ही मनोहर रुचिकारी प्रतिक्षणनवीन होत हे ऐसें श्रीभागवतमें कह्यो.

संस्कृत टीका

२९ तत्वसङ्ख्यायें

तत्वसङ्ख्यायें कह्यां पद सारमांहे सार ।।
हवे कांई एक स्तुति करुं श्रीवल्लभराजकुमार ।।२९।।

तत्व जे [११९]अटठाईस तत्व तिनकी. **सङ्ख्या** सो अटठाइस तितने. **पद** सो तुक [१२०]ध्रुवपद सहित अटठाइस कही. यातें सब तुकनकों तत्व रूपत्व सूचन कियो. ओर ये तुक केसी हें. **सारमाहेंसार** सार जो श्रीमहाप्रभुनके चरित्रको वर्णन ताहूमें सार सो मुख्यचरित्रको वर्णनरूप हे. यातें यह सूचन कियो जो यासों अधिक मेरी वर्णन करिवेकी सामर्थ्य नहीं हे. अब फेरी श्रीगुसांईजीके वर्णनकी आज्ञा मांगत हें. **हवेकांई एकस्तुतिकरुं** अब कछुक स्तुति सो वर्णन करों अब तुम कहा वर्णन करोंगे ऐसें आप श्रीगुसांईजी कदाचित् पूछें ताको प्रत्युत्तर सूचन करत भये संबोधन कहत हें. **श्रीवल्लभराजकुमार** श्रीवल्लभ जिनको नाम हे ऐसे राज जो सब आचार्यनमें श्रेष्ठ तिनके कुमार सो पुत्र. यातें यह सूचन कियो जो आप श्रीवल्लभाचार्यजीके घर पुत्ररूपसो प्रकट भये ता चरित्रको वर्णन करों. ओर कुमार शब्दतें आगें वर्णनकी वृद्धि सूचन कीनी [१२१]द्वितीयेवल्लभविभोर्माहात्म्यंचरितंमुदा. वर्णितं विटठलाधीश प्रादुर्भावावधिप्रियम् ।।११।।

।। इति श्रीमद्बालकृष्णचरणैकतान श्रीमद्गोवर्द्धनगुरुपद्म पराग प्राप्त परमोदय श्रीमद्गोकुलोत्सवात्मज जीवनाख्येनविरचितं द्वितीयाख्यानं समाप्तिमटीकत ।।२।।

११९. अब तत्व अटठाइस हें यह बात तो निबंधादिकग्रंथनमें अष्टाविंशतितत्वानां स्वरूपंयत्रवैहरि इत्यादिक स्थलमें प्रसिद्ध हे.

१२०. इहां ध्रुवपदसों लछमनसुत श्रीवल्लभराय यह तुक.

१२१. अब यारीतसों गोस्वामी श्रीजीवनजी महाराज द्वितीयाख्यानको व्याख्यान करिके या आख्यानके संपूर्ण तात्पर्य संक्षेपसों एक श्लोकमें वर्णन करत हें ता श्लोकको अर्थ दूसरे आख्यानमें सर्व समर्थ ऐसे जो श्रीमहाप्रभुजी तिनको माहात्म्य तथा श्रीगुसांईजीके प्राकटय पर्यंतको सब भक्तनकों प्रिय ऐसो श्रीमहाप्रभुनको चरित्र आनंदपूर्वक वर्णन कियो अब गोपालदासजीनें संन्यासग्रहणादि चरित्रको वर्णन क्यों न कियो या शंकाके निवारणार्थ या श्लोकमें प्रियपद कह्यो याको फलितार्थ यह जो संन्यासग्रहणादि चरित्र बहुत करिकें माहात्म्यबोधक हे परंतु सदादर्शनाद्यभिलाषि भक्तनकों तो वह चरित्र प्रिय लगत नहि तातें या आख्यानमें वर्णन न कियो ओर या आख्यान श्रीमहाप्रभुनके माहात्म्यको तथा चरित्रको वर्णन कियो हे ऐसे या श्लोकमें लिख्यो ताको भावार्थ यह जो या आख्यानके अर्थ विचारपूर्वक पाठतें जीवनकों श्रीमहाप्रभुनकी भक्ति उत्पन्न होत हे क्यों जो माहात्म्यज्ञानपूर्वक प्रभूनमें जो आछी रीतितें द्रढ स्नेह होय सो ही भक्ति कही जाय तामें इहां अग्निकुंडतें प्रादुर्भावादिक सुनिकें माहात्म्य ज्ञान होत हे ओर आप पूर्णकाम हें तथापि जीवनके लियें देशांतर प्रवेशादिक श्रम करत हें इत्यादि चरित्रनके श्रवणतें सुद्रढ स्नेह होत हे ताते यथार्थ भक्ति सिद्ध भई अब या आख्यानको अर्थको दोहा-श्रीवल्लभमहीमा कह्यो, इहदुजे आख्यान ।। श्रीविटठल विभूजन्मलगी, चरितवरनिसुखखान ।।१।।)

।। इति श्रीस्वमातामहगोस्वामिश्रीव्रजवल्लभचरण सेवकस्यपंचनदिघनश्यामभटटात्मजगोवर्द्धनाशुकवेः कृतंद्वितीयाख्यानटिप्पणं ।। संपूर्ण ।।

संस्कृत टीका

तृतीयाख्यान

१ आ पोस मध्याने

श्री हरिः. अब द्वितीयाख्यानमें श्रीमद्वल्लभाचार्यजीको चरित्र वर्णन करिकें पीछें श्रीगुसांईजी प्रकट भये यह वर्णन कियो. अब तृतीयाख्यानके विषें श्रीगुसांईजीके प्राकटयके आनंदको यथास्थित वर्णन करत हें. राग धन्याश्री. अब आपके प्राकटयसों सह भूतल और दैवीजीव धन्य हें यह सूचन करिवेकों धन्याश्रीरागमें तृतीयाख्यानको गान कियो. अथवा. रागकी तीन प्रकारकी जाति हें. [१]ओडव १ षोडव २ संपूरण ३ तामें धन्याश्रीराग संपूरण हे यातें श्रीविटठलावतार अंशकलावतार नहीं हे पूर्णावतार हे यह सूचनार्थ संपूर्ण राग धन्याश्रीमें तृतीयाख्यानको गान कियो.

आ पोस मध्याने नोम श्रीनाथजी अक्काजीउर ऊपनो आनंद ।।
आचंदवृंदावनतणो प्रगटियो ।।१।।

आ सो जिनके प्रत्यक्ष दर्शन होत हें ते. **प्रगटियो** प्रकट भये. सो कोन सो कहत हें. **श्रीनाथजी** श्री जो रुक्मिणीजी पद्मावतीजी तिनके नाथ सो पति. वे कब प्रकट भये सो कहत हें. **पोस मध्यानेनोमे** पोष मासमें [२]मध्याह्नसमयके विषें नोमीके दिन अर्थात् नवमीके मध्यभागमें. तब कहा भयो सो

कहत हें. **अक्काजीउरऊपनोआनंद** [३]अक्काजी सो [४]मातृचरण श्रीमहालक्ष्मीजी तिनको उर सो हृदय ताके विषें आनंद उपनो आपके प्राकटयतें आनंद भयो. अथवा. [५]आनंदात्मक स्वरूपतें आप प्रकट भये ताको हेतु कहत हें. **आचंदवृंदावनतणो** वृंदावनको चंद वृंद जो दैवीजीवके वृंद सो समूह तिनके [६]अवन सो अधिपति अर्थात् उनमें मुख्य ऐसे जे ब्रह्मादिक तिनके चंद सो आनंद देवेवारे अथवा. वृंद. सो व्रजभक्तनके समूह तिनके. अवन. सो अधिपति स्वामिन्यादिक तिनके हू. चंद. सो आनंद देवेवारे क्यों जो चदिआह्लादनेधातुको चंद यह शब्द होत हे याको अर्थ यह जो चंद सों आनंददेवेवारो यातें. अथवा. वृंदावन जो लीलास्थान ताके चंद सो चंद्रमा सुखदेवेवारे. अथवा. श्रीकृष्णको जन्म भयो ता समयके वर्णनमें श्रीशुकदेवजीने वर्णन कियो. आविरासीद्ययाप्राच्यांदिशींदुरिवपुष्कलः. यामें अर्थ यह जो जेसें प्राचीदिशाके विषें पूर्णचंद्रको उदय होत हे तेसें आप देवकीजीतें प्रकट भये. याको फलितार्थ यह जो प्राचीदिशातें चंद्र आवत हे कछु उत्पन्न होत नहीं. परंतु लोकको उत्पन्न भयो ऐसें भासत हे. तेसें श्रीकृष्णको देवकीजीतें प्रादुर्भावमात्र भयो. कछु ओरजीव उत्पन्न होत हें तेसें प्रकट नहीं भये. तेसें या विटठलावतारमें हू प्रादुर्भावमात्र भयो. ओर जीवकीनाई उत्पन्न नहीं भये यह सूचन करिवेकों अक्काजीउरऊपनोआनंद आचंदवृंदावनतणो प्रगटियो ऐसें कह्यो. ओर श्रीअक्काजीके मनमें ऐसें आयो जो आचंदवृंदावनतणो यातें जेसे श्रीकृष्णके जन्म समयके विषें श्रीदेवकीजीकों यथार्थ पुरुषोत्तमस्वरूपको ज्ञान भयो तेसें श्रीअक्काजीकों हू यथार्थ पुरुषोत्तम स्वरूपको ज्ञान भयो यह फलितार्थ भयो. अब पौषमासमें प्रकट भये ताको अभिप्राय यह जो पुष्टपुष्टौधातुको रूप पौष यह हे. यातें पुष्टिमार्गको ओर दैवीजीवनको पोषण करिवेकों आप प्रगटे हें ओर मध्य भागवाचक इहां मध्याह्न शब्द कह्यो ताको अभिप्राय यह जो जेसें मध्याह्नके समयमें सूर्य पूर्ण तेजोमय होत हें सबनके मस्तक उपर आवे हें तेसें आप हू सबनके शिरोमणि हें पूर्णतेजोमय पुरुषोत्तम हें. अब नवमीके दिन आप प्रकट भये ताको अभिप्राय यह जो. श्रीरामचंद्रजी नवमीकों प्रकट भये ओर मर्यादाको स्थापन कियो तेसें आप हू वेदमर्यादाको स्थापन करेंगे. अथवा. श्रीकृष्ण पुरुषोत्तम हें ओर आप हू पुरुषोत्तम हें परंतु या अवतारमें श्रीकृष्णावतारतें अधिक बात हे. कृष्णावतार तो क्षत्रियकुलमें भयो ओर श्रीविटठलावतार तो ब्राह्मण कुलमें भयो यातें श्रीकृष्णावतार अष्टमीकों भयो ओर आप नवमीके दिन प्रकट भये. अथवा. नवंकों अंक हे सो पूर्ण है यातें आप पूर्ण पुरुषोत्तम हें यह सूचनार्थ नवमीके दिन प्रकटे. इत्यादिक अनेक अभिप्रायते पोषमध्यानेनोमें ऐसें कह्यो ।।१।।

(१.सा री ग म प ध नी इन सात सुरनमें तें जिन रागनमें पांच ही सुर लगत हें ते ओडव कहे जांय जेसें मालकोंस, हिंडोलप्रभृति ओर छः सुरके राग सब षाडव कहे जाय जेसें रातकी पुर्यामारवा प्रभृति ओर सात स्वरके राग सब संपूर्ण कहे जाय जेसें गोडसारंग धन्याश्रीप्रभृति.

२. यह मध्याह्न समय सो नवमीको मध्य भाग लेनों क्यों जो जा दिन आप प्रकट भये ता दिन औदयिक अष्टमी घटी ९ ओर २९ हती तदुपरांत नवमी हती तामे नवमीकी घटी २१ ओर पल २५ को आपके प्राकटयको इष्टकाल हे सो रात्रि विना आवे नहि ओर आपको प्राकटय वृषलग्नमें हे सो वृषलग्न हू सूर्य धनुस्थ होय तब अवश्य सायंकालमें ही आवे तासूं आपको प्राकटय नवमीके मध्यभागमें हे दिनके मध्याह्न समें संभवत नहि यह सब निश्चय मेरे गुरुदेव नानाजी गोस्वामि श्रीव्रजवल्लभजी महाराजनें करिकें गुर्जर भाषामें श्रीगुसांईजीके प्राकटयको एक धोल कियो हे सो प्रसिद्ध हे.

३. अक्का ऐसो माताको नाम संस्कृतमें प्रसिद्ध हे.

४. यह चरणशब्द महत्तसूचक हे जेसे आचार्यचरण प्रभुचरण तातचरण इत्यादि स्थलनमें.

५. प्रभुनको प्रादुर्भाव हृदयतें ही होत हे प्राकृत जनकीनाई प्रभुनकों गर्भसम्बन्ध होत नाही सोही अभिप्राय श्रीभागवतमें आविवेशांशभागेनमन आनकदुंदुभेः दधारसर्वात्मकमात्मभूतंकाष्ठायथानंदकरंमनस्तः देवक्यांदेवरूपिण्यांविष्णुः सर्वगुहाशयः इत्यादि श्लोकनमें श्रीशुकदेवजीनें निरूपण कियो हे ओर कृष्णजन्मखंडमें हू यह बात स्फुट हे.

६. अवन सो रक्षक अर्थात् अधिपति अवरक्षणे या धातुतें यह शब्द सिद्ध होत हे.

संस्कृत टीका

२ सौभाग्यसुंदरी

सौभाग्यसुंदरी मली धवल गाये ।।
सुहाय रुडा कंठना नाद आह्लाद उपनो ते अंगो अंग घणो ।।२।।

सौभाग्यसुंदरी सौभाग्यवती स्त्रीयें अब स्त्रीवाचक सुंदरी शब्द कह्यो यातें सब स्त्रियें रूपगुण वय करिकें युक्त हें यह सूचन कियो. वे. **मलीधवलगाये** अब मल्लीधवलगाय ऐसें कह्यो यातें यह सूचन कियो जो अपनी इच्छातें ही मिलिकें धोल गावत हें याहीतें. **सुहायरूडाकंठनानाद** रूडा सो सुंदर [७]कंबुजेसे कंठ तिनके नाद सो ध्वनि ते सुहाय आछे [८]कोकिलाके नादजेसे लगत हे केसें जो अपनी इच्छातें आनंदसो गान करे सोई आच्छो होय यह अनुभव सिद्ध हे याहीतें मलीधवल-गायसुहायरूडाकंठनानाद. ऐसें कह्यो याको हेतु कहत हें. **आह्लादउपनो** आनंद उत्पन्न भयो याहीतें सुंदर गान कियो. अथवा. जिननें वह गान श्रवण कियो तिनकों आनंद उत्पन्न भयो. अब सुंदरगान कियो ताके श्रवणको ही आनंद उत्पन्न भयो होयगो यह शंका निवारण करत हें. ते. सो वह [९]वेदमें हू जाकी गणना होय नहीं सकी ऐसो पुरुषोत्तमके प्राकटयको आनंद कछू गान श्रवण मात्रको नाहीं याहीतें. **अंगोअंग** ऐसें कह्यो गानको आनंद तो श्रवणकों ही होत हें. ओर अंगकों नहीं होत हे. अब पुरुषोत्तमको आनंद अगणित हे. ओर अंगोअंग कह्यो यातें तो [१०]अंगपरिच्छिन्न आनंद भयो या शंकाको निवारण करत हें. घणो. सो बोहोत. याको भावार्थ यह जो अंगोअंग घणो. यह तो वर्णन रीततें कह्यो परंतु पुरुषोत्तम तो अगणितानंद हें याहीतें आह्लादउपनोतेअंगोअंगघणो ऐसें कह्यो ।।२।।

अब पुरुषोत्तम प्राकटयको असाधारण चिह्न निरूपण करत हें.

७. कंबु सो शंख याकी उपमा गरेकू दीनी जाय हे.
८. कोकिल सो कोयल.
९. पुरुषोत्तमके आनंदको अगणितपणो ब्रह्मवल्ली बृहदारण्यकादिक उपनिषदमें स्फुट हे.
१०. अंगपरिच्छिन्न सो जितनो बडो अंग हे तितने ही परिणामको.

संस्कृत टीका

३ सूतिकासदन सुहामणुं

सूतिकासदन सुहामणुं शोभा रुडी लहेरडे जाय ।।
आ वाय वादित्र ते समेतणां ।।३।।

अब ओर शोभा वर्णन कीनी सो ठीक परंतु [११]सूतिगृहतो अत्यंत अपवित्र ओर दुर्गंधयुक्त होत हे या शंकाको निवारण करत हें. **सूतिकासदन सुहामणुं** सूतिकासदन सो आप प्रकट भये यह सुहामणुं अत्यंत शोभायुक्त पवित्र हे. ओर सूतिगृह केसो हे सो कहत हें. **शोभारूडीलेहेरडेजाय** अब शोभाकों रुडी कही यातें अलौकिकत्व सूचन कियो ओर [१२]लेहेरडे जाय ऐसे कह्यो याते सुंगधरूप शोभा सूचन कीनी नाहीं तो ओर शोभाको जानो संभवे नहीं क्यों जो शोभा जाय तो ओर हू विरूप होय यातें शोभारूडीलेहेरडेजाय सो सुगंधकी लेहेर चलरही हे. यातें अपावित्र्य ओर दौर्गंध्य दोइनको निवारण भयो. श्रीकृष्णावतारमें हू ऐसें ही **दशमस्कंधतृतीयाध्यायमें** वर्णन कियो हे [१३]स्वरोचिषाभारतसूतिकागृहंविरोचयंतं. या श्लोकमें ओर कहा भयो सो कहत हें. **आवायवादित्रतेसमेतणां** तेसमें तणां सो पुरुषोत्तमको प्रादुर्भाव होत हे ता समयके आ सो ये अलौकिकवादित्र वाय सो बाजत भये. अब बजायवेवारेको नाम नही कह्यो ओर वादित्रवाय ऐसें कह्यो यातें अदृश्य [१४]अलौकिक बाजे बजे यह सूचन कियो ।।३।।

ऐसें पुरुषोत्तम प्राकटयके असाधारण चिह्नको निरूपण करिकें वैदिक कार्यको निरूपण करत हें.

११. सूति सूतिका यह सब सूवावडी स्त्रीके नाम हे ओर सदन सो घर.
१२. लहेरडेजाय सो जेसें जलकी लहर उठे तेसें वा समें शोभाकी लहर उठन लागी इतने क्षणक्षणमें नयी नयी अत्यंत शोभा दीखन लागी.

१३. हे राजा परीक्षित आपनी कांतीतें देवकीजीके काराग्रहकों अत्यंत शोभायुक्त करते ऐसे जो प्रभु तिनकी वसुदेवजी स्तुति करत भये ऐसें श्रीशुकदेवजीनें कह्यो हे.

१४. कृष्णावतारमें हू ऐसें ही अलौकिक बाजे बजवेको वर्णन दशमस्कंधके तृतीयाध्यायमें तथा पंचमाध्यायमें नेदुर्दुंदुभयोदिवि अवाद्यंतविचित्राणिवादित्राणिमहोत्सवे इत्यादि श्लोकनमें कियो हे तातें टीकामें याको पुरुषोत्तमावतारको चिह्न बतायो सो योग्य हे.

संस्कृत टीका

४ सर्वस्वदान तेणें

सर्वस्वदान तेणें समें करे रे श्रीवल्लभजी उदार ।।
सुकुमार सुत उदयो श्रवणें सुणीं ।।४।।

सर्वस्वदान सर्व सो सब प्रकारको स्व जो दान द्रव्य ताको. **तेणेंसमें** वा समें जा समें श्रीगुसांईजी प्रकटे ता समें. **दान करें** अथवा. **सर्वस्व** सर्वद्रव्य ताको दान वा समें कियो. अब सर्वद्रव्यको दान वा समें कर दियो तब आगे वैदिक लौकिककर्म कर्तव्य हते सो द्रव्य विना केसों किये होयंगे या शंकाको निवारण करत हें. **श्रीवल्लभजी** श्री जो लक्ष्मीजी तिनके वल्लभ सो स्वामि. याको भावार्थ यह जो लक्ष्मीजीके कटाक्षलेशमात्रतें अतिद्रव्यवारो मनुष्य होत हे तो आप तो विन लक्ष्मीजीके हू पति हें तिनको कहा द्रव्यकी न्यूनता होय याहीतें आपनें कृष्णावतारमें सुदामाको अतुल्य वैभव दियो तो हू आपके वैभवमें अणुमात्र न्यूनता नहीं भई. अब कृष्णावतारमें तो सुदामा द्रव्य मांगवेकी आशासों आयो ओर वाको [१५]पृथुकोपायन भी आपनें अंगीकार कियो. ओर या

वल्लभावतारमें तो वा समे कोईनें द्रव्य निमित्त प्रार्थना हू नहीं कीनी ओर कोईको कछू अंगीकार हू नहीं कियो. ओर सर्वस्व दान कियो यह अधिकता सूचनार्थ कहत हें. **उदार** अब यद्यपि उदार होय तो हू दान देवेके दोय हेतु हें एक तो दानको समय आवे ओर दूसरो दानयोग्य पात्र आवे ये दोई हेतु ह्यां हे. तामें प्रथम हेतु कहत हें. **सुकुमारसुत उदयोश्रवणेसुणी** सुकुमार सो अत्यंत कोमल यातें सौंदर्य सूचन कियो. अथवा. [१६]सु. जो सुर देवता ओर. कु. सो पृथ्वी ओर. मा. सो लक्ष्मीजी तिनके [१७]अंगीकार करवेवारे पति ऐसे जे सुत तिनकों उदयो उदय भये ऐसें श्रवणें सो कानतै सुणी सुनिकें अब उदय कह्यो यातें जेसें सूर्यचंद्रादिकनको उदय सो आविर्भाव तेसें आपको हू प्रादुर्भाव हे. लौकिकबालककी नांई उत्पत्ति नहीं हे. ओर तेजोविशिष्ट हें यह सूचन कियो. ओर श्रवणेसुणी ऐसें कह्यो यातें. उदयास्तभाववृद्धिहासभावरहिता लौकिकते जो विशिष्टत्व सूचन कियो केसें जो सूर्यचंद्रको उदय दृष्टिसो देखिकें आनंद होत हे. ओर आपको तो उदय श्रवण करिकें ही आनंद भयो यातें अलौकिकते जो विशिष्टत्व सूचन कियो ।।४।।

१५. पृथुक सो जिनको पता चिवडा कहत हे तिनरूपी उपायन सों भेट प्रभुननें अंगीकार कीनी.

१६. नामके एकटूकतें हू आखेनामको ग्रहण शास्त्रमें होत हे तातें सू इतने सुर ऐसो अर्थ भयो कु ऐसो पृथ्वीको ओर मा ऐसो लक्ष्मीको नाम अमरकोशादिकनमें प्रसिद्ध हे.

१७. आङ्पूर्वक रादानेधातुको यह रूप होत हे तातें अंगीकार करिवेवारे यह अर्थ भयो.

संस्कृत टीका

५ पातालें शेषनाग

पातालें शेषनाग रीझिया उपर इंद्रादिक देव ।।
ततखेव सुणि निसाण वजडावियां ।।५।।

पातालमें शेषजी. **रीझिया** प्रसन्न भये. **उपर इंद्रादिकदेव** स्वर्गादिक उपर लोकनमें इंद्रादिकदेव प्रसन्न भये और उननें. **ततखेव** सो वा ही क्षण. **सुणी** श्रीविटठलनाथजीको प्राकटय भयो. ऐसें सुनकें. **निसान वजडावियां** निसाण तो उपलक्षणरीत सो कहे. यातें सब बाजे बजाये यह सूचन कियो. ओर पातालको नाम हू उपलक्षणरीतसों कह्यो यातें नीचेके सब लोकनमें आनंद भयो यह सूचन कियो. अब शेषजी रीझे याको अभिप्राय यह जो. श्रीगोपीनाथजी शेषावतार हे सो प्रथम प्रगट भये हते सों आपके प्राकटय बिना विरहको अनुभव करत हते. अभी आपको प्राकटय भयो तब विरहक्लेश दूर भयो संयोगसुख प्राप्त भयो यातें रीझियो ऐसें कह्यो. अथवा. पाषंडमतके अवलंबते अनेक जीव पृथ्वीको भाररूप होय रहे हें सो भार सब शेषजीके माथे हे ओर आप पाखंडमतको नाश करिकें वा भारकों नाश करेंगे यह शेषजीके मनमें प्रसन्नता भई याहीतें रीझिया ऐसें कह्यो अथवा शेषजी शब्दशास्त्रके आचार्य हें ओर आप द्विजकुलमें प्रकटे हें या वेदादिकशब्दनकों यथार्थ सार्थक करेंगे यातें शेषजी प्रसन्न भये. याहीतें शेषनाग रीझिया ऐसें कह्यो. अब इन्द्रादिक देव ऐसे कह्यो ओर शेषादिक ऐसें नहीं कह्यो. शेषनागरीझिया ऐसें ही केवल कह्यो ताको अभिप्राय यह जो सर्प हें ते [१८]चक्षुःश्रवा हें दृष्टीते श्रवण करत हें सो सब अधोलोकमें हें यातें देखसकत नहीं हें ता विना उत्सवसूचक जो दुंदुभिप्रभृति वाद्यके शब्द तिनकों सुनसकत नहीं हे ओर शेषजीनें तो श्रीगोपीनाथजी स्वरूपतें आपके प्राकटयके दर्शन किये यातें शेषादिक नहीं कहे. ओर शेषनाग रीझिया यह कह्यो सो युक्त हे. अथवा. श्रीविटठलावतार हे सो सत्वगुणकी वृद्धि करिवेवारो ओर तमोगुणको नाश करिवेवारो हे यातें सात्विक जे इंद्रादिकदेव ते रीझे ओर शेषजी तो आपके व्यूह हें तातें रीझे ओर सर्प तो सब तमोगुणी हें तातें उनको आनंद कहांसों होय यातें शेषादिक नहीं कहे ओर शेषनाग रीझिया यह कह्यो सो युक्त हे. उपर इंद्रादिक देव रीझिया इहां रीझिया या शब्दको [१९]देहलीदीपन्यायतें शेषनाग ओर उपर इंद्रादिकदेव इनमें सम्बन्ध हे. अब इंद्र शब्द कह्यो याको अभिप्राय यह जो इदिपरमैश्वर्ये यह धातु हे ताको इंद्र शब्द हे याको अर्थ यह जो बहोत वैभववारो यातें यह सूचन कियो जो प्रथम द्विजकुलमें जन्म प्रभूननें लियो तब इंद्रको ऐश्वर्य बलिनें लेयलियो हतो सो पाछो इंद्रकों दियो ओर अब हू द्विजकुलमें जन्म लियो हे सो ओर हू इंद्रको अधिक ऐश्वर्य बढावेंगे यातें इंद्रादिक देव रीझे यह सूचन करिवेको इंद्रादिक देव ऐसें कह्यो. ओर देवशब्दको अर्थ तो द्वितीयाख्यानके व्याख्यानमें कह्यो हे. ओर ऊपर शब्द कह्यो हे यातें उपरके सातों लोकमें आनंद भयो यह सूचन कह्यो हे यातें उपरके सातों लोकमें आनंद भयो यह सूचन कियो हे ततखेवसुणी ऐसें कह्यो यातें श्रीवल्लभाचार्यजीनें श्रीविटठलनाथजीके प्राकटयनिमित्त जो दानादिक कियो

ताको यश ऊपर स्वर्गादि सप्तलोकपर्यंत गयो ताको श्रवण करिकें श्रीविटठलनाथजी प्रकट भये ऐसें जानके बाजे बजाये यातें ततखेवसुणी ऐसें कह्यो यातें श्रीवल्लभाचार्यजीके यशको अत्युच्चगामित्व ओर शीघ्र गामित्व सूचन कियो ।।५।।

१८. चक्षु सो आंख सोई हे श्रव सो कान जिनके ते चक्षुः श्रवा कहेजांयसर्पजाति आंखसों ही देखत हें और आंखसों सुनत हें.
१९. जेसे देहरीपे धर्यो एक ही दीवा कोई आडी प्रकाश करे तेसें एक ही रीझिया यह पद शेषनाग ओर इंद्रादिक इन दोइसों लगत हें.

संस्कृत टीका

६ सिद्ध गंधर्व गण

सिद्ध गंधर्व गण अपछरा उलटियां नृत्यनें नाद ।।
आह्लाद भर्या श्रीवल्लभजीयें मानिया ।।६।।

सिद्ध सो एक जातिके देवता ओर. **गंधर्व** जो देवतानके गायक. **अपछरा** सो अप्सरा तिनके. गण. सो समूह. **उलटिया** सो वेगतें आये. अथवा. उलटशब्द गुजरातीभाषामें हर्षवाचक हे यातें. **उलटिया** सो हर्षयुक्त होयकें नृत्य ओर बाजेनके नाद करत भये यातें. आह्लादभर्या. आनंद युक्त उनकों देखिकें. अथवा. आनंदयुक्त ऐसे जो. **श्रीवल्लभजी** श्रीवल्लभाचार्यजी तिननें. **मानिया** उनको [२०]यथोचितसत्कार कियो ।।६।।

ऐसें इंद्रादिकनकों ओर सिद्धादिकनकों आनंद भयो सो निरूपण करिकें अब ब्रह्मादिकनकों आनंद भयो सो निरूपण करत हें.

२०. यथोचित सो जेसो कियो चाहिये तेसो.

संस्कृत टीका

७ ब्रह्मा महादेव मुनि

ब्रह्मा महादेव मुनि हरखियां वरखिया कुसुमसमूह ।।
आ मोह टाल्यो ।। जगतना जीवनो ।।७।।

ब्रह्मा चतुर्मुख. **महादेव** शिव. **मुनि** मरीचि नारदप्रभृति. अथवा. मुनि. सो मननशील निरंतर प्रभुनके स्वरूपको मनन करनहारे भगवद्भक्त ते सव. **हरखिया** आनंदयुक्त भये. ओर. **वरखियाकुसुमसमूह** कुसुमजो पुष्प तिनके समूह जो समुदाय तिनकी वृष्टि कीनी याहीतें. **आमोह टाळयोजगतनाजीवनो** जगतमें जीव जे हते तिनको ये मोह सो श्रीविटठलनाथजी पूर्णपुरुषोत्तम हें ताको ज्ञान नहीं हतो ता अज्ञानकों टाळयो सो मिटायो. केसें जो पूर्णपुरुषोत्तम श्रीकृष्ण प्रकट भये तब ऐसो ही प्रकार भयो हतो सो ही श्रीमद्भागवतदशमपूर्वार्द्धतृतीयाध्यायमें. [२१]अथसर्वगुणोपेतःकालः परमशोभनः. इत्यादिक साडेआठ श्लोकमें निरूण कियो हे तेसें ही इहां हू भयो यातें पूर्ण पुरुषोत्तम प्रकटें यह सबनकों ज्ञान भयो याहीतें मोहटाळयो जगतनाजीवनो ऐसें कह्यो. अथवा. पुष्पकी वृष्टि कीनी ओर आपकी स्तुति कीनी जो. मोहटाल्योजगतना जीवनो. आप प्रकट भये तातें अब दैवीजीवनकों मोह निवृत्त भयो. अथवा. जगत. जो

प्रपंच ओर तत्सम्बन्धी जे. जीव. तिनको जो. मोह. अज्ञान ताकों मिटायो याको भावार्थ यह जो जगतको कहा स्वरूप हे ओर जीवकों कहा स्वरूप हे ताकों मायावादिमततें यथार्थ बोध होत न हतो ताको शुद्धाद्वैतरीततें बोध कियो. याहीतें मोहटाळयोजगतनाजीवनों ऐसें कह्यो. अब प्राकटय समयके विषें ही मोह टाळयो ऐसें निरूपण कियो यातें ज्ञानस्वरपत्व सूचन कियो केसें जो ज्ञानयुक्त होय सो तो ओरकुं ज्ञानको उपदेश करे तब वाको मोह मिटे ओर आप तो ज्ञानस्वरूप हें यातें प्राकटय मात्रतें ही मोह मिटायो सो युक्त हे. ओर कुसुमवृष्टितें सत्ता सूचन कीनी ओर हर्षतें आनंदमयत्व सूचन कियो याको फलितार्थ यह जो सच्चिदानंदस्वरूप आप प्रकट भयो ।।७।।

२१. जा बिरियां प्रभुनको प्राकटय भयो वह समय सब आछे गुणन करिकें युक्त ओर परमसुहावनो लगत भयो इनही श्लोकमें मुमुचुर्मुनयोदेवाः सूमनांसिमुदान्विताः या आधे श्लोकमें मुनीननें ओर देवताननें हर्षयुक्त होयके पुष्पवृष्टि करी सो वर्णन कियो हे ओर जगुःकिन्नरगंधर्वास्तुष्टुवुःसिद्धचारणाः. विद्याधर्यश्चननृतुरप्सरोभिःसमं तदा. या श्लोकमें सिद्धगंधर्व मुनिअपछरा या तुकप्रमाणें निरूपण कियो हे ऐसें ही ओर श्लोकनकी संगती हू इहां बिचारि लेनी.

संस्कृत टीका

८ निगम साम

निगम साम शाखासहस्त्रसूं करे रे भला निर्दोष ।।
आ घोषपति भगवंतभेटतां ।।८।।

निगम सो वेद सो कोनसो कहत हें. **साम** इतनें सामवेद ताकी. **सहस्त्र** सो हजार शाखा तिनकरिकें. **भला** सो आछी रीततें. निर्घोष करे. सो ब्रह्मरुद्रादिक सब गानकरत भये. यह कब करत भये सो कहत हें. **घोषपति** [२२]घोष जो व्रज ताके पति सो अनन्यस्वामी ऐसें. **भगवंत** सो [२३] षडगुणैश्वर्यसंपन्न श्रीविटठलनाथजी ते. **भेटतां** मिले ता समयके विषें. अब भगवंत प्रकटतां ऐसें नाहीं कह्यो. ओर भेटतां ऐसें कह्यो. ओर घोषपति या विशेषण कह्यो यातें ऐसो भासत हे जो ब्रह्मादिकननें स्तुति करी ओर पुष्पकी वृष्टि करी तातें प्रसन्न होयकें आपको स्वरूप दुर्बोध हे यातें स्वरूपको बोध करिवेकों श्रीकृष्णस्वरूपतें तिनकों दर्शन दिये याहीतें घोषपतिभगवंतभेटतां ऐसें कह्यो. अब ओरवेद नहीं कहे ओर निगमसाम कह्यो. ताको कारण यह जो सामगान आपकूं प्रिय हे यातें आपकुं प्रसन्न करिवेकूं सामगान कियो. अथवा. सब वेदमें सामवेद हे सो भगवद्विभूति हे. सोई श्रीभगवद्गीतामें दशमाध्यायमें [२४]वेदानांसामवेदोस्मि. ऐसें प्रभूननें आज्ञा करी हें यातें प्रथम उपलक्षणरीतसों सामवेदको नाम कह्यो यातें सबवेदको घोष करत भये यह सूचन कियो. अथवा. जेसें सब वेद भगवत्स्वरूप हें तथापि विभूतिमें मुख्य गणना सामवेदकी करी तेसें सब भगवदवतार एक रूप हैं तथापि श्रीविटठलावतार मुख्य हे यह सूचन करिवेकों निगमसाम ऐसें कह्यो. अथवा. निगमसाम. सो मूर्तिमान सामवेद सो अपनी [२५]सहस्त्रशाखानकरिकें वा समें श्रीगुसांईजीकी स्तुति करत भयो. अब सामवेदको नाम तो उपलक्षणमात्रसों कह्यो तातें सब वेद वा समें उहां आयकें अपुनी अपुनी संपूर्ण शाखानतें स्तुति करत भये यह सूचन कियो. ओर [२६] घोषपति भाग्यवंतभेटतां ऐसो हू पाठ हे ताको अर्थ ओर टीकानमें प्रसिद्ध हें ॥८॥

अब केवल सामगान भयो ओर स्ववेदोक्त कार्य कछू नहीं भयो होयगो या शंकाको निवारण करत हें.

---

२२. घोष ऐसी अहीरनके रहिवेके स्थानको नाम संस्कृत कोशनमें प्रसिद्ध हे घोष आभिरपल्लीस्यात्पक्कणःशबरालयइत्यमरः.

२३. ऐश्वर्य वीर्य यश श्रीज्ञान वैराग्य यह भगवानके ६ गुण मुख्य हें.

२४. प्रभूनने आज्ञा कीनी हे जो सबवेदनमें सामवेद हे सो मुख्य मेरो स्वरूप हे.

२५. इहां शाखासहस्त्रसूं यह कह्यो तातें ब्रह्मादिकननें ही अथवा मूर्तिमानवेदने ही वा समें सामगान कियो ऐसें सूचन कियो क्यों जो पहिले तों १००० शाखा सामवेदकी हती परंतु अनध्यायके दिनमें ॠषियें अध्ययन करत हते तातें चक्राभिघातसू वे नष्ट भये तासुं शाखा हू लुप्त भई इतनें अब तो सामवेदकी ९ शाखा पृथ्वीमें हें यह सब चरणव्यूहमें स्फुट हे तातें या कालमें सहस्त्रशाखानिर्घोष करनो मनुष्यनकों संभवत नाही.

२६. घोषपति जो व्रजपति श्रीगुसांईजी ओर भाग्यवंत सो परमभाग्यवान् भगवद्भक्त तिनकों भेटतां सो वे परस्पर मिले तब सामादिक वेद निर्घोष करत भये याको फलितार्थ यह जो वेद हें सो साक्षात् व्रजभक्त हे तिनकों प्रभुनके ओर भूतल पतितदैवीजीवनके वियोगको परिताप हतो सो अब आप श्रीगुसांईजीरूपसों भूतलमें प्रकट भये तब मिटयो तातें हर्षयुक्त होयकें निर्घोष करत भये.

संस्कृत टीका

९ वेदविहित कृत्य सर्वे

वेदविहित कृत्य सर्वे कीधां दीधां बहु पेरें गौदान ।।
मानसुं सजन संतोषियां ।।९।।

वेदविहितकृत्य. वेद जो यजुर्वेद ताकी जो तैत्तिरीयशाखा ताके मंत्रतें [२७]आपस्तंबसूत्रमें कहे ऐसे जो जातकर्मादिककृत्य ते. सर्वेकीधां. सब कीये. अब वेदोक्तकर्म किये होयंगे परंतु सर्वस्वदान तो प्रथम ही करदीयो हे यातें दानादिक कच्छू नहीं किये होयंगे. या शंकाको निवारण करत हें. दीधांबहुपेरेगौदान. बहुत प्रकारतें गोदान दिये. अब दीधां यह बहुवचन कह्यो कछू सङ्ख्या नहीं कही यातें असङ्ख्यात गोदान किये यह सूचन कियो. ओर दानतें आगंतुक ब्राह्मणको सत्कार सूचन कियो ओर अब जे आपको द्रव्य नही लेत हें तिनकों हू आपनें सत्कार कियो सो कहत हें. मानसूंजनसंतोषियां. मान जो सन्मान तातें सजन जो स्वजन दैवीजीव भक्त तिनकों संतुष्ट किये. अथवा. मान. जो प्रमाण जाकों जो देवकी रीत ताकों तेसें दीयो ताकरिके ओर सन्मान करिकें

स्वजन. जो सगेसम्बन्धि तिनकों संतुष्ट किये ।।९।।

अब त्रिविधजनको त्रिविधसत्कार निरूपण करिकें मंगलसाहित्यको वर्णन करत हें. अथवा. वेदविहितकृत्य कहे यातें दक्षिणादिकतें आश्रितजनकों वर्णन कियो ओर गोदान तें आगंतुक ब्राह्मणनको सत्कार वर्णन कियो परंतु स्वजनकों मानतें संतुष्ट कियो सो कोन रीतसों मान दीयो सो निरूपण करत हें.

२७. आपस्तंबऋषिनें अपने वंशके ब्राह्मणके जातकर्मादिक संस्कार तथा यज्ञादिक केसें करने ताके लिये तैत्तिरीयशाखाके अनुसारसूं ३० अध्यायको एक सूत्र कियो हे सो आपस्तंबसूत्र कहावत हे.

संस्कृत टीका

१० कनककचोळां

कनककचोळां कुमकुमभर्या अक्षत दूर्वा भर्या रे सुथाळ ।।
माल पारिजातनी महमहे ।।१०।।

कनक सो सुवर्ण ताके. **कचोळा** सो कटोरा ते कुमकुमसों भरिकें धरे. ओर. **अक्षत** सो पीरे चांवर. ओर. **दुर्वा** सो दूब ये सब. **सुथाळ** सुंदर वर्णके थाल तामें भरिकें धरे हें. **मालपारिजातिनीमहमहे** पारिजात जो हारसिंगार ताकी. **माल** ते मालाएं तिनकी अत्यंत सुगंध फेर रही हे. अब पारिजातकी

माला तो उपलक्षणरीतसों कही यातें अनेक प्रकारके बोहोत सुगंधयुक्त पुष्पनकी माला उहां धरी हती यह सूचन कियो. अथवा. पारिजात हे सो देवतानके वृक्ष हे सो उपलक्षणरीतते कह्यो यातें पांचो हि देवतानके वृक्षके पुष्पनकी माला धरी हती यह सूचन कियो. याको भावार्थ यह जो श्रीकृष्णावतारमें तो आप देवतानतें युद्ध करिकें पारिजातको वृक्ष ल्याये ओर श्रीविटठलावतारके प्रादुर्भावश्रवण मात्रतें ही इंद्रने [२८]नंदनवनते पारिजातादिकनके पुष्पनकी माला पठाई ऐसें भासत हे तातें या अवतारमें देवतानके संग कछू विरोध नहीं कियो ऐसें सूचन कियो. ओर जे आपको द्रव्य नही लेत हें तिनकों गंधाक्षतकरिकें आपके श्रीहस्ततें मालादेत हें. यातें प्रथमतुकमें कही जो मानसूंसजनसंतोषियां सो वार्त्ता स्फुट भई ।।१०।।

अब या प्रकारतें घरके भीतरकी शोभा निरूपण करिकें बाहिरकी शोभाको निरूपण करत हें.

---

२८. स्वर्गमें जो देवतानको बडो वन हे ताको नाम नंदनवन हे.

संस्कृत टीका

११ तोरण परण

तोरण परण सहकारना धरणीयें चंदनतणां नीर ।।
वीर श्रीगोपीनाथ श्रीविटठल प्रगटिया ।।११।।

सहकार जो आंब ताके. **परण** सो पतुवा ताके तोरण सब ठिकानें बांधे यातें उपरकी शोभाको निरूपण कियो अब नीचेकी शोभाको निरूपण करत हें. **धरणीयेंचंदनतणांनीर** धरणी जो पृथ्वी ताके विषें चंदनके नीर सो जल [२९]छिडके यातें नीरस हती सो सरस भई. ओर पृथ्वीको गुण गंध हे ताकी वृद्धि भई. ओर [३०]रजोनिवृत्तिपूर्वक शीतलतारूप सात्विक धर्मको संपादन कियो. अब तमो निवृत्तिको निरूपण करत हें. **वीरश्रीगोपीनाथ श्रीविटठलप्रगटिया** वीरश्री सो संहारशक्ति संकर्षण सो कोन गोपीनाथजी तिनकी श्री सो शोभा जानतें हे. ऐसे जो विटठल श्रीगुसांईजी ते प्रगटिया सो प्रकट भये. अब वीर श्रीरूप श्रीगोपीनाथजी सहित प्रगटे यातें दुष्टमतको नाश करेंगे. ओर विटठल या शब्दतें निःसाधन जनको उद्धार करेंगे यह सूचन करिवेकों वीरश्री गोपीनाथश्रीविटठलप्रगटिया ऐसें कह्यो. याको फलितार्थ यह जो दुष्टमतके नाशतें तमोनिवृत्ति सूचन करी. शंका. शक्तिको तो अभेद हे तातें संहारशक्ति श्रीगोपीनाथजी प्रथम प्रगटे ओर शक्तिमान् श्रीविटठलनाथजी पीछें प्रगटे यह बात केसें संभवे. उत्तर. सूर्य ओर सूर्यको प्रकाश अभिन्न हे तथापि सूर्यको प्रकाश प्रथम उदय होत हे जाकों अरुणोदय कहत हे. ओर सूर्य पीछें उदय होत हे यातें कछु सूर्य ओर सूर्यको प्रकाश भिन्न नहीं तेसें ह्यां हू हे याहीरीतसों श्रीकृष्णावतारमें हू प्रथम संकर्षण प्रगटे यातें यह दोउ स्वरूप एक हें यह सूचनार्थ श्रीगोपीनाथजी श्रीविटठलनाथजी ये दोई नाम अंगीकार किये क्यों जो गोपी जे निःसाधन भक्त तिनके नाथ पती. ओर विटठलशब्दको हू येहि फलितार्थ हे परंतु संकर्षण शक्तिरूप हें यातें आपके नाममें गोपीशब्द हे. ओर श्रीगुसांईजी शक्तिमान् हें यातें स्वतंत्रताबोधक विटठल या नामको अंगीकार कियो हे. इत्यादिक अनेक भावार्थ सूचन करिवेकों. वीर श्रीगोपीनाथ श्रीविटठल प्रगटिया ऐसें कह्यो ।।११।।

२९. मूलमें चंदनतणानीर यह बहुवचन कह्यो तातें अनेक पात्रनमें भरिकें चंदनको जल छिरक्यो ऐसें सूचन कियो याको भावार्थ यह जो जेसें प्रभुनके प्राकटयमें गोपननें दधि दुग्ध छिरक्यो क्यों जो प्रभु गोपाल हें तातें उनके प्राकटयसूं गायनकी तथा गोरसकी वृद्धि होयगी यह सूचनार्थ तेसे श्रीविटठलावतारमें वैष्णवनने पृथ्वीपे चंदन छिरक्यो क्यों जो आप चंदनकीनांई तापनिवृत्ति करिकें पृथ्वीकों अपनी कीर्तिरूप सुगंधयुक्त करेंगे ओर सबनकों आनंद देहिंगे यह सूचनार्थ यदि आह्लादे या धातुको चंदन यह शब्द होत हे.

३०. रज जो धूल सो जल छिरकिवेतें दबिजात हे ओर रज जो रजोगुणताकी निवृत्ति होयके सत्वगुणको आविर्भाव भयो.

संस्कृत टीका

१२ दधि दूध घृत

दधि दूध घृत मधु मांडवे सेरडियें वहे रे सुगंध ।।
सुगंध मोह्या अलिकुल आविया ।।१२।।

दधि सो दही दूध. **घृत** सो घी ओर. **मधु** सो सेहेत ओर खांड मधु शब्द सेहेत वाचक प्रसिद्ध हे. ओर मधुशब्द मिष्ट वाचक हे याते खांडको हू सूचन कियो नहीं तो पंचामृतमें एक पदार्थ न्यून होत हे ये सब पदार्थ. **मांडवे** मांडव सो मंडप अर्थात् सभामंडप ताके विषें धरे हें तिनकी. **सेरडिये वहेरे सुगंध** सेरडी सो सेरी गली ताके विषें सुगंध बहिरही हे अब वहेरे ऐसें कह्यो यातें दूरगामित्व सूचन कियो केसें जो जो पदार्थ वहत हे सो बोहोत दूर जात हे सोई स्पष्ट करत हें. **सुगंधें मोह्याअलिकुलआविया** वा सुगंधतें मोह पायके अलिकुल सो भ्रमरके समुदाय ते आये याको फलितार्थ यह जो आपको प्राकटय चरणाद्रिके पास भयो यातें पंचामृतको सुगंध वहां पर्यंत गयो ताहीतें वा पर्वतमें अनेक सुगंध पुष्पके वृक्ष लता हें तिनकों छोडिके सब भ्रमर आये यातें सुगंधेमोह्याअलिकुलआविया ऐसें कह्यो. ओर मोह्या ऐसें कह्यो यातें अलौकिकत्व सूचन कियो केसें जो लौकिकपंचामृतकी सुगंधमें भ्रमर आवत नहीं हें ओर मोह हू पावत नहीं हें ओर यह पंचामृत तो अलौकिक हे यातें मोह पायकें भ्रमर आये यह सूचनार्थ ही मोह्या ऐसें कह्या लोभ्या ऐसें नहीं कह्यो. अब पंचामृतकों अलौकिकत्व निरूपण कियो यातें ऐसो भासत हे जो इंद्रादिकननें जन्मसमय आपकों पंचामृतस्नान करायो सो प्रसादी पंचामृत भक्तनकों देवेकों मंडपमें ल्यांयकें धर्यो ताको यह वर्णन कियो. शंका. इंद्रादिकननें पंचामृत स्नान करायो यह अर्थ कोन हेतुतें तुम करत हो. प्रत्युत्तर. लौकिक पुरुष लौकिक बालककों जनमें वाहीसमें पंचामृत करावे नहीं यातें ऐसो अर्थ हमनें कियो हे. शंका. श्रीकृष्णावतार सब अवतारनमें पूर्णावतार हे तथापि जन्मसमें इंद्रादिकननें पंचामृतस्नान नहीं करायो. जब गिरिराज धारण कियो तब केवल दुग्ध सों जलसों स्नान करायो तब वहां ऐसो कहा आधिक्य हे सो जन्मसमें इंद्रादिकननें

पंचामृतस्नान करायो. प्रत्युत्तर. श्रीकृष्णावतारमें जब अज्ञानरूप मद दूर कियो ओर स्वरूपज्ञान वाकों करायो तब अभिषेक करायो सो हू गोपकुलमें जन्म हतो ओर गोपगायनकी रक्षा करी यातें केवल दूधतें अभिषेक करायो. ओर श्रीविट्ठलावतार तो सर्वोत्तम ब्राह्मण-कुलमें भयो ओर अज्ञाननिवारणार्थ ही भयो. यातें प्राकटय होतमात्रमें ही इंद्रादिकनकों आपके स्वरूपको ज्ञान भयो ओर श्रीकृष्णावतारमें तो इंद्रयागको भंग कियो ओर आपनें तो पहिलें तें ही श्रीवल्लभाचार्य स्वरूपतें पाखंड मतको खंडन करिकें यागादिककी प्रवृत्ति कीनी याहीतें इंद्रादिकननें पंचामृतस्नान आपको करायो सो युक्त हे यह सूचनार्थ ही पंचामृतको अलौकिकत्व निरूपण कियो ऐसे भासत हे. अथवा. [३१]उत्सवार्थ ल्याये भये ऐसे जो दधी दूध और [३२]जातकर्ममें आपके प्रसादी जो घृत मधु तिनको ये वर्णन कियो ऐसे हू इहां भासत हे ।।१२।।

अब इंद्रादिकनकों आपके स्वरूपको ज्ञान भयो सो निरूपण करिकें साधारण जनकों हू निरोध सिद्ध भयो सो निरूपण करत हें.

३१. नंदमहोत्सवकी नांई उत्सवके लिये कितनेक वैष्णव दधि दूध लाये सो मंडपमें फेल्य ओर बाकी सुगंधसों भ्रमर मोहे तातें वा दधिदूधको अत्यंत अलौकिकत्व सूचन कियो.

३२. जातकर्ममें पिता सोनेकी मुंदडीतें अपुने पुत्रको घी ओर मधु चटावे ऐसो शास्त्रकी विधि हे तातें आपके जातकर्ममें घृत मधु हू मंडपमें धर्यो हतो सो श्रीगुसांईजीके मुखारविंदको सम्बन्धसों वह अत्यंत सुगंधयुक्त भयो तासों बाकी सुगंधतें मोहपायकें भ्रमर आये सो युक्त हे.

३३. सब जगतको भान भूलिकें केवल प्रभूनमें ही आसक्ति होय सो निरोध कह्यो जाय यह पहिलें लिख्यो हे.

संस्कृत टीका

१३ सूत मागध साधु

सूत मागध साधु सर्वे मळ्या भळिया ते माहोमह ।।
उच्छाहभर्याको कोनें जाणे नहीं ।।१३।।

सूत जो यशकी कविता करनहारे ओर. **मागध** सो यशको गान करनहारे ओर. साधु. जो ज्ञानि सो. **सर्वेमळ्या. सब एकत्र वहां भये ओर. भळियातेमाहोमाह** माहोमाह सो एक दूसरेमें **भळिया** सो सब भेले होयकें एक समुदाय होय गयो ओर मलियाते माहोमाह ऐसो हू पाठ हे ताको अर्थ माहोमाह सो परस्पर मलिया सो भेटत भये. अब परस्पर मिलनों तो जिनको कुल शील तुल्य होय तिनको संभवे. ओर इहां तो साधु उत्तम सूत मध्यम मागध अधम इनको परस्पर मिलनो केसें संभवे या शंकाको निवारण करत हें. **उच्छाहभर्याकोकोनें जाणे नहीं** उच्छाह जो आपके प्राकटयको आनंद तातें भर्या सो परिपूर्ण भये यातें कोकोंने जाणे नहीं. कोई कोईको नहीं जानत भये यातें उत्तम मध्यम अधम ये सब परस्पर मिले याको फलितार्थ यह जो आपके प्राकटय समें बनकों निरोध सिद्ध भयो[३३]निरोधको लक्षणतो प्रथम निरूपण कियो हे ।।१३।।

अब साधारण जीवनकों आनंद भयो सो निरूपण करिकें ओर जीवन्मुक्तनको आनंद भयो सो निरूपण करत हें.

संस्कृत टीका

१४ शुकदेव सबल

शुकदेव सबल आनंददिया वंदिया श्रीवल्लभजीना चरण ।।
गिरिधरण श्रीभागवत माहारुं निरखशे ।।१४।।

शुकदेव सो श्रीशुकदेवजी ते. **सबल** सो अत्यंत. **आनंदिया** आनंदयुक्त भये. अथवा. श्रीशुकदेवजी केसे. सबल. बल जो भक्ति ताकरिकें युक्त याहीतें भक्तियुक्त होयके. **वंदिया श्रीवल्लभजीनाचरण** अब भक्तिकों सबल निरूपण तो [३४]वेदमें कियो हे श्री जो स्वामिनीजी तिनके वल्लभ श्रीपुरुषोत्तम महाप्रभुजी तिनके चरणकों वंदिया. सो वंदन कियो अब केवल भक्तितें ही चरणवंदन नहीं कियो आपनें उपकार हू कियो हे सो कहत हें. **गिरिधरणश्रीभागवतमाहारुंनिरखशे** गिरि जो गिरिराजजी तिनके धरण सो धारणकरिवेवारे श्रीपुरुषोत्तम ते मेरे श्रीभागवतकों निरखशे सो अवलोकन करेंगे याको भावार्थ यह जो श्रीशुकदेवजीनें श्रीमहाप्रभुनको बडो उपकार मान्यो जो मेरि बाणीसों मेनें उच्चार कियो ऐसो जो श्रीभागवत वामें तो श्रीपुरुषोत्तमके स्वरूपको लीलाको महिमाको निरूपण हे यातें श्रीपुरुषोत्तमकों याकों याके अवलोकनको प्रयोजन नाहीं परंतु आपनें गृहस्थाश्रमको अंगीकार कियो तो श्रीपुरुषोत्तम श्रीविटठलनाथजी आपके घर प्रकट भये तो लोकसंग्रहार्थ मेरे श्रीभागवतको अवलोकन करेंगे तब मे कृतार्थ होउंगो. यह उपकार जानकें आपके चरणको वंदन कियो. अथवा. श्रीमहाप्रभूनके चरणारविंदको वंदन कियो ताको अभिप्राय यह जो मेरो मनोरथ आपकी कृपासों पूर्ण होयगो केसें जो श्रीमद्भागवतको [३५]निरखनो सो उच्चार करिकें अर्थ विचारनो सो उच्चार तो मुखतें होत हे ओर आप श्रीपुरुषोत्तमको मुख हो यातें आपकी कृपासों मेरो मनोरथ सिद्ध होयगो या अभिप्रायतें प्रथम वंदिया श्रीवल्लभजीनाचरण. ऐसें कह्यो पाछें गिरिधरण श्रीभागवतमाहारुंनिरखशे ऐसें कह्यो. अब याको फलितार्थ यह जो श्रीशुकदेवजी जीवन्मुक्त हें [३६]स्वात्मलाभसंतुष्ट हें तिनकों हू आपके प्राकटयको आनंद भयो यातें या आनंदको अगणितानंदत्व सूचन कियो ।।१४।।

ऐसें प्राकटयके आनंदको निरूपण करिकें अब श्रीगुसांईजीके गुणको निरूपण करत हें.

---

३४. मुंडकोपनिषदमें ये आत्मा बलहीन पुरुषकों लभ्य नहीं हे कह्यो हे ता स्थलमें बल ऐसो भक्तिको नाम हे ऐसें ऐसें गोपेश्वरजी महाराजनें हू

भाष्यप्रकाशकी टीका रश्मिमें लिख्यो हे.

३५. निःऐसो उपसर्ग हे ओर इक्षदर्शनांकनयोः ऐसो धातु हे ताको निरीक्षणशब्द होत हे ओर निःउपसर्गको अर्थ निरंतरता हे ताते निरखनो सो विचारपूर्वक उच्चारण यह अर्थ टीकामें लिख्यो सो युक्त हे.

३६. अपने आत्मा जो प्रभु तिनको यथार्थ अनुभव करिकें सर्वदा शुकदेवजी आनंदमग्न रहत हें सो ही द्वादशस्कंधके बारमें अध्यायमें स्वसुखनिभ्रतचेतास्तद्व्युदस्तान्यभावः या श्लोकमें निरूपण कियो हे.

संस्कृत टीका

१५ सकळ कला

सकळ कला कलिकालमां कल्पद्रुम प्रगटियो आज ।।
काज मनवांछित पूरवा ।।१५।।

सकळकला सो सबकला तिनतें युक्त सो प्रबल ऐसो जो. **कलिकाल** सो कलियुग. अब सकलकलायुक्तत्व निरूपण कियो यातें कलिकालकों संपूर्ण दोषकारित्व सूचन कियो. ऐसो जो कलिकाल ताके विषें. **कल्पद्रुमप्रगटियोआज** कल्पद्रुम सो कल्पवृक्ष सो आज प्रगट भयो ताको कारण कहत हें. **काजमनवांछित पूरवा** प्राणिमात्रके जो मनोवांछित कार्य तिनकों पूर्णकरिवेकों. शंका. जब गोपालदासजीनें निरूपण कियो तब तो श्रीगुसांईजीके प्राकटयकों बोहोत वर्ष भये हते तो हू प्रकटियो आज ऐसें क्यों कह्यो. प्रत्युत्तर श्रीपुरुषोत्तमकी लीला सब नित्य हें सो [३७]वेदमें पुराणनमें निरूपण कियो यातें श्रीपुरुषोत्तम

ज्यासमें जा लीलाको जो भक्तको अनुभव करावें तासमें ताही लीलाको वांको अनुभव होय यातें गोपालदासजीकों या बिरियां प्राकटय लीलाको अनुभव करायो यातें सब यथार्थ वर्णन कियो यातें प्रगटियो आज यह कह्यो सो युक्त हे ।।१५।।

अब गुणको निरूपण करिकें स्वरूपको निरूपण करत हें.

३७. वेदमें विष्णुसूक्तादिस्थलनमें तथा अनेक उपनिषदनमें लीलाको नित्यत्व वर्णन कियो हे ओर पुराणनमें हू श्रीभागवतब्रह्द्वामता ब्रह्मवैवर्तादिकनमें यह निरूपण कियो हे तामें के वचन विद्वन्मंडनादिकग्रंथनमें लिखे हें.

संस्कृत टीका

१६ तैलंगतिलक

तैलंगतिलक त्रिभुवनधणी मणी मरकत धनवान् ।।
समान रूप निरखतां कोये नहीं ।।१६।।

तैलंगतिकल तैलंग सो तैलंगदेशस्थ ब्राह्मण तिनके विषें तिलक सो श्रेष्ठ आचार्य अब यह बात तो जीवकों हू संभवे. यातें ओर हू अधिक कहत हें. **त्रिभुवनधणी** त्री जो तीन देव ब्रह्मा विष्णु शिव ओर भुवन जो चतुर्दशभुवन ताके धणी सो ईश्वर नियंता. अब या रीतसों अवतार सामयिक [३८]आनंद

कुलोत्कर्ष ओर अवतारित्व निरूपण करिकें तेजोविशिष्टत्व सुख दातृत्व सूचन करत भये. श्रीअंगको वर्णन करत हे. **मणिमरकतधनवान** मणिमरकत सो इंद्रनीलमणि ताको धन जो समूह ता सरखो हे [३९]वान सो श्रीअंगको रंग जिनको. अथवा. मणिमरकत. ओर. धन. सो मेघ तिनजेसो हे वान जिनको अब मरकतमणीकी उपमातें [४०]नीलवर्णविशिष्टत्वतेजोविशिष्टत्वपूर्वक दृढत्व सुस्पर्शत्व वर्णन कियो ओर मेघकी उपमातें सरसत्व ताप हारकत्व निरूपण कियो अब पुरुषोत्तमको स्वरूप तो वाणीतें मनतें अगम्य हे ओर या रीतसों तो [४१]उपमानगम्यत्व आयो ताको निवारण करत हें. **समानरूपनिरखतांकोयेनही** रूप जो स्वरूप ताकों निरखतां सो देखेंतो समान कोई नहीं तुल्य कोई नहीं. अब निरखतां यह निरीक्षण या शब्दको अपभ्रंश हे याको शब्दार्थ यह जो आछी रीतसों देखनो याको फलितार्थ यह जो लौकिक दृष्टिसों देखें तो सामान्य मनुष्य जेसें दीकत हें. ओर अलौकिक दृष्टिसों देखें तो तो [४२] देशकालापरिछिन्नकोटिकंदर्पलावण्य हें याही अभिप्रायतें समानरूपनिरखतांकोईनही ऐसें कह्यो सोई श्रीगीताजीमें अर्जुननें हू कह्यो हे. [४३]नत्वत्समोस्त्यभ्यधिकः कुतोन्यः ऐसें ही श्वेताश्वतर ज्ञान तो श्रीकृष्णावतारमें हू सबनको नहीं भयो सोई श्रीगीताजीमें कह्यो हे [४४]अवजानंतिमांमूढामानुषींतनुमाश्रित. इत्यादिक अनेक अभिप्राय सूचनकरिवेकों समानरूपनिरखतां कोई नहीं ऐसें कह्यो ।।१६।।

ऐसें स्वरूपको निरूपण करिकें अब गर्गादिक ऋषियें आपके प्राकटयसमें उहां आये ताको निरूपण करत हें.

३८. प्रथम तुकनतें आनंदको निरूपण कियो ओर तैलंगतिलक या पदतें तथा वैदिककर्म वर्णनतें कुलको उत्कर्ष निरूपण कियो ओर त्रिभुवनधणी या पदतें तथा पुष्पवृष्टयादिकचिह्न वर्णनतें अवतारी पणेको निरूपण कियो अब मरकतमणिकी उपमासों तेजस्वीपणेको ओर मेघकी उपमासों सुखदातापणेको सूचन करत हे.

३९. रंगवाचक वर्णशब्दको भाषामें यह अपभ्रंश हे.

४०. नीलवर्णत्व सो श्यामता तेजोविशिष्टत्व सो तेजस्विपनो द्रढत्व सो द्रढपनो ओर सुस्पर्शत्व सो छूये ते सुखदायकपनो.

४१. प्रत्यक्ष अनुमान उपमान शब्द इन चार प्रमाणनमें तें प्रभु उपमान प्रमाणतें जाने जात हे ऐसी शंका प्राप्त भयी.

४२. सर्वत्र व्यापक नित्य कोटिकाम जेसे सुंदर आप हें.

४३. हे प्रभु आपके सदृश हू कोई नहीं हे तब अधिक तो कहांते ऐसें अर्जुननें कह्यो हे.

४४. प्रभुननें अर्जुनकों कही हे जो मेनें मनुष्य जेसो स्वरूप धारण कियो हे तातें मुर्ख आसुरजीव मेरे स्वरूपकों न पहिचानके यथार्थ आदर करत नाही.

संस्कृत टीका

१७ गणक गर्गादिक

गणक गर्गादिक आविया भाविया दियेरे आशीष ।।
जगदीश श्रीवल्लभघरे प्रगटिया ।।१७।।

गणक सो ज्योतिषी ते कोन. **गर्गादिक** गर्गा सो गर्गाचार्य ज्योतिःशास्त्रके प्रवृत्तिकर्ता श्रीकृष्णके पुरोहित और आदिशब्दतें ओर हू सत्पात्र ज्योतिषी ते. **आविया** सो आये. अब गणक ऐसें कह्यो यातें यह सूचन कियो जो श्रीगुसांईजीकी जन्मपत्रिका उननें बांची याहीतें. **भाविया दियेरे आशीष** भाविया सो वे श्रीमहाप्रभूनके मनमें भाये. अब भाविया ऐसें कह्यो यातें तिनको आपनें पूजन सत्कार कियो. दक्षिणा दीनी यह सूचन कियो याहीतें दियेरे आशीष आशीर्वाद देत भये. अब आशीर्वाद देनो तो जीवकों संभवे आप तो पूर्णकाम हें परंतु श्रीमहाप्रभूनको ओर श्रीगुसांईजीको स्वरूप गर्गादिकनें जान्यो न होयगो या शंकाको निवारण करत हें. **जगदीशश्रीवल्लभघेर प्रगटिया** अभी भूतलके विषें प्रादुर्भाव कियो हे मनुष्यनाटय धारण कियो हे यातें हम आशीर्वाद देत हें परंतु आप तो वस्तुतः जगदीश हें जगत् जो प्रपंच ताके ईश सो नियंता. पुरुषोत्तम हें सो ही आप भी श्रीवल्लभाचार्यजीके घर प्रगट भये हें. अब घेर प्रगटिया ऐसें कह्यो यातें जेसें कारागृहमें श्रीकृष्णको प्रादुर्भावमात्रभयो कछू लौकिक बालक जेसी उत्पत्ति नहीं तेसें ह्यां हू श्रीवल्लभाचार्यजीके गृहमें प्रादुर्भाव

भयो यह सूचन कियो. अब याकों [४५]फलितार्थ यह जो श्रीकृष्णावतारमें तो श्रीकृष्णही पुरुषोत्तम हें ओर श्रीविटठलावतारमें तो श्रीविटठलनाथजी पुरुषोत्तम हें ओर जिनके घर आप प्रगटे ते श्रीवल्लभाचार्यजी हू पुरुषोत्तम हे यह आधिक्य हे ऐसें गर्गाचार्यजीकूं ज्ञान हे ओर इहां जगदीश श्रीवल्लभघेरजाणिया ऐसो हू पाठ हे ।।१७।।

ऐसें प्राकटय लीलाको वर्णन करिकें. अब या आख्यानको गान करे ताकी फलस्तुति कहत हें.

[४५] जगदीश पदसों श्रीगुसांईजीको पुरुषोत्तमपनो वर्णन कियो ओर श्रीवल्लभपदसों श्रीमहाप्रभूनको पुरुषोत्तमपनो वर्णन कियो सो ही फलितार्थ टीकामें लिखत हें.

संस्कृत टीका

१८ धवल धन्या गान

धवल धन्या गान जे करे उच्चरे श्रीविटठलजी अवतार ।।
सारस्वतलीला ते जन लहे ।।१८।।

धवल जो यह आख्यान ता करिकें युक्त जो. **धन्या** सो धन्याश्रीराग ताको जो गान करे ते जन. सो मनुष्य. **सारस्वतलीलालहे** सारस्वत कल्पमें

श्रुतिरूपभक्तनकें संग जो लीला करी ताको अनुभव करे ओर. सारसुखलीला. ऐसो हू पाठ हे ताको अर्थ ओर टीकानमें लिख्यो हे. अब या रीतसों तो गोपालदासजीनें आपकी वाणीकी फलस्तुति कही या शंकाको निवारण करत हें. **उच्चरेश्रीविटठलजीअवतार** यह फलश्रुति कछू मेरी वाणीकीमें नहीं कहत हो जिननें श्रीविटठलावतार धारण कियो सो उच्चरे तिनकी यह आख्यानरूप आज्ञा हे यातें यह फलश्रुति कही. अब जन लहें ऐसें कह्यो याको भावार्थ यह जो. [४६]श्रुतिननें तो अनेक वर्ष तपस्या करी तब प्रभु प्रसन्न भये तब वर दीयो फेर अनेक वर्ष [४७]विप्रयोगको अनुभव कियो फेर भूतलमें जन्म लियो तव लीलानुभव भयो ओर यह आख्यानपदार्थ ऐसो हे जो याको श्रद्धापूर्वक गान करे तो याही मनुष्यदेहसों लीलानुभव करे यह सूचनार्थ ही जन लहे ऐसें कह्यो ।।१८।।

अब फलश्रुति कही सो रोचनार्थ नहीं हे सत्य हे. सो गोपालदासजीकों अनुभव भयो सो ही कहत हें.

[४६] यह श्रुतिनके वरदानकी कथा बृहद्वामनपुराणके उत्तरखिल्यमें वृंदावनमाहात्म्यमें प्रसिद्ध हे.
[४७] विप्रयोग सो विरह.

संस्कृत टीका

१९ दासनो दास जाय

दासनो दास जाय वारणे बारणे रह्यो रे उच्छव जुवे ।

को कोन भाग्यवंत ते समें ।।१९।।
इति श्री गोपालदासकृतं तृतीयाख्यानं समाप्ताम् ।।३।।

अब प्राकटयलीलाको दर्शन भयो यातें हृदयमें वात्सल्य उत्पन्न भयो यातें कहत हें. **दासनोदासजायवारणे** श्रीगुसांईजीसों बीनती कहत हें. आपके दास जो भायलाकोठारी तिनको दासमें हों क्यों जो इनकी कृपातें आपकी कृपा मोपें भई ऐसी जो मे सो वारणे जाय सो बलिहारी लेत हे. अब ऐसो तुमारे हृदयमें प्रेम उत्पन्न भयो ताको कहा कारण या शंकाको निवारण करत हें. **बारणेरह्योरेउच्छवजुवे** बारणे रह्यो सो बाहिर रहिकें इतनें दूरतें उत्सव सो प्राकटयलीलाको उत्सव ताको जुवे सो दर्शन करत हे. जेसें श्रुतिनकों कृपा करिकें लीलाको दर्शन कराये तेसें गोपालदासजीकों हू आपनें प्राकटय लीलाको दर्शनमात्र करायो कछूप्राकटय लीलामें प्रवेश नहीं भयो याहीतें **बारणेरह्योरेउच्छवजुवे** ऐसें कह्यो याहीतें कहत हें. को कोन भाग्यवंत ते समें. मेंने प्राकटयलीलाके दर्शनमात्र दूरतें किये याहीतें भाग्यवंत भयो तब तेसमें सो जा समें आप प्रकट भये ता समें को कोन भाग्यवंत कोनको भाग्यवंत नहीं हते जिनको प्राकटयलीलामें प्रवेश वा समें भयो वे सब ही भाग्यवंत हते. ओर कोयक भगवदीय तेसमे ऐसो हू पाठ हे ओर कोई नहीं भगवदी तेसमें ऐसो हू पाठ हे ताको अर्थ दूसरी टीकानमें लिख्यो हे ।।१४।।

(४८)श्रीमद्विटठलनाथानांविश्वविख्यातकर्मणां. वर्णितः स्वानुभूतोयं प्रादुर्भावमहोत्सवः ।।१।।
(४९)एतदाख्यानवर्यस्यव्याख्यानस्य फलंद्रुतं लब्धं श्रीविटठलाधीशदर्शनाख्यं मयाद्भूतं ।।२।।

४८. अब गोस्वामी श्रीजीवनलालजीमहाराज या रीतसों तृतीयाख्यानको व्याख्यान करिकें या आख्यानको संपूर्ण अर्थ संक्षेपसो एक श्लोकमें लिखत हें ता श्लोकको अर्थ लिखत हो आखे जगतमें प्रसिद्ध हे चरित्र जिनके ऐसे ओर अलौकिक समृद्धियुक्त ऐसे जे श्रीगुसांईजी तिनके प्राकटयको बडो ही उत्सव सो आनंद गोपालदासजीनें वर्णन कियो सो श्रीगुसांईजीकी कृपासु उनकूं जेसे प्राकटय लीलाके दर्शन भये तेसो ही वर्णन कियो अब या श्लोकमें श्रीगुसांईजीकों विश्वविख्यात कर्म कहे ताको तात्पर्य यह जो आख्यानमें उपरि लोकवासी जे ब्रह्मादिक ओर इंद्रादिक तिनकों आपके प्राकटयसों जो आनंद भयो सो वर्णन कियो. नीचेके लोकमें रहिवेवारे जे शेषनाग प्रभृतिनकों हू अतिआनंद भयो सो वर्णन कियो तातें श्रीगुसांईजीको चरित्र आखे जगतमें

सबलोकनमें विख्यात हे यह निश्चय होत हे ओर सर्व अलौकिक समृद्धि सूचन करिवेके लिये श्रीमान् यह पद कह्यो सो अलौकिक समृद्धि हू आख्यानमें आछी रीतसों वर्णन कीनी हे.

४९. अब गोस्वामी श्री जीवनजी महाराज दक्षिणकीआडी हैदराबादको परदेश पधारे हते सो उहासू पाछे पधारे तब रस्तामें या तृतीयाख्यान व्याख्यान कियो सो जा दिना या आख्यानकी टीका संपूर्ण भई ताही दिना आप पांडुरंग पुर पहुंचे ओर उहां श्रीविटठलनाथजीके दर्शन किये सो बात एक श्लोकमें वर्णन करत हे या श्लोकको अर्थ यह जो सब आख्यानमें श्रेष्ठ ऐसो जो यह तृतीयाख्यान ताके व्याख्यान कियेको फल तुरत श्रीविटठलनाथजीके दर्शनरूप मेनें पायो ओर यह फल बडो अदभुतसों आश्चर्यकारि मोकूं प्राप्त भयो इहां श्रीविटठलनाथजीके दर्शनकूं अद्‌भुतता कही यातें कछुक अलौकिककार्य भयो ऐसें सूचन कियो ओर या श्लोकमें पूर्वाद्ध उत्तरार्द्धके छेलो प्रास हे इतने तुकांत मिलत हे अब या श्लोकमें या तृतीयाख्यानकूं सबतें श्रेष्ठता कही ताको तात्पर्य यह जो सब आख्याननमें श्रीगुसांईजीके लीलाको वर्णन हे परंतु विन सबलीलानको ज्ञान या लोकमें प्राकटय भये पीछे भयो और प्राकटयलीलाको वर्णन तो याही आख्याननमें हे ताहीतें सब उत्सवनमें जन्माष्टमी कीनाई सब आख्यानमें या आख्यानकों भगवद्‌भक्त श्रेष्ठ आख्याननमें तुकांत मिलत हे और या आख्यानमें मिलत क्यों नही उत्तरया आख्यानके तुकांत हू गुप्तके तब अर्थ गुप्त होय तामें कहा आश्चर्य यह सूचनार्थ यह आख्यान मध्यानुप्रास रीतिसों गायो हें इतनें याके तुकांत बीचमें चरण इहां नंदियावंदिया यह प्रास मिलत हे ऐसे सब तुकनमें देखि लेनो अब संक्षेपसों या आख्यानके अर्थको दोहा. श्रीविटठलविभुजन्ममें त्रिभुवन जनसनमान. देखिबडो उत्सव कह्यो इहं तीजे आख्यान. इति चरणैकतानेन स्वपितृकसकाशादेवलब्धविद्येन पंचनदिधनःश्याम भटटात्मज गोवर्द्धनाशुकविनाकृतं तृतीयाख्यानव्याख्यानटिप्पणम् समाप्तम्)

।। इति श्रीबालकृष्णचरणैकतानश्रीमद्‌गोवर्द्धनगुरुपद्‌म परागप्राप्त परमोदयश्रीमद्‌गोकुलोत्सवात्मजजीवनाख्येनविरचितं तृतीयाख्यानव्याख्यान समाप्तिम् अढौकत ।।३।।

संस्कृत टीका

चतुर्थाख्यान

१ सुखद वंदू

श्री हरिः. अब गोपालदासजी तृतीयाख्यानमें श्रीविटठलनाथजीके प्राकटयके उत्सवको निरूपण करिकें जेसे जे प्रभु तिनके चरणारविंदको वंदन करिकें गुणवर्णन करत हें. **राग**[१]भूपकल्याण अब सब आचर्यनको. अथवा. सब अवतारनको. अथवा. ब्रह्मादिस्तंबपर्यंतके आप [२]भूप हें. ओर सर्व जगतके कल्याणकर्ता आप हें यह सूचन करिवेकु चतुर्थाख्यानको भूप कल्याण रागमें गान कियो.

ते पद वंदु श्रीवल्लभनंद त्रिभुवनमंगळ परमानंद ।।
सकलजीवनो टाळयो द्वंद्व जगमा व्याप्यो मुखमकरंद ।।

तेपद सो वे पद जिनको वेद ढूंढत हें सो [३]वेदमें निरूपण कियो हे. अथवा. ते. सो जाकी रजकों श्रुति ढूंढत हें सोई श्रीमद्‌भागवतमें [४] अद्यापियत्पदरजः श्रुतिभिर्विमृग्यं. या श्लोकमें निरूपण कियो हे ऐसे जो पद तिनकुं. **वंदु** सो वंदन करत हुं. अब ऐसे पद जिनके हें ते कोन सो कहत हें. **श्रीवल्लभनंद** श्रीवल्लभाचार्यजीके पुत्र. अथवा. श्री. जे स्वामिनीजी तिनके. वल्लभ. जो प्रभु तिनके हू. नंद. सो आनंद देवेवारे आप. ओर आप केसे हें. **त्रिभुवनमंगल** त्रिभुवन ते तीनलोक तिनकें मंगल [५]स्वानंदलेशतें त्रिभुवनकों [६]उपजीवन करिवेवारे सोई वेदमें निरूपण कियो हे. अब ऐसो आनंद [७]परिछिन्न हे के अपरिछिन्न हे या शंकाको निवारण करत हें. **परमानंद** परम सो अपरिछिन्न आनंदरूप सोइ [८]वेदमें निरूपण कियो हे ओर आप केसे हें.

सकलजीवनोटाल्योद्वंद्व सकलजीव ते सब जीव. अथवा. कलाकारकें सहित सो सकल सर्व कलापूर्ण श्रीकृष्ण तिनके जीव सो दैवीजीव तिनको टाल्योद्वंद्व [९]द्वंद्व जो लौकिक सुखदुःख. अथवा. [१०]द्वंद्व जो द्वैतभान ताको टाल्यो सो [११]शुद्धाद्वैत उपदेशतें मिटायो याहीतें. **जगमां व्याप्यो मुखमकरंद** जगमा सो जगत विषें मुखको मकरंद जो भाष्यादिकग्रंथ ते व्याप्यो सो प्रसिद्ध भये. अब आपके मुखतें प्रकट भये जो भाष्यादिकग्रंथ तिनकूं [१२]मकरंदत्व निरूपण कियो श्रीमुखकूं कमलत्व सूचन कियो.

सुखद वंदू श्रीवल्लभसुतना पदांबुज सुकुमार ।।
निगमरहस्य विचार कीधो सकलजन निस्तार ।।१।।

अब प्रथम तुकमें आपको वर्णन कियो ऐसे आप हें याहीतें **सुखद** सो सुख देवेवारे ऐसे जे श्रीगुसांईजी तिनके. **पदांबुज** सो चरणरूप कमल तिनकों. **वंदू** सो मे वंदन करत हों. अब वे चरणकमल केसें हें. **सुकुमार** सो अति कोमल हैं. अब पदांबुज कहे याहीतें सुकुमारपनो सूचन होत हें क्यों जो कमलपदार्थ कोमल होत हे तथापि सुकुमार ऐसें कह्यो यातें चरणकूं कमलतें हू अधिक कोमलपनो सूचन कियो. अब प्रथम तुकमें निरूपण किये ऐसे चरण तो श्रुतिनकूं दुर्लभ हें. ते चरण भूतलके जीवनकूं केसें मिले या शंकाको निवारण करिवेकुं कहत हें. **श्रीवल्लभसुतना** श्रीवल्लभाचार्यजीके पुत्ररूप होयके प्रकटे याहीतें भूतलके जीवनकुं ऐसे चरण सुलभ भये यह सूचन कियो. अब प्रकट होयकें कहा कार्य कियो सो कहत हें. **निगमरहस्यविचारकीधो** निगम जो वेद तिनको जो रहस्य जो शुद्धाद्वैत वेदांत ओर फलरूपभक्ति ताको विचार कियो. अब विचार करनो तों जाकूं सिद्धांतको निश्चय न होय ताकूं संभवे आप तो पूर्णपुरुषोत्तम हें आपकूं यह बात केसें संभवे. यह शंकाको निवारण करत हें. **सकलजननिस्तार** सब दैवीजीवनको निस्तार जो उद्धार ताके लियें निगमरहस्यविचार कियो याको भावार्थ यह जो आप तो सर्वज्ञ हें परंतु निगमरहस्यके विचाररूप जे भाष्यादिकग्रंथ ते नहीं करे तो शुद्धाद्वैतके ज्ञानविना केसे जीवको निस्तार होय यातें उनके उद्धारार्थ आपनें निगमरहस्यविचार कियो. अब फलरूपभक्तिको वेदरहस्यरूपत्व तो श्रीभागवतमें निरूपण कियो हे [१३]भगवान् ब्रह्मकार्त्स्न्येन त्रिरन्वीक्ष्यमनीषया. तदध्यवस्यत्फुटस्थोरति-रात्मन्यतोभवेत् या श्लोकमें ।।१।।

ऐसें सकलजननिस्तार या तुकमें इष्ट संपादकत्व निरूपण करिकें. अब अनिष्टनिवर्त्तकत्व निरूपण करत हें.

(१. भूपकल्याण सो कल्याण रागको भेद हे याहीकों भूपाली कहत हें यामें मध्यम ओर निखाद यह दोय सुर लगत नाहि.

२. भूप ऐसो राजाको नाम हे.

३. कठवल्लीउपनिषतकी दूसरी वल्लीमें सगरे वेद जा पदको विचार करत हें ऐसें कह्यो हे.

४. जिन प्रभुनके चरणारविंदकी रजकों आजादिन तांई वेद ढूंढत हे.

५. जिन प्रभूनको आनंद अगणित हे ता आनंदको एक लेशमात्र आनंद या जगतमें हे ताहीतें सब जगत जीवत हे यह बात बृहदारण्यकादिक उपनिषदमें प्रसिद्ध हे.

६. उपजीवन करिवेवारे सो सबनको जिवायवेवारे.

७. जाकी गिनती होय सके सो परिछिन्न ओर जाकी गिनती होय न सके सो अपरिछिन्न.

८. तैत्तिरीयशाखाकी ब्रह्मवल्लीउपनिषतमें प्रभु अगणितानंदमय हें यह निरूपण कियो हे.

९. संस्कृतमें द्वंद्व ऐसो जोडलाको नाम हे ओर जगतमें सुखदुःखको हू जोडा हे ताहीतें सुखदुःखको हू द्वंद्व कहत हें अब सुखदुःख दोई आपने मिटाये ऐसे कहे तब तो अलौकिक सुख और भगवद्विरहादिक येहु सब आपने मिटाये होयंगे ऐसें आशंका होय ताको निवारण करिवेकों लौकिक सुखदुःख मिटाये ऐसें कह्यो.

१०. प्रभु जुदे हें और सब जगत जुदो हे ओर में जुदो हूं ऐसें जाननों सो द्वैत.

११. ओर यह सब भगवद्रूप हे केवल अपनी क्रीडाके लियें प्रभुननें अपने स्वरूपतें यह जगत् प्रकट कियो हे सबनके जुदे जुदे नाम ओर जुदे जुदे स्वरूप बनाये हें परंतु वास्तविक रीतसूं देखे तो सब भगवद्रूप ही हे जेसें सोनेके कडा मुंदडी यह सब जुदे जुदे भासत हें परंतु विचारिकें देखें तोसब सोनाही हे कछू भी सोनोसूं जुदो नहीं हे तेसें ही यह सब जगत् भगवद्रूप हे कोई भी पदार्थ प्रभुनसूं जुदो नहीं हे या रीतसों जो ज्ञान होय सो शुद्धाद्वैत कह्यो जाय ये ही अपने मार्गको सिद्धांत हे.

१२. जो फूलनमें आपही ते कछुक जल होत हे ताको मकरंद कहत हे.

संस्कृत टीका

२ ब्रह्मकुल हरी

ब्रह्मकुल हरी अवतर्या ते टालवा भूमिभार ।।
श्रीनाथ विटठलनाम निरुपम वृंदावन श्रृंगार ।।२।।

ब्रह्मकुल सो ब्राह्मणकुल तामें. ते. सो जिनको प्रथम निरूपण कियों ते प्रगटिया. सो प्रकट भये ताको प्रयोजन कहत हें. **टालवाभूमिभार** भूमि जो पृथ्वी ताको भार सो पाखंड ताकूं टालवा सो मिटायवेकू प्रकट भये क्यों जो आप **हरि** सर्वके दुःखहर्ता हें. अथवा. **ब्रह्म** जो वेद ताको **कुल** सो समूह तद्रूप जो. हरि. सो भगवान यह ही. [१४]वेदोनारायणःसाक्षात्. या वाक्यमें निरूपण कियो हे. ओर तेसो प्रसिद्ध पाखंडरूप भूमिको भार ताकों मिटायवेकों प्रकटे याको भावार्थ यह जो वेदस्वरूप आप प्रकट होयकें वैदिकमत प्रवृत्त करिकें पाखंडमतको नाश करिकें भूमिको भार मिटायो. अब या रीतसूं वेदस्वरूपत्व सिद्ध भयो तब वेदकूं तो निःश्वासरूपत्व हू [१५]वेदमें निरूपण कियो हे तब श्रीपुरुषोत्तमके निःश्वासरूप आप होयंगे या शंकाको निवारण करत हें. **श्रीनाथ** श्री जो स्वामिन्यादिक तिनके नाथ सो पति श्रीगोवर्द्धनधर ते ही. **श्रीविटठल नाम** विटठल हे नाम जिनको ऐसे रूपतें प्रकट भये हें. अब भूतलमें प्रकट भये तब तो अभी [१६]अस्मदादिकतुल्य होयंगे या शंकाको निवारण करत हें. **निरुपम** जिनकुं उपमा नहीं ऐसे याको भावार्थ यह जो उपमा तो कछुक भी तुल्य होय ताकी दीनी जाय. ओर आपके तुल्य तो कोई भी नहीं हें यातें भूतलमें प्रकटे तो हू अलौकिक स्वरूप हें ओर सर्वरूप आप हें तातें वेदरूपत्व हू आपकुं हे. अब श्रीनाथत्व ओर निरुपमत्व तो श्रीपुरुषोत्तमकी विभूति जो विष्णु ओर अक्षरब्रह्म तिनकूं हू कोई [१७]प्रकारसूं हें यातें

पूर्णपुरुषोत्मत्वद्योतनार्थ कहत हें. **वृंदावन श्रृंगार** वृंदावन सो श्रीपुरुषोत्तमको लीलास्थान अलौकिकवन ताके श्रृंगार सो भूषणरूप. अथवा. वृंद. जे भक्तनके समूह तिनके. अवन. जो अधिपति श्रीस्वामिन्यादिक तिनके. श्रृंगार. सो भूषणरूप. अथवा. वृंद. जो व्रजसुंदरीनके समुदाय तिनके. अवन. सो पति याहीतें. श्रृंगार. सो श्रृंगाररूप सोही [१८]वेदमें निरूपण कियो हे ।।२।।

१३. ऐश्वर्यादि गुणयुक्त ओर सबनके मूलपुरुष ऐसे जे ब्रह्माजी तिननें अपनी बुद्धिसूं आखे वेदको तीन बिरियां विचार करिकें यह निश्चय कियो जो इन सब वेदन करिकें प्रभुनके विषें परिपूर्ण भक्ति सिद्ध होय सब वेदनको केवल भगवदभक्तिपे ही तात्पर्य हे.

संस्कृत टीका

३ एक रसना केम

एक रसना केम कहूं गुण प्रकट विविध विहार ।।
नित्य लीला नित्य नौतन श्रुति न पामे पार ।।३।।

अब प्रथम श्रीपुरुषोत्तमत्व निरूपण कियो याहीतें कहत हें. **गुण** जे औदार्यादिक ओर. **विहार** जो रासक्रीडादिक ते विविध. सो अनेक प्रकारके [१९] प्रकट होत हें तातें मेरी एक जो. **रसना** जिह्वा तातें केसें कहूं. अब एकरसनातें गुण ओर विहार कहे नहीं जाय हें तब अनेक जिह्वा वारे शेषजी वे कहेंगे या शंकाको निवारण करत हें. **श्रुतिनपामेपार** श्रुति जे वेद ते हू पार नहीं पावत हें तो ओर शेषादिकको कहा सामर्थ्य अब वेद तो पुरुषोत्तमरूप ही हे तब

वेद पार न पावे यह केसे संभवे यह शंका निवारण करत हें. **नित्यलीला** नित्य सो जाकूं आदि हूं नहीं ओर अंत हू नहीं ऐसी जे लीला ते सगरी. **नित्यनौतन** नित्य नवीन रीतसूं प्रकट होत हें सोई विद्वन्मंडनमें नित्य लीलावादमें श्रीविटठलनाथजीनें स्फुट निरूपण कियो हे यातें जो पदार्थको आदि हू नहीं ओर अंत हूं नहीं ताको पार वेद नहीं पावे यामें कहा क्षति याहीतें श्रीमद्भागवत दशमस्कंधोत्तरार्थकेएकावनमें अध्यायमें प्रभुननें मुचुकुंदकूं आज्ञा करी हे. [२०] जन्मकर्माभिधानानिसंतिमेंगसहस्रशः. नशक्यंतेऽनुसङख्यातुमनंतत्वान्मयापि हि. या श्लोकमें ।।३।।

अब ऐसो अलौकिक स्वरूप हे तामें कहा प्रमाण हे सो कहत हें.

१४. श्रीभागवतके षष्ठस्कंधमें यमदूतननें विष्णुदूतनकों कह्यो हे जो सब वेद साक्षात प्रभुनको स्वरूप हें.
१५. बृहदारण्यकउपनिषतके मैत्रेयी ब्राह्मणमें कह्यो हे जो ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेदादिक सब परब्रह्मके निःश्वासरूप हे.
१६. अस्मदादितुल्य सो प्राकृत मनुष्य जेसे.
१७. विष्णु हें ते लक्ष्मीजीके पति हें ओर श्री ऐसो लक्ष्मीजीको नाम हे तातें या प्रकारसूं उनमें हू श्रीनाथशब्दकी प्रवृत्ति होय ओर ब्रह्मरुद्रतें उत्तम हें तातें निरूपम हू कहे जाय तब श्रीनाथविटठलनामनिरूपम इतनो ही कहे तो कदाचित आपमें विभूतिरूपातकी भ्रांति होय सो भ्रांति निवृत्त करिवेकों वृंदावन शृंगार ऐसे कह्यो तातें आप पूर्णपुरुषोत्तम हें विभूतिरूप नहि यह सूचन कियो.
१८. ब्रह्मावल्लियादिकउपनिषदनमें प्रभुनकुं रसात्मकत्व निरूपण कियो हे.

संस्कृत टीका

४ सकल शास्त्र

सकल शास्त्र प्रमाण बोले सारमाहे सार ।।
तत्वमाहे तत्व त्रिभुवन भक्तनो आधार ।।४।।

सकल शास्त्र प्रमाण बोले सब शास्त्र प्रमाणिक रीतितें कहत हें. अथवा. सब शास्त्रकूं प्रमाण जो वेद सो ऐसें कहत हें. **सारमाहेसार** ये श्रीपुरुषोत्तम सकल जगतको सार जो अक्षरब्रह्म ताके [२१]सार सो अधिष्ठाता. अब सबते परत्व निरूपण करिकें एंतर्यामित्व निरूपण करत हें. तत्वमाहेत्व. तत्व जो [२२]अटठाइसतत्व तिनमें हू तत्वरूप आधिदैविक स्वरूप. अब अंतर्यामित्व निरूपण करिकें आधारत्व निरूपण करत हें. [२३]त्रिभुवनभक्त नोआधार त्रि सो तीन देव ब्रह्म विष्णु शिव ओर भुवन चतुर्दशभुवन ओर भक्त तिनके आधार. अब [२३]आध्यात्मिक रीततें देवके आधार [२४]आधिभौतिक रीततें भुवननके आधार ओर आधिदैविक रीततें भक्तनके आधार याको [२५]भावार्थ यह जो सबतें पर ओर सबनके अंतर्यामि ओर सबनके आधार पर आप ही हें सोई [२६]वेदमें निरूपण कियो हे ।।४।।

अब ज्ञानमार्गकी रीतिसूं स्वरूपको निरूपण करिकें ओर पुष्टिभक्तानुभूतस्वरूपकों निरूपण करत हें.

१९. प्रकट होत हे ऐसें कह्यो तातें लीलाकों नित्यत्व द्योतम कियो क्यों जो अनित्य पदार्थकी उत्पत्ति कही जाय सो बात नारद पंचरात्रमें लिखी हे ओर गुणप्रकट विविध विहार या जग्गें गुण जो अलौकिक सत्वादिक तिनते प्रकट इतनें सात्विक राजसादिक भेदसों अनेक प्रकारके विहार हें ऐसो हू अर्थ होत हे सो टिकामें सूचन कियो.

२०. मेरे अवतार ओर लीला ओर नाम हजारन हजार हें वे सब अपार हें तातें विनकी गिनतीमें हू करि सकत नांही ऐसे मुचुकुंदकुं प्रभुननें आज्ञा कीनी हे तेसे वेद साक्षात पुरुषोत्तमरूप हें परंतु अपनी लीलाको आप पार नहीं पावत सौ योग्य हे.

संस्कृत टीका

५ सर्वे अंगोअंग

सर्वे अंगोअंग रस भर्यारस भर्या लोचन चार ।।
चलणवलणे बोधव्या हृदे भाव अनेक प्रकार ।।५।।

सर्व जे अंग अंग ते. **रसभर्या** श्रृंगाररस करिकें पूर्ण. अथवा. अंग अंग सर्व रसतें पूर्ण सोई [२७]वेदमें निरूपण कियो हे. **रसभर्या लोचनचार** चार सो चार सुंदर लोचन ते नेत्र ते हू रस भरे हें. अथवा. चाररसनतें भरे नेत्र हें. अब नेत्रमें चाररसनकी स्थितिको स्फुट चिह्न लिखतहुं नेत्रमें श्यामतारा हें ते श्रृंगाररस हे ते व्रजसुंदरीनके अर्थ ओर श्वेतता हे सो शांतरस हे सो ज्ञानिनके अर्थ ओर लाल डोरा हें ते रौद्ररस दुष्टनके अर्थ ओर नेत्रनके किरण हें ते [२८] हेमवर्ण हे ते वीरस भक्तनकों निर्भयताके अर्थ या रीततें चाररस करिकें युक्त आपके नेत्र हें. अब या रीतसूं तो श्रृंगार रसकूं न्यूनता आवेगी या शंकाको निवारण करत हें. **चलणवलणे.** जो श्रृंगार रसोद्बोधक दृष्टिचांचल्य ताकरिकें [२९]अनेक प्रकारके भावको बोध भक्तनके हृदयमें कियो हे यातें श्रृंगाररसकी पूर्णता निरूपण कीनी ।।५।।

अब नेत्रको वर्णन करिकें श्रीमुखको वर्णन करत हें.

---

२१. जेसें तिलनमें सारभूत तेल हे ओर दहीमें सार घी हे तेसे ही अक्षरब्रह्ममें पुरुषोत्तम हें ऐसें श्वेताश्वतरादि उपनिषदनमें लिख्यो हे.

२२. अटठाईस तत्वनके नाम सत्व १. रज, २. तम, ३. पुरुष, ४. प्रकृति, ५. महत्तत्व, ६. अहंकार ७. ओर शब्द ८. स्पर्श, ९. रूप, १०. रस, ११. गंध, १२. यह पांच तन्मात्र ओर आकाश, १३. वायु, १४. तेज, १५. जल, १६. पृथ्वी, १७. यह पंच महाभूत ओर वाणी, १८. हाथ, १९. पांव, २०. गुद, २१. उपस्थ, २२. यह पांच कर्मेन्द्रिय ओर कान, २३. त्वचा, २४. इतनें शरीरके उपर बहुत झीनी चमडी होय हे सो आंख, २५. जीभ, २६. जासों खारो मीठो जान पडे सो नाक, २७. यह पांच ज्ञानेन्द्रिय ओर मन, २८. यह सब मिलिकें अटठाईस भये याही प्रकारसों अटठाइस तत्व श्रीमहाप्रभुननें निबंधके सर्वार्थ निर्णयप्रकरणमें श्लोक १६,१७ सत्वंरजस्तमश्चैवपुरुष प्रकृतिमहान् इत्यादि अढाई श्लोकमें लिखे हे ओर प्रभुनकों हू तत्व २८ ही संमत हे सो एकादशस्कंधके बाइसमें अध्यायमें नवैकादशपंचत्रीण्यात्थत्व मितिशुश्रूम ऐसे उद्धवजीके वचनतें स्फुट होत हे.

२३. आध्यात्मिक स्वरूप अक्षरब्रह्म हे तामें ते प्रकृतिको सत्वगुणरूप उपाधि पायकें विष्णु होत हें रजोगुणते ब्रह्मा होत हें ओर तमोगुणतें शिव होत हें सो बात श्रीभागवतमें सत्वंरजस्तमइतिप्रकृर्तेगुणास्तैर्युक्तः परः पुरुष ऐकईहास्यध-तो स्थित्यादयेहरिविरंचिहरेतिसंज्ञा इत्यादि स्थलनमें लिखी हें ओर याके विशेष प्रमाण वचन मेनें सत्सिद्धांत मार्तंड या नामके संस्कृतग्रंथमें लिखें हें ओर अक्षरब्रह्म पुरुषोत्तमतें भिन्न नहि हे क्यों जो चरणरूप हे तातें आध्यात्मिक रीतसों तीन देवके आधार पुरुषोत्तम हे.

२४. सब जगत हे सो प्रभुनको आधिभौतिक स्वरूप हे ओर पुरुषोत्तम हें ते आधिदैविक हें वे केवल भक्ति सों ही प्राप्त होत हें तातें वे भक्तनके आधार आधिदैविक रीतितें हें यह आधिदैविकादिस्वरूपको विवेचन गीताजीमें अधिभूतक्षरोभावः इत्यादि श्लोकनतें कियो हे तेसें ही सिद्धांत मुक्तावली प्रभृतिग्रंथनमें कियो हे ओर मेनें हू वेदांत चिंतामणीके तेरमें प्रकरणमें कियो हे.

२५. जा रीतसों इहां भावार्थ लिख्यो तेसें ही ब्रह्मसूत्रके प्रथमाध्यायमां प्रथमपादमें सबतें परत्व सर्वकर्तृत्वको ओर द्वितीयपादमें अंतर्यामिपणेको ओर तृतीयपादमे सर्वाधारत्वको निरूपण कियो हे याहीतें मूलमें सकलशास्त्रप्रमाणबोले ऐसें वेद तथा गीताजी तथा ब्रह्मसूत्र इनको वाचक शास्त्रपद कह्यो.

२६. ओर वेदमें सो श्वेताश्वतर मैत्रायणीप्रभृति उपनिषदनमें यह बात हे.

संस्कृत टीका

६ मुखसुगंधे मोह्या

मुखसुगंधे मोह्या अलि सकल ते आवी करे रे गुंजार ।।
सरस वचन उच्चारमात्रें संशयनो परिहार ।।६।।

मुखसुगंधेमोह्या सो श्रीमुखकी सुगंधतें मोहित भये ऐसे. अलि जे भ्रमरते. सकल सो सब. **आवीकरेरेगुंजार** आयकें निकट गुंजार सो अव्यक्त प्रिय शब्द करत हें. अब श्रीमुखके सुगंधको निरूपण कियो यातें कमलत्व सूचन कियो. ओर आवीकरे ऐसे कह्यो यातें सुगंधकूं दूरगामित्व सूचन कियो. ओर मोह्या ऐसें कह्यो यातें [३०]अलौकिकत्व सूचन कियो क्यों जो लौकिकसुंगधतें तो भ्रमर लूब्धमात्र होत हें मोहित नहीं होत हें. ओर आविया करे ते झंकार ऐसो हू पाठ हे ताको अर्थ स्फुट हे. अब [३१]बहिरंग शोभाको निरूपण करिकें अंतरंग शोभाको निरूपण करत हें. सरस वचन उच्चार मात्रें संशयनोपरिहार. सरण ते भक्तिरस सहित उपदेशरूपवचन. तिनके उच्चारमात्रतें संशय जे संदेह तिनको परिहार होत हे इतनें आपके वचन श्रवणमात्रसों भक्तनके सब [३२]संदेह दूर होत हें. अब उच्चारमात्रें ऐसें कह्यो यातें एकबेरमें ही संशयनिवृत्ति [३३]सत्वर सूचन करी याको फलितार्थ यह जो भक्तनकूं स्वमुखारविंदके सुगंधरूप [३४] इष्टसंपादन पूर्वक संशयरूप अनिष्टकी निवृत्ति आप करत हें ।।६।।

अब नामद्वारा ओर श्रीहस्तद्वारा जो भक्तनको अनिष्टनिवर्तनपूर्वक इष्टसंपादन आप करत हें सो निरूपण करत हे.

२७. छांदोग्यउपनिषतकी शांडिल्यविद्यामें प्रभुनको सर्वरसात्मकत्व कह्यो हे.
२८. हेमवर्ण सो जेसे चमकने पीरे नेत्रके किरण हे.
२९. अनेक प्रकारके भाव सो सात्विकराजसादि भेदसों जे श्रीभागवतमें गुप्त रीतसों रहे हें ते.

संस्कृत टीका

७ नामव्याजें प्रकट

नामव्याजें प्रकट कीधो मुक्तिशत्रुकार।।
भुजदंड परसें भये हर्या एवा नाथ अमित उदार ।।७।।

नाम जो श्रीविटठल यह नाम ताको. **व्याज** जो मिष ता करिकें. **मुक्तिशत्रुकार** सो अज्ञानादिक मिटायवेको उपाय आपनें प्रकट कियो. मुक्ति जो ब्रह्मभाव सोई श्रीमद्भागवतमें. [35]मुक्तिर्हित्वान्यथारूपंस्वरूपेणव्यवस्थितिः. या श्लोकमें निरूपण कियो हे ऐसी जो मुक्ति ताको शत्रु सो अज्ञान क्यों जो जीवब्रह्मांश हे सो ब्रह्मरूप हे सो अज्ञानतें स्वरूपभ्रष्ट होत हें तातें मुक्तिको अज्ञान ताको कार सो नाशकरिवेवारो शस्त्र [36]कारशब्द कृविक्षेपेधातु हे ताको हे याको फलितार्थ यह जो नामोच्चारण मात्रतें अज्ञानरूपअनिष्टनिवृत्ति होत हे ताहिते ज्ञानरूप इष्टप्राप्ति होत हे. अब या रीतसूं तो नारायण जो विभूति जलशायी ताकी तुल्यता आई क्यों जो नारायण नामोच्चारणतें अजामिलकों अज्ञान निवृत्ति होयकें ज्ञान प्राप्ति भई ताते पूर्णपुरुषोत्तम जे श्रीकृष्ण ते ही आप हें यह सूचन करत भये अंतरंगभक्त जो व्रजसुंदरी तिनकूं हू इष्टसंपादनपूर्वक-अनिष्टनिवर्तकत्व निरूपण करत हें. **भुजदंडपरसें भयहर्या** भुजदंडको जो आश्लेष समयके विषें स्पर्शतामात्रतें ही भये हर्या संसार भय अनेक रीतिके हरे प्रंपचविस्मृति कराई यातें भुजदंडस्पर्शरूप इष्टप्राप्तिपूर्वक प्रपंचस्मृतिरूप अनिष्टनिवृत्ति संपादन करी. ओर साधारण भक्तनकूं हूं प्रेमातिशयतें आप आलिंगन करिकें उनके भय हरत हें याहीतें अभी हूं पांडुरंग विटठलनाथजीके दर्शन जे जात हें तें आलिंगन करिके उनकुं मिलत हें ऐसी रीत हें. ए. ऐसे जो सर्व प्रकारके भक्तनकुं सर्व रीततें अनिष्ट निवृत्तिपूर्वक इष्टसंपादन करत हें याको हेतु यह जो.

[३७]नाथ षडगुणैश्वर्यसंपन्न हें. याहीतें. **अमितउदार** परम उदार प्रथम निरूपण करी ऐसी उदारता ओर में कहांसूं होय. अथवा. अमित. जो [३८]अपरिछिन्न प्रमाणागोचर भगवत्वस्वरूप ताके हू दान करिवेमें आप उदार हें याहीतें सर्वोत्तमजीमें [३९]अदेयदानदक्ष ऐसो आपको नाम हे ।।७।।

३०. इहां मुख्य बात ही भ्रमररूप होयके मुखसमीप गांन करत हें ओर याही रीतको भक्तनको कामरूपत्व तो छांदोग्यभृगुवल्लीप्रभृति उपनिषदनमें तथा वेणुगीतादिकके श्रीसुबोधिनीजीमें स्फुट लिख्यो हे येही इहां अलौकिकता हे याहीतें टीकामें फलितार्थमें भक्तनको आप मुखसुगंधरूप इष्ट देत हें यह निरूपण कियो.

३१. बहिरंग सो मुखतें बाहिरकी शोभा ओर अंतरंग सो मुखके भीतरकी शोभा.

३२. जेसे प्रभुननें एक ही बिरियां उपदेश करिकें अर्जुन उद्धवजी प्रभृतिनके सब संशय दूर किये तेसे आपके हू वचनामृत श्रवणतें सब संदेह दुर्वासना दूर होयके आप पूर्णपुरुषोत्तम हे यह निश्चय होत हे.

३३. सत्व सो तुरत.

३४. जो जाकूं आछो लगे सो ताको इष्ट कह्यो जाय ओर बुरो लगे सो अनिष्ट कह्यो जाय.

संस्कृत टीका

८ स्वस्वरूप अर्थे

स्वस्वरूप अर्थे प्रोजिया कृतहुंता जे संसार ।।

राजकाजे जोडिया जन उच्चावच नरनार ।।८।।

कृतहुंताजेसंसार जे अहंताममतारूप संसार ताकुं करत हें तिनकुं. [४०]स्वस्वरूपअर्थेप्रोजिया उनकों शुद्धाद्वैत वेदांतको उपदेश करिकें स्वस्वरूपको बोध कियो. ओर अपनी सेवारूप प्रयोजनयुक्त किये अब [४१]स्वस्वरूप बोध सो मे पुरुषोत्तमको अंश हू यातें पुरुषोत्तमको दास हू वे पुरुषोत्तम मेरे प्रभु हें या प्रकारको बोध. अब कृतहुंता ऐसे कह्यो यातें यह सूचन कियो जो वस्तुतः दैवीजीव हते परंतु अज्ञानतें अहंताममतारूप संसार करत हते. अब या रीततें अलौकिक फल आप देत हें यह निरूपण करिकें अब लौकिकफल हू आप देत हें यह निरूपण करत हें. **राजकाजें जोडिया** राजकाज जो [४२]राजसम्बन्धी कार्य ताके विषे जोडिया सो योजना करी. ताको उदाहरण राजा आसरकन बीरबल टोडरमल प्रभृति प्रसिद्ध हें. अब [४३]जोडीया ऐसें कह्यो याते यह सूचन कियों जो जैसें रथमें घोडा जोडत हें सो स्वामीकी इच्छांसूं जुडत हें कछू घोडा अपनी इच्छातें नही जुडत हें तेसें राजा आसरकनप्रभृति भगवदीय हें तिननें राजकाज मांग्यो नहीं आपकी इच्छातें आपनें यह अधिकार दियो याहीतें जोडिया केसें कह्यो. अब या रीततें स्वकीयनकूं फलदातृत्व निरूपण करिकें सामान्यजनकूं हू आप फल देत हें यह निरूपण करत हे. **जनउच्चावचनरनार** जन सो सामान्य मनुष्य तामे हू उच्चावचन सो उच्च होय. अथवा. नीच होय ताहूमें स्त्री होय. अथवा. पुरुष होय ताहुकू आपतें जा फलकी आकांक्षा होय सो फल वांकू आप देत हें सो हि विष्णु पुराणादिकनमें. [४४] भौभान्मनोरथान्कामान्स्वर्गिवंद्यंपरंपदं. प्राप्नोत्याराधितेविष्णौनिर्वाणमपिचोत्तमं. इत्यादिस्थलनमें निरूपण कियो हे ।।८।।

अब या विटठलावतारमें सबनकूं यथायोग्य फल देत हते हें यह निरूपण करिकें ओर प्रथम अंशावतारमें हू आपनें लोकोपकार कियो हे सो निरूपण करत हें तहां [४५]एतेचांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान्स्वयम्. या वाक्यतें पूर्णस्वरूप तो श्रीकृष्ण हें तिनके सब अंशावतार हें तब श्रीविटठलनाथजीनें अंशावतारतें प्रथम लोकोपकार कियो यह केसें निरूपण करत हो यह शंका होत हे ताको निराकरण करत भये श्रीकृष्ण श्रीवल्लभाचार्यजी श्रीविटठलनाथजी ये तीन स्वरूप भासत हें परंतु तीनों एक हि पदार्थ हे यह तीन तुकतें निरूपण करत हें.

३५. जेसे अग्निमें ते पतंगा उडत हें ते अग्निके अंश हें तेसे प्रभुनमेसूं जीव उत्पन्न भये हें ते सब प्रभुनके ही अंश हें तिनको अविद्या लगी तातें वे अपनो स्वरूप भूलि गये हें याहीतें शरीरकों ही आप करिकें मानत हें. अब अन्यथा रूप सो शरीरादिकको अभिमान ताकों छोडिके जब यह जीव अपने

स्वरूपकूं पावे इतनेमें प्रभुनको अंश हू साक्षाद्ब्रह्मरूप हू ऐसें जाने तब वाकी मुक्ति कही जाय.

३६. यह कारशब्द कृधातुतें करणरूप अर्थमें बाहुलकसिद्ध घञ् प्रत्यय करे ते सिद्ध होत हे.

३७. नायधातु ऐश्वर्यरूप अर्थमे हे तातें षडगुणैश्वर्य संपन्न यह अर्थ कियो ओर प्रभुनके ६ गुण तो पहिले लिखे हें.

३८. अपरिच्छन्न सो व्यापक ओर प्रमाणागोचर सो प्राकृत इंद्रियादिकनतें जाको निश्चय होय न सके ऐसो भगवत्स्वरूप हे यह दोई अर्थ अमित शब्दके होत हे.

३९. कोईसूं न दियो जाय ऐसो जो पुरुषोत्तमस्वरूप ताके हू दानमें श्रीमहाप्रभुजी चतुर हे.

संस्कृत टीका

९ आगल अंश

आगल अंश प्रगटिया ते ग्रंथ कह्या बहुवार ।।
श्रीयशोदाउत्संगलालित पूरण अतिसुकुमार ।।९।।

आगाल सो प्रथम अंशे. सो ब्रह्मादि व्यासादि रूपतें प्रकट भये सो. **बहुवार** सो बोहोत बिरियां. **ग्रंथ** जे वेदशास्त्रपुराणादिक ते कहे. अब ग्रंथ कह्यो ऐसें कह्यो ग्रंथ कर्या ऐसें नहीं कह्यो यातें अनादिसिद्ध जे वेदादिक तिनको मुखद्वारा प्रादुर्भाव कियो यह सूचन कियो. अथवा. पहिलें अनेक बिरियां अपुनें अंशनतें प्रकट भये हें ते सब अवतार वेदपुराणादिग्रंथननें कहे हें. अब वे कोन सो कहत हें. ते **श्रीयशोदाउत्संगलालित** ते सो श्रुति हि जिनको निरूपण

यथार्थ नहीं कर सकत हें ते श्रीयशोदाजीकी [४६]गोदमें खेलवेवारे. अब यशोदाउत्संगलालित ऐसें कह्यो यातें [४७]परिछिन्नत्व निरूपण भयो ओर. **पूरण** ऐसें कह्यो यातें [४८]अपरिछिन्नत्वनिरूपण भयो इन दोई निरूपणतें [४९]विरुद्धधर्माश्रयत्व स्फुट सिद्ध भयो. अब ऐसे जो पूर्णपुरुषोत्तम तिनको लीलानंद श्रीयशोदाजी प्रभृति भक्तनकूं प्राप्त भयो तामें तो शंका हू नहीं हें क्यों जो भगवल्लीलासम्बन्धी पदार्थ सर्व पुरुषोत्तम हें सो विद्वन्मंडनमें नित्य लीलावादमें श्रीविटठलनाथजीनें निरूपण कियो हे परंतु आधुनिक भक्तनकूं ऐसें पूर्ण पुरुषोत्तम लीलाके आनंदके अनुभवनको मनोरथ केसें पूर्ण होय ओर यह मनोरथ पूर्ण न होय तो भक्तिको वैय्यर्थ्य होय या शंकाके निरासार्थ कह्यो. **अतिसुकुमार** याको भावार्थ यह जो यशोदाउत्संगलालित ऐसें कह्यो याते श्रीअंगकी सुकुमारता सिद्ध भई तथापि अतिसुकुमार ऐसें कह्यो यातें आपको अंतःकरण हू अत्यंत कोमल हे यह सूचन कियो यातें [५०]आधुनिकभक्तकूं हू जो शुद्ध अंतःकरणसूं परम आर्त्तिजा मनोरथकी होय सो मनोरथ प्रभु अवश्य [५१]पूर्ण करें योहि अभिप्राय श्रीविटठलनाथजीनें विद्वन्मंडनमें निरूपण कियो हे याहीतें अतिसुकुमार ऐसें कह्यो ।।९।।

अब वेदादिकग्रंथकर्तृत्व निरूपण करिकें तदनुसार धर्मवक्तृत्व निरूपण करत हें.

४०. प्रयोजिया याको अपभृंश प्रोजिया यह भयो हे.

४१. स्वरूप याके दोय अर्थ हें एक तो भजन करिवेवारो जो जीव ताको स्वरूप ओर दूसरो स्वरूप सों आप पूर्ण पुरुषोत्तम हे तिनको स्वरूप ये दोई अर्थ क्रमसो टीकामें दिखाये हे.

४२. जेसें प्रभुनने अर्जुनको गीताजी कहिकें वाको सर्व अज्ञान दूर कियो तथापि फिर वाको आपनें अपनी इच्छासूं राजकार्यमें लगायो ओर भगवदिच्छाके अनुसारही अर्जुन प्रवृत्त भयो तेसें श्रीगुसांईजीने हू आसकरनजी प्रभृति अपुनें भक्तनकुं संसार निर्मुक्त, साक्षाद्‌ब्रह्मभूत करिकें फिर अपनी इच्छाते राजकार्यमें लगाये यह योगमार्गकी रीति हे क्यों जो साङख्यमार्गमें त्याग मुख्य हे ओर योगमार्गमें अत्याग मुख्य हे ओर गृहादिकनको त्याग केवल मनसूं ही करनो इतनें सब पदार्थमें ममता छोड देनी येही योगमार्गको सिद्धांत हे सोही ''कर्मज्यायोह्यकर्मणः. नैवकिंचित्यकरोमीति युक्तोमन्येततत्ववित्''. ''भयंप्रमत्तस्यवनेष्वपिस्या द्यतः स आस्ते सहषट्सपत्नः. जितेंद्रियस्यात्मरतेर्बुधस्य गृहाश्रमःकिन्नुकरोत्यवद्यं'' इत्यादिक गीता श्रीभागवत पंचमस्कंधादि वचननतें स्फुट होत हे या वातको विशेष विवेचन निबंध बालबोध गीजातीकी व्याख्या प्रभृतिनमें कियो हे.

४३. अब राज्यसुखभोग वे करत हें तब विनकों संसारासक्ति होयगी या शंकाको निवारण टीकामें करत हें जोडिया इत्यादिक ग्रंथसूं यातें केवल आपकी इच्छाको उल्लंघन न कियो जाय याहीते आसरकनजी प्रभृति राज्यसुखभोग करत हते विनकी आसक्ति रंचकहू न हती सो सब बात वार्तानमें स्फूट हे.

४४. प्रभुनकी भक्ति करे तो पृथ्वीमेंके सब अपुने मनोरथ प्रमाणे काम्य पदार्थ ओर स्वर्गस्थ देवता प्रभृतिनके हू वंदन करिवे योग्य परमपद ओर परममोक्ष हू जीव पाबत हे.

४५. प्रथम स्कंधमें कह्यो हे जो ओर सब भगवद्वतार हें ते कितनेक अंशावतार हें ओर कितनेक कलावतार हें ओर देवताऋषिप्रभृति हूं सब प्रभूनके अंशकलारूप हें ओर श्रीकृष्ण हें सो तो साक्षात् आप ही भगवान् हें इतनें पूर्णपुरुषोत्तम हें.

संस्कृत टीका

१० अनेक धर्म

अनेक धर्म कह्या प्रभुजीयें निगमने अनुसार ।।
गिरिराजधरनो ताप टाळयोलक्ष्मरसुतनिरधार ।।१०।।

अनेक सो नाना प्रकारकें. **धर्म** सो [५२]वेदाध्ययनाध्यापनादिक ओर [५३]गुरुशुश्रुषा यज्ञादिक तथा [५४]ज्ञानमार्गीयनके धर्म और [५५]भक्तिमार्गीयनके धर्म ते सब. **प्रभुजीयें कह्या** सो [५६]प्रभुनन कहे सो केसें कहे सो कहत हें. निगमनेअनुसार. निगम जो वेद ताके अनुसार इतने जेसें वेदमें निरूपण कियो हे ताहि

रीततें धर्म कहे ओर ताही प्रमाणे आचरण हू किये. अब धर्म तो जाकूं फलकी इच्छा होय सो करे ज्ञानी नहीं करे सोहि कोईनें कह्यो हे [५७] निस्त्रैगुण्येपथिविचरतांकोविधिः कोनिषेषः तातें आपकुं हू कछु फलकी इच्छा होयगी या शंकाके निवारणार्थ. **प्रभुजीयें** यह कह्यो तातें यह सूचन कियो जो आप तो प्रभु सो सर्वसमर्थ हें यातें फलकी इच्छा नहीं हे. अब याको फलितार्थ यह जो आप तो सदा सब जगतके [५८]हितार्थ धर्मोपदेश करत हें ओर आचरणहू करत हें ओर मुख्यतासूं अपुने भक्तनके लिये धर्मको आचरण करत हें याहीतें सर्वोत्तमजीमें [५९]स्वदासार्थकृताशेषसाधनः. ओर [६०]सर्वशक्तिधृकं यह आपके नाम हें. अब. **गिरिराजधर** जे श्रीपुरुषोत्तम तिनको. **तापटाल्यो** सो संताप मिटायो ऐसे कोन. **लक्ष्मणसुत** श्रीवल्लभाचार्यजी यह वार्ता. **निरधार** सो निश्चय हें यामें संदेह नाहीं. अब याको फलितार्थ यह जो आपनें गृहस्थाश्रमको अंगीकार कियो तब आप श्रीपुरुषोत्तमके मनको ताप मिटयो ओर [६१] शुद्धभक्तिमार्ग आपनें प्रकट कियों ताहूतें प्रभुनको ताप मिटयो ओर लक्ष्मणसुत ऐसें कह्यो यातें लक्ष्मणभटजीके मनको हू ताप निवारण कियो यह सूचन कियो ।।१०।।

अब या रीतसूं तो पुरुषोत्तमत्व केवल श्रीविटठलनाथजीको सिद्ध भयो श्रीवल्लभाचार्यजीकूं तो वसुदेवादिकनकी तुल्यता भई या शंकाको निवारण करत हें.

४६. यशोदाउत्संगलालित सो श्रीयशोदाजीने उत्संग जो अपनी गोदी तामें लालित सो खिलाये ऐसें प्रभु हे येही फलितार्थ टीकामें लिख्यो हे.

४७. गोदीमें तो छोटो स्वरूप होय सो ही खिलायो जाय व्यापकस्वरूप कछू गोदीमें खिलायो जाय नहि याते यशोदाउत्संगलालित या पदतें परिछिन्नत्व सो परिमितपनो सूचन कियो.

४८. ओर पूरण सो आकाशकीनाई प्रभु सब ब्रह्मांडनको पूरिकें रहे हें यातें अपरिछिन्नत्व सो व्यापकनो सूचन कियो.

४९. जगतमे परिमितपदार्थ होय सो व्यापक नहि होय ओर जो पदार्थ व्यापक होय सो परिमित नही होय ओर प्रभु तो छोटे से स्वरूपतें श्रीयशोदाजीकी गोदीमें खेलत हें तो हू सर्वत्र व्यापक हें ओर वाही स्वरूपतें सब ब्रह्मांडनके आधार हें सोही निबंधशास्त्रार्थ, प्रकरणमें आनंदांशाभिव्यतोतुतत्रब्रह्मांडकोटयः या कारिकाके व्याख्यानमें स्फुट लिख्यो हे यांहीते प्रभु विरुद्धधर्माश्रय हे परस्परविरुद्ध ऐसे धर्म जे गुण तिनकें आधार हें सो हू निरूपण तृतीयाध्याय भाष्य तथा निबंधादिग्रंथनमें श्रीमहाप्रभूनजीने कियो हे.

५०. आधुनिक सो या कालके.
५१. भक्तनको मनोरथ आप पूर्ण करे हें ताहीतें श्रीसर्वोत्तमजीमें भक्तेच्छापूरकः यह आपको नाम हे.

संस्कृत टीका

११ पोतें ते प्रगट

पोतें ते प्रगट पोतातणो रसतणो कर्यो रे उच्चार ।।
पोतें ते अंगोअंग सुखद शोभा सदन अंगीकार ।।११।।

पोतें सो श्रीविटठलनाथजी वे. **तेप्रगट** ते सो श्रीवल्लभाचार्यजी ही प्रकटे हें लौकिकमें जेसें पितापुत्रमें तारतम्य होय हे तेसें इहां नहीं हे. अब प्रकट होयकें कहा कर्यो सो कहत हें. पोततणोरसतणोकर्योरेउच्चार. आपको [६२]रस जो सुबोधीन्यादिकग्रंथरूप शब्द ताको उच्चार कियो अर्थात् भाष्यसुबोधीन्यादिक ग्रंथ प्रकट किये उच्चार कियो ऐसें कह्यो यातें विन ग्रंथनकों [६३]नित्यत्व सूचन कियो. अथवा. पोतातणोरसतणोकर्योरेउच्चार. आपको रस जो भक्तिरस ताको उच्चार सो निरूपण कियो याहीतें सर्वोत्तमजीमें [६४]भक्त्याचारो पदेष्टा ओर [६५]भक्तत्याचारोपदेशार्थनानावाक्यनिरूपकः. ये नाम हें ओर भक्तिकूं रसत्व तो श्रीमद्‌भागवतमें [६६]पिबतभागवतंरसमालयं. या स्थलके विषें ओर अन्यत्र हू निरूपण कियो हे. अब ज्ञानकार्य निरूपण करिकें सौंदर्य निरूपण करत हें. पोतें. सो आप श्रीविटठलनाथजी ते केसे हें. **अंगोअंग** सो अंगअंगके विषें. **सुखदशोभा** सुख जो [६७]ब्रह्मानंद ओर [६८]भजनानंद ताकूं देवेवारी ऐसी जो अलौकिकशोभा ताको अंगीकार कियो हे. अब सौंदर्यनिरूपण करिकें सौंदर्यको सार्थक्य गृहस्थाश्रमते हे ताको हू आपने अंगीकार कियो हे सो निरूपण करत

हें. **सदनअंगीकार** सदन सो गृह सो [६१]गृहस्थाश्रम ताको हूं अंगीकार कियो हे अंगीकारशब्दको शोभा ओर सदन इन दोइनसूं अन्वय हे ।।११।।

५२. वेद पढनो पढावनो इत्यादिक ब्राह्मणादि चार वर्णनके धर्म.

५३. गुरुशुश्रुषादिक ब्रह्मचारि प्रभृति चार आश्रमके धर्म जेसें गुरुकी सेवा करिकें पढनो यह ब्रह्मचारिको धर्म हें ओर अग्निहोत्रादिक यज्ञ करने यह गृहस्थको धर्म हे ऐसे वानप्रस्थके और संन्यासीके धर्म हू समझने.

५४. ज्ञानमार्गीयनके धर्म तो वैराग्यशमदमादिक करिकें संन्यास लेके अपरोक्षज्ञान होयवेके उपाय करने इत्यादि.

५५. भक्ति मार्गीयनके धर्म सो भगवत्सेवादिक जे एकादश स्कंधमें ममार्चास्थापने श्रद्धा इत्यादि श्लोकनतें प्रभुननें कहे हें.

५६. यह सब धर्म प्रभुननें एकादशस्कंधमें तथा गीताजीमें कहे हें ओर फिर श्रीगुसांईजी रूपसूं प्रकट होयकें आचार्यपनेको अंगीकार करिकें वे सब धर्म आप जीवनका कहत हें सोही श्रीभागवतमें आचार्यचैत्यवपुषास्वगतिंव्यनक्ति इत्यादि स्थलनमें सूचन कियो.

५७. सत्व रज तम इन तीन गुणनतें रहित जो मार्ग तामें चलिवेवारेनकुं विधि हू कहा ओर निषेध हू कहा अर्थात् निर्गुणज्ञानवानकों कछू विधिनिषेध नाहीं यह बात श्रीभागवतादिकनमें हू अनेक जगे प्रसिद्ध हे.

५८. जे निर्गुणभक्त होत हे ते सब जगतको हित करत हें सोही गीताजीमें 'सर्वभूतहितेरताः' या श्लोकमें कह्यो हे ओर याको स्फुट तात्पर्य निबंध शास्त्रार्थ प्रकरणमें निगुर्णामुक्तिरस्मादि या कारिकाके व्याख्यानमें लिख्यो हे तब आप सर्व जगतको हित करे तामें कहा आश्चर्य ओर प्रभुनको धर्माचरण हू केवल लौकहितार्थ हे सो गीताजीमें नमेपार्थास्तिकर्तव्यं इत्यादि श्लोकनतें कह्यो हे.

५९. अपुने दासनके लिये ही अशेष सो सब साधन श्रीमहाप्रभुजी आप करत हें.

६०. ओर सर्वशक्तिधृक सो आप सब सामर्थ्ययुक्त हें याहीतें मूल तुकमें प्रभु शब्द कह्यो तो उचित हें.

६१. टीकामें शुद्ध भक्तिमार्ग प्रकट करिकें प्रभुनको ताप श्रीमहाप्रभुननें मिटायो ऐसें लिख्यो ताको तात्पर्य यह जो प्रभुननें गीताजी एकादशस्कंधमें वेदानुसारसूं अनेक धर्म कहे हें परंतु प्रभुनको मुख्य अभिप्राय ब्रजभक्ताभिमत भक्ति मार्गप्रवृत्त करिवेको हतो सो ही रामेणसार्धमथुरांप्रणीते इत्यादि प्रसंगमें आशय दीसे हे क्यों जो प्रभु उनके ऋणी हे. सो ही नपारयेह निरवद्यसंयुजा इत्यादि श्लोकमें स्फूट हे तथापि ताद्रश भक्तिमार्ग अर्जुनोद्धवादिकनसूं प्रवृत्त न होय सक्यो तातें प्रभुनको यह ताप हतो सो श्रीमहाप्रभुनने व्रज भक्तनकूं गुरु करिकें तदनुसार भक्तिमार्ग प्रवृत्त कियो ताते प्रभुनको ताप मिटयो ओर

व्रजभक्तनको गुरुत्व तो कोंडिन्यो गोपिकाप्रोक्तागुरवः साधन चतत् इत्यादि स्थलनमें प्रसिद्ध कह्यो हे याहीते मूल तुकमें गिरिराजधरनो ताप टाल्यो ऐसें कह्यो.

संस्कृत टीका

१२ स्कंधसङख्या ऐ

स्कंधसङख्या ऐ कह्यां पद श्रीभागवत रसराज ।।
भक्तजनपदरजप्रतापें सकल सरीयां काज ।।१२।।

स्कंध जो श्रीभागवतके स्कंध तिनकी. **सङख्या** सो द्वादशसङख्या तिनने ऐसे ये. **पद** सो तुक ते केसे सो कहत हें. **श्रीभागवतरसराज** श्रीभागवतमें जिनको यथास्थित निरूपण हे ऐसे रस जे पुरुषोत्तम तिनके [७०]राज तें प्रकाश करिवेवारे याको फलितार्थ यह जो वेदव्यासजीनें समाधिद्वारा जा स्वरूपको अनुभव कियो ताको निरूपण श्रीभागवतमें कियो ऐसे जो [७१]द्वादशांगपुरुषोत्तम तिनके स्वरूपको अनुभव करायवेवारी ये बारह तुक हें. अथवा. द्वादशसङख्याते इन तुकनकों द्वादशात्मसूर्यत्व सूचन कियो सो ही स्फुट करत हें ऐ पहिलें कहीं बारह तुक ते. [७२]पदश्रीभागवतरसराज. पद जे श्रीपुरुषोत्तमके चरण तिनके राज ते प्रकाशक यातें पदनकूं कमलत्व सूचन कियो क्यों जो कमलनको [७३]द्वादशात्मा सूर्य प्रकाश करत हें. अथवा. पद. जो ज्ञान ताके प्रकाशक हें सूर्य हू वेदात्मक हें यातें ज्ञानप्रकाश हें. अब ज्ञान प्रकाशक हें यांहीतें श्री जो षडगुणैश्वर्य ताको हू प्रकाशक हें केसें जो [७४]अज्ञानतें हि षडगुणैश्वर्य लुप्त भये हें ज्ञानतें उद्‌भूत होत हें यह प्रकार विद्वन्मंडनमें तथा भाष्यादिग्रंथनमें निरूपण कियो हे. अब इतनो फल तो मर्यादामार्गीयज्ञानीकूं हू प्राप्त होत हे तब भक्तनकों यातें अधिक पुष्टिफल कहा होत हे सो दिखावत हें भागवतरसराज भगवान् जो षडगुणैश्वर्यवान् पुरुषोत्तम तिनको रस जो भक्तिरस ताके हू राज सो

प्रकाशक याको फलितार्थ यह जो या आख्यानके गानतें अज्ञानरूप अनिष्ट निवृत्त होयकें ज्ञानद्वारा अलौकिकैश्वर्यप्राप्तिरूप फल प्राप्त होय ओर याको अत्यंतव्यासंगतें ज्ञानको परमफल जो प्रेमलक्षणा भक्ति सो प्राप्त होय. अब ऐसो पदार्थ करिवेकी शक्ति तुमकूं केसें भई या शंकाको निवारण करत हें. **भक्तजनपदरजप्रतापें** भक्तजन जो भायलाकोठारीप्रभृति सब भगवद्भक्त तिनकी पदरज जो चरणनकी रेणु ताके प्रतापतें. अथवा. भक्त हें जन जिनके ऐसे पूर्णपुरुषोत्तम श्रीविटठलनाथजी तिनके पदरजके [७५]प्रतापतें. **सकलसरियांकाज** सब कार्य सिद्ध भये. अथवा. सकल. जो सर्व कलायुक्त श्रीपुरुषोत्तम तिनके गुणरूपके वर्णनरूप जो कार्य ते सिद्ध भये याको भावार्थ यह जो श्रीपूर्णपुरुषोत्तम श्रीविटठलनाथजी मेरे हृदयमें पधारिके यह कार्य कियो नहीं तो मेरे कहा साम्थर्य इनकी कृपासूं ही में कृतकृत्य भयो ओर इन बारह तुकनमें गुप्त रीतिसों श्रीभागवतके बारह स्कंधनको मुख्य [७६]सारभूत अर्थ वर्णन कियो हे याहीतें इहां स्कंध सङख्याएकह्यांपदश्रीभागवतरसराज ऐसें कह्यो. [७७]अनिष्टनष्टि-संतुष्टशिष्टेष्टफलदोमुदा. वर्णितोविटठलः श्रीमांस्तुर्ये-पन्नतिपूर्वक ।।४।।

।। इति श्रीमद्बालकृष्णचरणैकतानश्रीमद्गोवर्द्धनगुरुपादपद्मपरागप्राप्त परमोदयश्रीमद्गोकुलोत्सवात्मजजीवनाख्येन विरचितंचतुर्थाख्यानस्यव्यांख्यानंसमाप्तिम् अगमत् ।।

६२. रसशब्दे या धातुको रसशब्द होत हे यातें रस ऐसो शब्दको नाम भयो.

६३. ग्रंथ करे ऐसें नहि कह्यो ओर तिनको उच्चार आपनें कर्यो ऐसें कह्यो यातें फलितार्थ यह बिद्ध भयो जो वे सब ग्रंथ तो भगवल्ललोकमें सदा रहत हें परंतु विनको उचारण मात्र या लोकमें आपनें कियो यातें ग्रंथनको नित्यत्वतो सूचित भयो.

६४. श्रीमहाप्रभुजी भक्तिसंप्रदायके उपदेशकर्ता हे.

६५. भक्तिके ओर भक्तिमार्गीय आचरणके उपदेशके लिये श्रीमहाप्रभुजीनें निबंधादिकग्रंथनमें अनेक वाक्य लिखें हें ओर अनेक श्रुतिस्मृतिपुराणवाक्यको व्याख्यान आपनें भाष्यादिकग्रंथनमें कियो हे.

६६. श्रीभागवतमें कह्यो हे जो हे भगवदीयो मोक्षमें हू भगवत्सम्बन्धि भक्तिरसको पान करो ओर भक्तिको रसपनो मुक्तकंठाभरण भक्तिरसत्ववाद भक्तिमार्तंड प्रभृतिग्रंथनमें विस्तारसों निरूपण कियो हे.

६७. यह जीव अविद्यासों छूटिके अक्षरब्रह्मके संग एकता पायकें जो मुक्तिको आनंद अनुभव करे सो ब्रह्मानंद कह्यो जाय.

६८. ओर अलौकिकभगवद्रूपदेहसूं अखंड भगवत्सेवाको जो आनंद होय सो भजनानंद कह्यो जाय.

६९. नगृहंगृहमित्याहुर्गृहिणीगृहमुच्यते इत्यादिक स्मृति वचनतें गृह शब्दको गृहस्थाश्रम यह अर्थ भयो ओर गृहस्थाश्रम अनेक प्रकारसों धर्मको रक्षक हे या विषयक कितनेक शास्त्रके वचन मेनें वल्लभस्तोत्रकी टीकामें लिखे हें.

७०. राजरूदीप्तौ वा धातुको राज यह शब्द भयो हे तातें प्रकाश करिवेवारे ऐसो अर्थ टीकामें कियो हे सो युक्त हे.

७१. पुरुषोत्तमको स्वरूप द्वादश अंगवारो हे यह बात तैत्तिरीयादि शाखानमें प्रसिद्ध हे.

७२. पद सो प्रभुनके चरण अथवा ज्ञान ओर श्री सो अलौकिक ऐश्वर्य ओर भागवतरस से भक्तिरस इन तीनों पदार्थ नहीं राज सो प्रकाश करिवेवारी यह बारह तुक हे सोही अर्थ टीकामें स्फुट लिखत हें.

७३. सूर्यके स्वरूप एक एक महिनाके जुदे जुदे नामके कहत हें ऐसें बारह महिनाके बारह स्वरूप सूर्यके हें यातें सूर्यकों द्वादशात्मा कहत हें.

७४. भगवान्में ऐश्वर्य वीर्य यश श्री ज्ञान वैराग्य यह ६ गुण रहत हे ओर जीव हे ते सब भगवानके अंश हें तब ऐसें अग्निके अंश पतंगा हें तिनमें उष्णताप्रकाशादिक अग्निके धर्म रहत हें तेसे जीवमें हू प्रभुनके ऐश्वर्यादिक धर्म रहे चाहियें परंतु वे धर्म जीवमें रहे तो कोईकूं मोह न होय तब सृष्टि न चले तासुं प्रभुननें सृष्टि चलायवेके लिये जीवमें अपने ऐश्वर्यादिक धर्मनको पहिलेंही तिरोभाव करि लियो ओर या जीवकों अविद्या लगाय दीनी अब यह जीव सद्गुरु कृपासों जब पाछो ब्रह्मज्ञान प्राप्त होय ओर भगवद् भक्ति करे तब विन ऐश्वर्यादिक धर्मनको फिर आविर्भाव होय सब प्रकार पराभिध्यानादिसूत्रनको भाष्यमें तथा विद्वन्मंडनादिग्रंथनमें लिख्यो हे.

७६. प्रभुनकी चरणरेणु हे सो ब्रह्मादिकनकों हू दुर्लभ हे ओर सेवोपयोगि अलोकिकदेहसिद्धकरणहारी हे सो श्रीभागवतमें धन्या अहोअमी आल्योगोविंदाघ्रयख्जरेणवः. यान्ब्रह्मेशोरमादेवीदधुमूर्ध्न्यधनुत्तये. चरणरजउपास्तेयस्यभूतिर्वयंकाः. यावैलसच्छी तुलसीविमिश्रपादख्जरुण्वभ्यधिकांखुनेत्री इत्यादि श्लोकनमें निरूपण किये हे तातें टीकामें प्रभुनकी चरणरजको अर्थ कियो सो हू युक्त ही हे.

७६. अब इन बारह तुकनमें श्रीभागवतके १२ स्कंधनको सारभूत अर्थ कोनसी रीतसों रह्यो हे सो यथा बुद्धि कछूक लिखत हूं प्रथमस्कंध भगवतचरणरूप हे ओर वामें सब प्रकारके अधिकारीनकि कार्यसिद्धि कही हे ओर श्रीभागवतकी जगतमें प्रवृत्ति हू या स्कंधते भई हे क्यों जो सूतशौनकादिनकी कथा या ही स्कंधमें हे ऐसें ते पदवंदु या तुकमें चरणको हि वर्णन कियो ओर सकल जीवनकी द्वंद्वनिवृत्ति हू कही ओर जगतमें

मुखमकरंदकी व्याप्ति हू कही तातें प्रथमस्कंधको तात्पर्य या तुकमें दीखत हे अब द्वितीयस्कंध हू चरणरूप हे वामें विमर्शादि प्रकरणनतें ज्ञानको निरूपण कियो हे सो उपनिषदके अनुसार कियो हे ओर मनुष्यमात्रको श्रवणकीर्तनादिभगवद्भक्तिको ओर मोक्षको अधिकार कह्यो हे तेसे ही इहां दूसरी तुकमें मोक्षादिसुखदाता चरणको वर्णन कियो ओर सबजनके निस्तारार्थ निगम रहस्य विचार कह्यो हे अब तृतीयस्कंधमें सर्गको निरूपण हे ओर सर्गको लक्षण श्रीमहाप्रभुननें अशरीरस्यविष्णोःपुरुषशरीर स्वीकारः सर्गः यह लिख्यो हे तेसें ही तीसरी तुकमें ब्रह्मकुल हरिअवतर्या यह निरूपण कियो ओर सबके कारण हू आप हे इत्यादिक सूचन कियो अब चतुर्थस्कंधको अर्थ विसर्ग हे ओर विसर्ग सो सब नित्यकार्यको आविर्भाव सो ही चोथी तुकमें गुणप्रकट विविधविहार इत्यादि निरूपण कियो अब पंचमस्कंधको अर्थ स्थान हे ओर स्थान सो आधार प्रभुनकी सबजग्गे स्थिति सो ही पांचमीतुकमें निरूपण कियो हे ओर सारमें सार प्रभु कहे तातें स्थितिवैकुण्ठविजयः ये हू लक्षण मिल्यो अब षष्ठस्कंधको अर्थ पोषण हे ओर पोषणसो अनुग्रह ओर कायिक सिद्धिके लिये प्रभुनको प्रवेश सो ही छटठी तुकमें अनुग्रहको सप्तमस्कंधको अर्थ उतिहे ओर उतिसो वासनो सोही सातमी तुकमें भ्रमरनके वर्णनते अलौकिकवासनाको निरूपण कियो ओर विलासके हू वर्णन कियो वस्तुतः भ्रमरनको वेषमात्र हे वे परमभक्त हें ताहीतें जो श्रीमहाप्रभुननें ब्रह्मज्ञानिनःप्रतीतिसिद्ध्यर्थ तत्रतादृशलीलाप्रदर्शनमूतिःयह लिख्यो हे सो हू दिखायो याहीतें संशयपरिहार हू कह्यो अब अष्टमस्कंधको अर्थ मन्वंतर हे ओर मन्वंतर सो मोक्षोपयोगी धर्म सो ही आठमीतुकमें नामस्मरणादि धर्म कह्यो ओर याहीतें भयहारित्व हू कह्यो क्यों जो मोक्षबिना भय सर्वथा मिटत नाहि सो ब्रह्मवल्ली बृहदारण्यकमें लिख्यो हे अब नवमस्कंधको अर्थ ईशानुकथा हे ओर इशानुकथा सो प्रभुनको चरित्र भक्ति ता पाछे भक्तनको चरित्र विनकों भगवत्परता होयके अहंताममतारूप संसारकी निवृत्ति सो ही श्रीमहाप्रभूननें प्रलयोपि अहंताममतारूपस्यईशानुकथाया या पंक्तिमें लिख्यो हे सो ही सब इहां स्वरूप अर्थे या नोमी तुकमें कह्यो हे ओर नवमस्कंधकीनांई राजकार्यको हू वर्णन कियो अब दशमस्कंधको अर्थ निरोध हे सो प्रभूननें पूर्ण अवतार लेकें जगतमें बाललीलाप्रभृति अनेक क्रीडा करिकें सब प्रकारके भक्तनकों प्रपंचकी विस्मृति कराई सो निरोध कह्यो जाय ये ही तात्पर्य दशमीतुकमें दिखायो हे अब एकादश स्कंधको अर्थ मुक्ति हे ओर मुक्ति सो या जीवकों प्राकृतदेहादिकसम्बन्ध छूटिकें अलौकिक स्वरूपकी प्राप्ति सो ही ग्यारमी तुकमें जीवनकों ऐसो फल देकें श्रीमहाप्रभूननें भक्तवत्सल जो प्रभु तिनको ताप दूर कियो यह वर्णन कियो ओर एकादशस्कंधमें प्रभुननें अनेक धर्म कहे हें ताको तात्पर्य हू इहां दिखायो अब द्वादशस्कंधको अर्थ आश्रय हे ओर आश्रय ऐसो सर्वकर्ता जे प्रभु तिनको नाम हे ओर भक्तनको अखंड अलौकिक सुखकी प्राप्ति होयके केवल प्रभुनमें ही स्थिरता सो आश्रय कह्यो जाय सो ही इहां बारमी तुकमें सर्वांग शोभायुक्त प्रभुनको ही वर्णन कियो ओर सुखदपनो हू वर्णन कियो ओर सदन शब्द ते आश्रयपनो हू स्पष्ट कह्यो याहीतें द्वादशस्कंधोक्त चतुर्विधप्रलयमें हू आधार आपही हे यह गुप्तरीतसों सूचन कियो ओर आप ही श्रीभागवतरूप होयकें अपनी लीला जगतमें प्रसिद्ध करत हें सो

हू पोते ते प्रगट पोतातणो रसतणोकरयोरे उच्चार यातें सूचन कियो या प्रकारतें या आख्यानमें बारहस्कंधको निष्कर्ष सारार्थ हे सो मेनें अंगुलिनिर्देशरीतसों लिख्यो हे ओर विशेषजानिवेकी इच्छा होय तो स्कंध २ अध्याय १० श्लोक १ अत्रसर्गोविसर्गश्चस्थानपोषणमूतयः इत्यादि श्लोकके श्रीसुबोधिनीजीके तथा निबंधके विचारतें जान्यो जायगो ओर महानुभावनके मुखतें जान्यो जायगो मेरो विशेष लिखिवेको सामर्थ्य नाहीं.

७७. अब रीतसों गोस्वामि श्रीजीवनजी महाराज चतुर्थाख्यानको व्याख्यान करिकें या आख्यानको संक्षेपसों सब अर्थ एक श्लोकमें लिखत हें ता श्लोकको अर्थ जो शिष्ट अपुने भक्त हें तिनके सब अनिष्ट निवृत्त करिकें श्रीगुसांईजी उनको संतोषयुक्त करत हें फेर उनकी जेसी इच्छा होय तेसो आछो फल आप देत हें ओर आप श्रीमान् हें इतनें श्रीभागवतके बारहस्कंधनमें जेसी प्रभुनकी अलौकिकसमृद्धि वर्णन कीनी हें तेसी समृद्धियुक्त आप हें ऐसे जो श्रीगुसांईजी तिनके चरणारविंदकें वंदन करिकें आनंदसों या चोथे आख्यानमें उनको वर्णन कियो अब या आख्यानके अर्थको. देहा. इहं चौथे आख्यानहरि. कहे स्कंधअनुसार. निज जनअनहित टारिसब. नितहितअमितउदार.

।। इति श्रीमद्वल्लाचार्यमतवर्तिनामोक्ष गुरुस्वमातामहगोस्वामिश्री व्रजवल्लभचरणैकतानेनस्वपितुः सकाशादेवलब्धविद्येनपंचनदिघनस्याम भटटात्मज गोवर्द्धनाशुविनाकृतं चतुर्थाख्यानव्याख्यानटिप्पणं संपूर्णम्.)

संस्कृत टीका

पंचमाख्यान

१ श्रीविटठल सुखकारी

(राग सामेरी)

श्रीकृष्णाय नमः. अब चतुर्थाख्यानमें श्रीगुसांईजीको सर्व भक्तनकूं अनिष्ट निवृत्तिपूर्वक इष्ट संपादकत्व निरूपण कियो. अब पंचमाख्यानमें श्रीगुसांईजीको हू स्वतंत्रमार्ग प्रवर्त्तकत्व निरूपण पूर्वक निरूपण करत हें. रागसामेरी. या रागमें या आख्यानको गान कियो ताको तात्पर्य यह जो गोपालदासजीको श्रीगुसांईजीके दर्शन नित्यरासलीला विशिष्ट पुरुषोत्तमके भये. ओर रासलीलाको समय रात्रि हे तातें रात्रिको राग सामेरी तामें या आख्यानको गान कियो.

श्रीविटठल सुखकारी नामे निष्पाप थाय नरनारी ।।
दुर्गति सकल निवारी प्रगटया श्रीव्रजपति रास विहारी ।।१।।

श्री विटठल श्री जो स्वामिन्यादिक तिन करिके सदायुक्त विटठल [१]निःसाधनजनहितकर्ता पुरुषोत्तम वे केसे हें. **सुखकारी** निरवधि आनंददाता. ये ही अभिप्राय ब्रह्मवल्ली उपनिषदमें निरूपण कियो हे ओर सदा स्वामिन्यादिक करीके युक्तत्व हू याही उपनिषदमें [२]मोत प्रमोदकूं पक्षत्व निरूपण करिकें सूचन कियो हे. अब निरवधिआनंद कोन प्रकारसूं देत हें सो कहत हे. **नामे निष्पाप थाय नरनारी** नाम जो श्रीविटठल ऐसो नाम तातें नरनारी. स्त्रीपुरुष मात्र निष्पाप सो पापरहित होत हें नरनारी ऐसे कह्यों तातें यह सूचन कियो जो मर्यादामें तो ब्रह्म ज्ञान बिना पाप नहीं निवृत्त होय ओर ब्रह्मज्ञान [३]ब्राह्मणवर्ण बिना ओर [४]पुरुषव्यक्ति बिना नहीं होय याहीतें [५]मुचुकुंदराजाकों ब्राह्मणजन्म भये पीछें मोक्ष भयो. ओर आप श्रीगुसांईजी तो पुष्टि पुरुषोत्तम हें तातें आपके नामोच्चारणमात्रतें ही स्त्रीपुरुषादि [६]सबनको निष्पाप करत हें. यह वार्ता [७]अजामिल आख्यानमें स्पष्ट हे. अब नामोच्चारणमात्रतें पाप निवृत्त भये सो केसें जान

पडे ताको चिह्न कहत हें. **दुर्गतिसकलनिवारी** दुर्गति जे दुःख ते सब निवारे याको भावार्थ यह जो दुःख हे सो पापको फल हे. ओर [८]पापापूर्व अदृश्य हे तातें जब दुःखनिवृत्ति होयकें अलौकिक सुख या लोकमें मिले तब जाननो जो पाप निवृत्त भये. जो अनुभव जापें श्रीगुसांईजी कृपा करत हें ताकों स्पष्ट होत हे तातें दुर्गतिसलकनिवारी ऐसें कह्यो. ऐसे पुष्टिकार्य करिवेके लियें अंशावतार नहीं भयो नित्य लीलाविशिष्टपूर्ण पुरुषोत्तम ही प्रकटे सो कहत हें. प्रगटया श्रीव्रजपतिरासविहारी. [९]श्रीयुक्त जो व्रज ताके पति ओर तहां अनेक भक्त सहित रासविहार करिवेवारे प्रकट भये ओर व्रजकों श्रीयुक्तत्व तो श्रीमद्भागवतमें. [१०]तत आरभ्य नंदस्य व्रजः सर्वसमृद्धिमान्. हरेर्निवासात्मगुणैः रमाक्रीडमभून्नृप. [११]श्रयतइन्दिरा शश्वदत्रह. इत्यादि स्थलमें निरूपण कियो हे. अथवा. श्रीविटठल जो पूर्ण पुरुषोत्तम तिनके. **नामें** सो भगवन्नामरूप वेद तातें. अब वेदतें तो अध्ययनपूर्वक सूत्रभाष्यद्वारा [१२]शाब्दज्ञान होय [१३]फेरमनननिदिध्यासनतें निष्पाप होय सो अविद्यासम्बन्ध छूटिकें अक्षरब्रह्म होय तब प्रभु वाको स्वीयत्व करिकें [१४]वरें तब. **थाय नरनारी** नर जो जीव सो नारी होय याको फलितार्थ यह जो प्रभुस्वीयत्व करिकें वरें तब वाके हृदयमें प्रेमलक्षणा भक्ति उत्पन्न होय तब वाकूं ऐसे स्फूर्ति होय जो में उपभोग्य हूं ओर पुरुषोत्तम पति हें या अभिप्रायतें कह्यो थाय नरनारी. अब हृदयमें भगवदाविर्भावके प्रतिबंधक सब निवृत्त होय तब ही यह फल प्राप्त होय तातें प्रतिबंध हू आपही निवृत्त करत हें सो कहत हें. **दुर्गतिसकलनिवारी** दुर्गति जो हृदयमें भगवदाविर्भावके प्रतिबंधक तिनकों निवारी सो निवारण किये फेर वाकों [१५]हृदयगुहामें गोलोकसहित पुरुषोत्तमके दर्शन होय सो कहत हें. **प्रगटयाश्रीव्रजपति** वाके हृदयमें प्रकटे सो कोन [१६]श्रीव्रजपति व्रज जो गोलोक ताके पति व्रजपति ऐसें कह्यो तातें यह सूचन कियो जो जेसें पति [१७]स्वाधीनपतिका स्त्रीको त्याग नहीं करे तेसें प्रभू हू क्षणमात्र व्रजको त्याग नहीं करें याहीतें स्वलीला-धामसहित प्रभु हृदयमें प्रकटें यह बात सिद्ध भई अब या रीततें या लोकमें येही देह अलौकिक होयके जीव अलौकिकसुखको अनुभव करे फेर या लोकतें परलोक जाय तब वाके संग प्रभु **रासविहारी** रासादिकविहार करें यह सब प्रकार ब्रह्मवल्ली कठवल्ली प्रभृति उपनिषदनमें कह्यो हे ओर फलाध्यायचतुर्थ-पादकेभाष्यमें हू यह सब विवेचन कियो हे. अब पुरुषोत्तम तो नित्यसर्वलीलाविशिष्ट हें सो [१८]वेदमें निरूपण कियो हे तो हू इहां रासविहारी ऐसें कह्यो ताको अभिप्राय यह जो संपूर्ण शृंगार-रसको अनुभव रासलीलामे हे क्यों जो शृंगार-रस द्विदलात्मक हे. [१९]पूर्वदल संयोग उत्तरदल विप्रयोग सो दोई दल पूर्ण रासलीलामें हे वाको जीवकों अनुभव करावें हें यह प्रकार सब आनंदमयाधिकरणके द्वितीय [२१]वर्णकमें श्रीगुसांईजीने स्पष्ट निरूपण कियो हे. अब या सब तुकको फलितार्थ यह जो श्रीगुसांईजी पूर्णपुरुषोत्तम हें जीवपें कृपा करिकें [२२]पुष्टिमोक्ष देत हें. ॥१॥

अब दैवीजीवनकों पुष्टिमोक्ष देत हें यह निरूपण करिकें आसुरप्रवर्त्तितमतको आपने खंडन कियो सो निरूपण करत हें.

(१. निःसाधन सो धर्मादिक साधनके बलसूं हम जरूर तरेंगे या रीतको साधनको अभिमान जिनकूं न होय ते निःसाधन ऐसो जननके हितकारी प्रभु ही हें सो ही श्रीभागवत द्वितीय स्कंधमें अहन्यापृतंनिशिशयान् मति श्रमेण लोकं विकुंठमुपनेष्यति गोकुलंस्म. श्लोकनमें कह्यो हे ओर सामवेदके केनोपनिषत्में हू यह बात कही हे.

२. वा उपनिषदमें प्रभुनको पक्षिरूपसूं निरूपण कियो हे तामें मोद जेवनोपक्ष हे सो दक्षिणभागस्थ स्वरूप हे ओर प्रमोद बायोपक्ष कह्यो हे सो वामभागस्थस्वरूप हे ओर जेसें पक्षीके दोय पक्ष वासोंभिन्न नहि हें ओर पक्षीकी गमनादिक क्रीडापक्षके आधारसो होत हे तेसें प्रभुनते वे दोय स्वरूप भिन्न नहि हें ओर प्रभुनकी सब क्रीडाके प्रयोजक हें या बातको विशेष विवेचन मेनें वा उपनिषदके व्याख्यानमें कियो हे.

३. उपनिषत् पढिवेको अधिकार ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य इन तीन वर्णकूं हे स्त्री शूद्रनकूं नाहि ताते उपनिषत्के श्रवणमननादिक तें जो ब्रह्मज्ञान होनो सो तीन वर्णमें ही होय ओर पुराणादिकके अनुसारसों ब्रह्मज्ञानमें तो स्त्री शूद्रनको हू अधिकार हे सो प्रमाणसहित मेनें सत्सिद्धांतमार्तंडमें लिख्यो हे परंतु अब कलियुगमें तो ब्राह्मण ओर शूद्र ये दोय ही वर्ण हें तातें टीकामें केवल ब्राह्मण लिख्यो.

४. व्यक्ति सो शरीर इहां जानना.

५. अब मुचुकुंदराजाकों वा जन्ममें मोक्ष प्रभुननें न दियो ओर कही जो दूसरे जन्ममें तू ब्राह्मण होयके मोक्षकूं प्राप्त होयगो सो श्रीभागवत दशमस्कंधमें कह्यो हे अध्याय ५१ श्लोक ६४ जन्मन्यनंतरे राजन् सर्वभूत सुहृत्तमः. भूत्वाद्विजपरस्त्वं वै मामुपैष्यसि केवलम् या श्लोकमें

६. सबनकों सों चार्यो वर्णनको निष्पाप करत हें क्यों जो भक्तिको अधिकार सब वर्णनकों हे सो गीताजीप्रभृतिनमें मांहिपार्थव्यपाश्रित्येऽपि स्युःपापयोनयः. स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यांति परां गतिं. किं पुनः ब्राह्मणाः पुण्या भक्ताःराजर्षयोऽमलाः इत्यादि श्लोकनमें कह्यो हे.

७. महापापी अजामिलनामाब्राह्मणको अंत्यसमें नारायणनाम लिये ते उद्धार भयो सो कथा श्रीभागवतके षष्ठस्कंधमें प्रसिद्ध हे.

८. निषिद्ध काम विषें तें करिवेवारेकों अपूर्व संस्कार लगत हे ताकों पाप कहत हें ओर शास्त्रविहित आछो काम किये तें जो अपूर्व संस्कार लगत हें ताकों पुण्य कहत हें यह बात पूर्वमीमांसामें प्रसिद्ध हे ओर पाप पुण्य दोउनको चिह्न शरीरमें कछु दीखत नांही परंतु बुद्धिमें फरक पडे ओर आछो बुरो फल होय तब मालूम पडे तातें टीकामें पापापूर्वअदृश्य हे यह लिख्यो सो युक्त हे.

९. श्री जो लक्ष्मीजी तिनकरिकें सहित ओर टीकामें अनेक भक्तसहित विहार करिवेवारे ऐसें कह्यो तातें श्री जे स्वामिन्यादिक तिनके व्रजजे समूह

तिनके पति ऐसो हूं अर्थ या पदको होतहे सो सूचन कियो.

१०. प्रभु प्रकट भये तादिनतें ही नंदरायजीको व्रज उत्सव समृद्धियुक्त भयो ओर प्रभुनके निवासतें तथा अपुने उत्तमगुणनतें लक्ष्मीजीको क्रीडास्थान भयो यह दशम स्कंधपंचमाध्यायमें कह्यो हे.

११. ओर गोपीकागीतमें गोपिकाननें कह्यो हे के प्रभो आप प्रकट भये ताहीतें या व्रजमें लक्ष्मीजी सदा रहत हें.

१२. शब्दज्ञान सो प्रभुनकी परोक्षता रहिकें ग्रंथनद्वारा यथार्थज्ञान जो प्रभुनको यह स्वरूप हे.

१३. पहिले तो वेदगीता व्याससूत्र श्रीभागवतद्वारा तथा सुबोधिन्यादिकग्रंथ द्वारा गुरुनके मुखतें प्रभुनकें स्वरूपको श्रवण करे ता पीछें मनन सो विचार करिके फेर निदिध्यासन सो ध्यान करे तब वाकों प्रभुनके साक्षात् दर्शन होय तो बृहदारण्यकादिक उपनिषदनमें लिख्यो हे.

१४. अब प्रभु जीवकों वरें सो वह मेरो हे या रीततें अंगीकार करें तबही वा जीवकों प्रभुनकी प्राप्ति होय नहीं तो होय नहीं सो मुंडककठवल्लयादि उपनिषदनमें स्पष्ट लिख्यो हे.

१५. ब्रह्मवल्ली उपनिषदमें अक्षरब्रह्मके ओर पुरुषोत्तमके ज्ञानतें तथा भगवत्कृपातें हृदयमें गोलोकसहित पुरुषोत्तमको आविर्भाव होत हे ऐसे लिख्यो हे तहां हृदयको गुहा ऐसो नाम लिख्यो हे गुहा सो गूफा जेसें गुफानमें बहुत करिकें अंधकार रहत हे तातें उहां पदार्थ होय सो हू दीखत नाहि तेसें प्रायःसबजीवनके हृदयमें अज्ञान रहत हे तातें प्रभु हृदयमें बिराजत हें तो हू दीखत नाहि इत्यादि अभिप्रायनतें हृदयको गुहा ऐसो नाम वेदमें कह्यो हे ताहीके अनुसार टीकामें हृदयगुहा लिखी सो युक्त हे ओर वा उपनिषदमें परमव्योमशब्दकरिकें हृदयमें भगवद्धामको आविर्भाव कह्यो हे सो हू टीकामें दिखायो.

१६. वेदमें सो विष्णूसूक्तादिकमें कह्यो हे

१७. श्रीव्रजपति कह्यो तातें जेसें व्रजशब्दतें हृदयमें धामसहित प्रभुनको आविर्भाव सूचन कियो तेसें ही श्रीशब्दतें स्वामिन्यादि सहित प्रभुनको आविर्भाव सूचन कियो.

१८. जा स्त्रीको पति वाके आधीन होय ताकों स्वाधीनपतिका कहत हें जेसें वह पति वाकों कब हू छोडे नाहि तेसें प्रभु हू व्रजके आधीन जेसें हें तातें कब हू व्रजदेशकों छोडत नाहि सो ही श्री भागवतादिपुराणमें मथुराभगवान्यत्रनित्यंसन्निहितोहरिः इत्यादिस्थलनमें स्पष्ट कह्यो हे.

१९. नित्य ऐसी जो सर्व लीला तिन करिकें विशिष्ट सो सहित ऐसें आगे हू जहां टीकामें विशिष्टशब्द आवे तहां सहित ऐसो अर्थ जाननो.

२०. पूर्वदल सो पेहेलो भाग ओर उत्तरदल सो दूसरो.

२१. व्याससूत्रमें प्रथमाध्यायके प्रथमपादमें आठसूत्रको आनंदमयाधिकरण हे ताको एकतरहसूं श्रीमहाप्रभुननें व्याख्यान कियो हे ओर दूसरी तरह सूं श्रीगुसांईजीनें व्याख्यान कियो हे सो दूसरो वर्णक कह्यो जाय.

२२. पुष्टिमोक्ष सो पुष्टिमार्गीय मोक्ष आदिमूर्तिः कृष्णएवसेव्यः सायुज्यकाम्यया इत्यादि स्थलमें श्रीमहाप्रभुननें जो सायुज्यमुक्ति कही हे सो.

संस्कृत टीका

२ मायिकमत जेणें

मायिकमत जेणें खंडयो, भक्तिमारग जेणें बहु पेरें मंडयो ।।
उत्पथजन सखे डंडयो, मूरख हेतु कुशब्द वितंडयो ।।२।।

मायिकमत सो मायावादिको मत ताकूं जिननें **खंडयो** सो वाको खंडन कियो और भक्तिमार्गको. **बहुपेरें** सो. बोहोत प्रकारतें. **मंडयो** सो वाको मंडन कियो ओर. [२३]उत्पथ. जो वेदबाह्य [२४]बौद्धादिकमत तिन मतनकी वृद्धिकरनहारे जे. **जन** सो मनुष्य तिनकों. **डंडयो** सो विनकूं दंड दियो विनकों कहां दंड दियो सो कहत हें. **मूरख हेतु** मूरख जो [२५]मूरखपनो अज्ञान ताके हेतु ऐसे जे. **कु शब्द** सो कुत्सितकल्पना जिनमें हे ऐसी विनकी ग्रंथरूप वाणी ताकों [२६] वैदिकमतानुसारयुक्तिनतें. **वितंडयो** सो [२७]वितंडा हे ऐसें स्पष्ट स्थापन कियो. शंका. यह सब कार्य तो श्रीवल्लभाचार्यजीनें प्रथम ही कियो हे तब इनने फेर क्यों कियो. प्रत्युत्तर. तेने कही सो ठीक हे परंतु याको कारण यह जो श्रीवल्लभाचार्यजीनें श्रीगुसांईजीको हू स्वतंत्रतातें आचार्यत्व भूतलमें प्रसिद्धकरिवेके लियें जो अंश राख्यो सो सब श्रीगुसांईजीनें पूर्ण कियो यातें या तुकमें निरूपण कियो सो युक्त हे ।।२।।

अब [२८]अवतारकार्य निरूपण करिकें आपके मुख्य स्वरूपको निरूपण करत हें.

२३. जा मतमे वेदकों प्रमाण न मान्यो होय सो मत वेदबाह्य कह्यो जाय ओर वेद बाह्यमतवारे मनुष्यके संग बोलिवेंको हू अत्यंत दोष लिख्यो हे तातें अस्मन्मार्गीयवैष्णवनके कबहू रंच हू वेदको अपमान सर्वथा न करो.

२४. बौद्धादिक या आदिशब्दतें जैन्य चार्वाक कापालिक शक्ति वाममार्गीय कौल इत्यादिक वेदनिंदकमतनको ग्रहण कियो वे सब वेदकूं तथा प्रभुनकूं नाहि मानत हें ओर अत्यंत व्यभिचारादिकदुराचारकरिकें युक्त हें तासों आपनें मार्गतें अत्यंत विरुद्ध हे.

२५. मूरख शब्दको भावप्रधाननिर्देश मानिके मूरखपनो ऐसो अर्थ कियो.

२६. वैदिकमत सो वेदमें जो प्रतिपादन कियो हे सो मत ताको अनुकूल पडे ऐसी युक्तिनतें ही श्रीमहाप्रभुननें परमतको खंडन कियो हे क्यों जो वेदकों रंच हू विरोध श्रीमहाप्रभुनकूं सह्य नहि हे ओर आपनो मार्ग सब वेदकें आधारसूं ही हे.

२७. वितंडा सो अपनो कछुभी एक सिद्धांत न मानिकें प्रमाणरहित झूठो वाद करनो.

२८. अवतारकार्य सो वेदब्राह्ममतखंडन करिकें ओर वेदप्रतिपादित स्वमार्ग प्रकट करिकें सब जीवनकों उद्धारकरनो याहीतें कीर्तननमें चहूं जुगबेदबचनप्रतिपारयो इत्यादि गायो हे ओर श्रीसर्वोत्तमजीमें हुं वेदपारगः यह आपको नाम हे.

संस्कृत टीका

३ वदन सुधाकर

वदन सुधाकर जोतें वचन सरस रस रास उद्योतें ।।
नवजलघनवपु पोतें भक्तिसरस कीधां प्रभु होतें ।।३।।

वदनसुधाकरजोतें वदन जो श्रीमुख सो [२९] **जोतें** सो प्रकाशते [३०]सुधाकर जो चंद्रता जेसों हे ओर चंद्रतें जेसें सुधा स्रवत हे तेसें वदनसुधाकरतें हू. **वचन उद्योतें** सो ग्रंथरूपवचन निकसत हें. अब सुधा तो रसपदार्थ हे तेसें वचन हू हें सो कहत हें. **सरससरास** सरस तो सबतें उत्तम. अथवा. शृंगारादिसर्वरसरहित ऐसे जे पुरुषोत्तम तिनको रस जो भक्तिरस तिनके रास सो राशि समूह तारूप वचन हें याको भावार्थ यह जो आपके वचन श्रवणमात्रतें जीवनकों भगवद्भक्ति उत्पन्न होत हें. अब श्रीमुखको चंद्रकी उपमा दीनी तातें यह सूचन कियो जो जेसें चंद्र दर्शनमात्रतें सूर्यको ताप मिटावे अंधकार मिटावे शीतलता करे आपकी सुधातें औषधीनको पोषण करे तेसें आपहू मुखचंद्रके दर्शनमात्रतें विप्रयोगको ताप मिटावत हें अज्ञानरूप अंधकार मिटावत हें ओर वचनामृत भक्तजनको पोषण करत हें अब या रीतसों तो आपको गौरवर्ण होयगो या शंकाको निवारण करत हे. **नवजलघनवपुपोतें** श्रीमुख तो चंद्र जेसो हे ओर पोतें सो आप सो केसे हें नवजलघनवपु नव सो नवीन ऐसो जो जलकरिकें पूर्ण घन सो मेघ ता जेसो श्याम हे वपु सो श्रीअंग जिनको. जेसें घन आवतें ही रसवृष्टि करत हें तेसें आप हू करत हें यह सूचन कियो. अब आप कोनसे रसकी वृष्टि करत हें सो कहत हें. **भक्तिसरस कीधाप्रभुहोतें** होतें सो प्रकट होयकें भक्तितें सबदैवीजीवनकूं सरस किये यातें भक्तिकूं रसत्व द्योतन कियो भक्तिकूं रसत्व तो प्रथमाख्यानव्याख्यानमें निरूपण कियो हे ओर घनकी उपमाको भावार्थ हू लिख्यो हे ।।३।।

अब भक्तनकों भक्ति रसतें [३१]सरस कोन रीततें करें हे सो निरूपण करत हें.

२९. ज्योतिः या शब्दको जोत ऐसो अपभृंश होत हे तातें टीकामें जोतें सो प्रकाशते ऐसो अर्थ कियो ओर कितनीक टीकाननें जोतें सो मुखचंद्र देखतें ऐसो हू अर्थ कियो हे.

३०. सुधा सो अमृत ताको आकर सो स्थान चंद्र अथवा सुधा सो अमृतरूप हें कर सो किरण जाके सो सुधाकर कहिये चंद्र.)

३१. सरसकिये सो भक्ति देकें सबनतें उत्तम किये अथवा भक्तिरससहित किये ओर या तुकमें प्रभु होतें या जग्गें प्रभु हो ते ऐसे हू पद करत हें अब या तुकको सुगम अन्वय. हे प्रभु नवीनसजलमेघश्यामस्वरूप ऐसे जे आप तिननें अपनें मुखचंद्रकी जोततें अथवा दर्शनतें ओर भक्तिरसराशिरूप अपुने वचनके प्रकाशतें सब दैवी जीवनकों भक्ति करिके सरस किये.

संस्कृत टीका

४ भक्तिपक्ष द्दढ

भक्तिपक्ष द्दढ कीधो वचनसुधारस जन श्रुति पीधो ।।
अर्थ सकल जेनो सीधो ते लीलामाहें ताणीनें लीधो ।।४।।

भक्तिपक्ष सो भक्तिमार्ग ताकों. **द्दढकीधो** सो ग्रंथनद्वारा द्दढस्थापन कियो ओर भक्तनके हृदयमें हू द्दढ स्थापन कियो सो केसें कियो सो कहत हे. **वचनसुधारस** वचनरूपी जो सुधारस सो अमृतरस सो. **जनश्रुतिपीधो** जन जे भक्तजन तिननें श्रुति जे कान तिनतें पीधो सो पीयो ओर वे वचन केसें हें. **अर्थ सकलजेनोसीधो** अर्थ जो शब्दार्थ वाक्यार्थ सो जिनको सीधो सो सरल हे याते जीवकों श्रवणमात्रतें बेग बोध होय. अथवा. आपके वचनामृत वेदरूप हें वें केसे हें. अर्थ **सकलजेनो सीधो** जाको अर्थ सब सीधो सो सिद्ध हे नित्य हे वेदको [३२]सिद्धार्थवादित्व तो पूर्व मीमांसाभाष्यादिकनमें श्रीवल्लभाचार्यजीनें निरूपण कियो हे अथवा. **अर्थसकलजेनो सीधो** जेनो सो जानें आपके वचन सुने ताको अरथ सो मनोरथ सकल सो सब सीधो सो सिद्ध भयो अब कहा मनोरथ सिद्ध भयो सो कहत हें. **ते लीलामाहें ताणीनेलीधो** ते सो जाने वचनामृत सुने सो जन लीलामाहें ताणीनें लीधो लीला जो नित्यलीला तामें [३३]

खेंचिकें लियो अब जीव तो अज्ञानी हे पुष्टिमोक्षको स्वरूप जाने नाहीं हे तब वाकी इच्छा कहांसू करे परंतु आप ऐसे कृपालु हें सो वाको उपेदश करिकें वा लीलामें अंगीकार करत हें यह सूचन करिवेकुं ही ताणीने लीधो ऐसें कह्यो या तुकको फलितार्थ यह जो भक्तनकों भक्तिमार्गको दृढ उपदेश करिकें नित्यलीलामें विनकूं अंगीकार करत हें ।।४।।

अब नित्यलीलामें अंगीकार जाकों करत हें ताकों कहा कहा उत्तम फल मिलत हें सो निरूपण करत हें.

३२. सिद्धार्थवादित्व सो वेदमें जो यज्ञादिकपदार्थ कहे हें ते सब नित्य ही हे.

३३. खेंचिकें लियो ऐसे कह्यो याको अभिप्राय यह जो जो मनुष्य अतिदुर्गमकूवामें अथवा समुद्रमें गिरिपडे सो अपुने सामर्थ्यतें निकसिल सकें नहि ओर वाकों दूसरे कोई समर्थ खेंचिके निकारे तब निकसे तेसे जीव हू गृहरूप अंधकूपमें पडे हें संसारसमुद्रमें मग्न हें वे अपुने साधनते तरि सकें ऐसे नांही तिन निःसाधनजीवनकों अपुने कृपाबलते आप अंगीकार करत हें येही अभिप्राय श्रीभागवतमें गृहांधकूपेपतितप्लवंसुकल्पंगुरुकर्णधार इत्यादिस्थलमें स्फुट हे सो ही अभिप्राय टीकासें हू दिखायो हे.

संस्कृत टीका

५ जेलीलामाहेंअंगीकरियो

ढाल

जेलीलामाहेंअंगीकरियो तेनो सकलताप निस्तरियो ।।
जेनें विटठलनाथविचारे तेनें प्रगट पदारथ चारे ।।५।।

जे सो जो भक्त लीलामें. **अंगीकरियो** सो अंगीकृत भयो ताको. **सकल** सो सब ताप. **निस्तरियो** सो निवृत्त भयो अब. **जेनें विटठलनाथविचारे** जेनें सो जाकूं विटठलनाथ सो पूर्ण पुरुषोत्तम ते विचारे सो यह मेरो हे ऐसें विचारें. **तेनें** सो ताकूं. **प्रगटपदारथचारे** चारे पदारथ सो चतुर्विधपुष्टिमार्गीयपुरुषार्थते प्रगट सो प्रत्यक्ष प्राप्त होय सोई वृत्रासुर चतुःश्लोकीकी व्याख्यामें [३४]पुष्टिमार्गेहरेर्दास्यंधर्मोर्थोहरिरे वहि. कामोहरेर्दिदृक्षैवमोक्षः कृष्णस्यचेत्ध्रुवम्. या श्लोकमें निरूपण कियो हे या तुकको फलितार्थ यह जो जाकों नित्यलीलामें अंगीकार करत हें ताके सब अनिष्ट निवृत्त करिकें वाकों [३५]आप्तकाम करत हें ।।५।।

अब अनिष्टनिवृत्ति होयकें आप्तकामपनो तो मायादिकमोक्षमें हू होय हे ओर इहां तो वातें हू अधिक फल हे सो निरूपण करत हें.

३४. श्रीभागवतमें षष्ठस्कंधके ग्यारमें अध्यायमें अहंहर्रेतवपादैकमूल इत्यादि छेले चार श्लोक हें सो वृत्रासूरचतुःश्लोकी कहावत हे ताकी टीकामें ममोत्तम या श्लोकके व्याख्यानमें पुष्टिमार्गहरेर्दास्यं यह कारिका हे याको अर्थ पुष्टिमार्गमें प्रभुनको दास मावसो मुख्यधर्म हे ओर प्रभु ही मुख्य अर्थ हें ओर प्रभुनके दर्शनादिककी इच्छा सो ही काम हे ओर सर्वात्मभावसों प्रभुनको साक्षात्सम्बन्ध सो ही मोक्ष हे यह पुष्टिमार्गीय चार पुरुषार्थमें सूं वृत्रासुरचतुःश्लोकीमें एक एक श्लोकमें एक एक पुरुषार्थको निरूपण हे ओर या आख्यानमें हू भक्तिपक्षदृढ कीधो या तुकमें पहिलें भक्ति पक्षकी दृढतासूं दासभावरूपधर्मा सूचन कियो ओर वचन सूधारसजन श्रुतिपीधो यातें आपके वचनामृत श्रवणतें भक्त प्रभुनकों ही सर्वस्वकरिकें मानत हें यातें अर्थ पुरुषार्थ सूचन कियो ओर अर्थ सकलजेनोसीधो इहां भगवदविषयक सर्व मनोरथसिद्धि निरूपण कीनी तातें अलौकिक कामपुरुषार्थ सूचन कियो ओर ते लीलामाहें ताणी लीधो यातें मोक्ष सूचन कियो.

३५. जाकों सब कामनानको फल प्राप्त भयो फिर जाकों कछू पदार्थकी आकांक्षा नहीं होवे सो आप्तकाम कह्यो जाय.

संस्कृत टीका

६ उपरांत भजनफल

उपरांत भजनफल आपे व्रजमंडल स्थिर करि थापे ।।
तेने देव मुनी सरवे गाये ते सर्वउपरांत सुहाये ।।६।।

उपरांतभजनफलआपे उपरांत सो लीलामें अंगीकार किये उपरांत भजनफल सो भगवद्भजन रूप फल. अथवा. भजसेवायांधातुको भजनशब्द हे यातें भजन जो सेवा तारूपीफल सो ही गरुडपुराणमें विष्णुभक्तिअध्यायमें कह्यो हे [३६]भजइत्येष वैधातुः सेवायां परिकीर्तितः. तस्मात्सेवाबुधैः प्रोक्ताभक्तिः साधन भूयसीति. अथवा. नाम स्मरणको ओर सेवाको फल जो श्रीअंगको [३७]स्पर्शादिक सो देत हें ये ही अभिप्राय नित्यलीलावादमें विद्वन्मंडनमें निरूपण कियो हे ओर सामवेदकी [३८]केनोपनिषदमें हू प्रभुनके स्पर्शको माहात्म्य निरूपण कियो हे. अब ऐसो फल मिले पीछें कहा होत हे सो कहत हें. **व्रजमंडलस्थिरकरिथापें** व्रजमंडल जो नित्यलीलास्थान ताकेविषें वाकूं [३९]स्थिर करिकें थापे सो राखें. **तेनेंदेवमुनीसरवेगाये** तेने सो वा भक्तकों देव मुनी तथा ओर सब वाके गुणको गान करत हें याहीतें. **तेसर्वउपरांतसुहाये** ते सो वह भक्त सर्व जो ब्रह्मादिक तिनतें हू अधिक सुहाये सो [४०]शोभत हे. अब या तुकको फलितार्थ यह जो परमफल वाकूं प्राप्त होय ओर ब्रह्मांडमें वाको यश होय ।।६।।

अब पुष्टि मोक्ष भयेपीछें भक्तकों भजन सेवा श्रीअंगको स्पर्श इत्यादिक फल होत हें सो देहविना नहीं संभवे ओर जाकूं देह होय ताकों जरा प्रारब्ध

मृत्यु इत्यादिक बाध कीये बिना रहें नहीं या शंकाको निवारण करत हें.

३६. भक्ति यह शब्द भजधातुमेंते भयो हे ओर भजधातूको अर्त सेवा हे तातें सब साधनन तें बडी ऐसी जो सेवा हे ताहीकों पंडितजन भक्ति कहत हें.

३७. स्पर्शादिक सो अलौकिकदेहतें प्रभूनको साक्षात् स्पर्श ओर आदिशब्दतें प्रभुनके संग संभाषणादिक लेनें जे वेणुगीतके श्रीसुबोधिनीजीमें अक्षण्वतांफलमिदं या श्लोकके व्याख्यानमें भगवतासहसंलापइत्यादिकारिकामें कहे हें ते.

३८. केनोपनिषत्के तीसरे खंडमें ऐसी कथा हे जो देवतानपें अनुग्रह करिकें प्रभुननें प्रथम दर्शन दियो तब देवताननें अग्निको कह्यो जो हे अग्नि यह आकाशमें कोन दिखत हे सो तुम निश्चय करि आव तब अग्नि प्रभुनके पास गयो ताकों प्रभुननें पूछयो जो तू कोन हे तब अग्निनें कही जो में अग्नि हू फिर प्रभुननें कही जो तामें कहा सामर्थ्य हे तब अग्निनें कही जो में यह सब पदार्थकों जारिसकों हों तब प्रभुननें एक तृण वाकों दियो ओर कही जो याकों जरायदे फिर अग्निने यथाशक्ति सगरो जोर कियो परंतु वह घास जरयो नहि तब अग्नि भयपायकें पाछो फिर चल्यो ओर आयकें देवतानको कही जो का जाने यह कोन हे सो में जानसक नांही तब देवताननें वायुकों पठायो ताकों हू प्रभुने वेसें ही पुछी फिर वायुने कही जो यह सब जगतको में उडायसकत हो तब प्रभुनने वाकू हू एक तृण देकें कही जो याकों उडाव तब वायुने अपुनो सब बल करिलियो परंतु वह तृण उडयो नहि तब वायु हू भय पायकें पाछो फिरि आयो तब देवताननें इंद्रकों पठायो ताकों पार्वतीजीके उपदेशसों प्रभुनको ज्ञान भयो तापाछें वा उपनिषदमें अग्नि वायु इंद्र इन तीन देवतानकी बहुत प्रशंसा करि हे जो ये सब देवताननतें अतिउत्तम हें क्यों जो इननें प्रभुनके पास जायके उनकों स्पर्श कियो ओर प्रभुनके साक्षात्कारपूर्वक ज्ञान प्रथम उनको भयो या रीतसों केनोपनिषतमें स्पर्शको माहात्म्य कह्यो हे याहीते अपुनें मार्गमें प्रभुनके पास जायके स्पर्शकरिवेको अधिकार जाको होय ताकों धन्य मानत हें.

३९. स्थिर करिकें स्थापन करत हें ऐसे कह्यो ताको अभिप्राय यह जो भगवल्लीलामें या भक्तको भगवद्रूप अलौकिकदेव सदा स्थिर रहत हे वाके जन्मजरामरणादिक कछू होत नांहि.

४०. जो जीव पुरुषोत्तमकी लीलाकों प्राप्त होत हें ते ब्रह्मादिकतें हू उपर शोभत हे यह बात उपनिषदनमें तथा श्रीभागवतमें हू त्वयाभिगुप्ताविचरंतिनिर्भयाविनायकानीकपम्र्रुर्धसुप्रभो इत्यादि स्थलनमें कही हे.

संस्कृत टीका

७ तेहेने काल

तेहेने काल करम नवबंधे जम तेसिर धनुष न सांधे ।।
ऐहवो मारग श्रीवल्लभवरनो ज्यांहां नही प्रवेश विधिहरनो ।।७।।

तेहेने सो जाकुं नित्यलीलाकी प्राप्ति भई ताकूं. **काल** सो जरादिक. **कर्म** सो प्रारब्ध पापपुण्य सो. **नवबांधे** सो नहीं बाध करें. अब यह तो एकरीतसों स्वर्गमें तथा [४१]ब्रह्मलोकमें हू नहीं बाध करत हें तातें इहां अधिक कहा यह शंकाको निवारण करत हें. **जमतेसिरधनुषनसांधे**स्वर्गमें तो क्षीणपुण्य होय तब मृत्युलोकमें पडे ताहीसूं गीताजीमें [४२]क्षीणेपुण्येमर्त्यलोकं विशंति. यह भगवद्वाक्य हे ओर महाप्रलयमें तो इंद्रादिकको तथा ब्रह्मलोकपर्यंतको हू लय होय ओर नित्यलीलास्थभक्तकों तो यमको हू भय नहीं. अब यमदूतको भय नही ऐसो नहीं कह्यो ओर जमतेसिरधनुषनसांधे ऐसें कह्यो याको भावार्थ यह जो लौकिकजीव तो तुच्छ हें याके पास यम आप काहेकूं जाय ओर लौकिकजीवनको देह जड हे जुदो हे ओर देहाभिमानी जीव जुदो हे ओर नित्यलीलास्थजीव तो उत्तमोतम हे जेसें भगवत्स्वरूपको हू सदैकरस आनंदमय हे तेसें नित्यलीलास्थ जीवको हू सदैकरस आनंदमय [४३]विग्रह हे तातें कदाचित् यम आप ही आयकें वाके देहकों बाध करतो होयगो यह शंकानिवारणार्थ ही जमतेसिरधनुषनसांधे ऐसें कह्यो. अब यमकी गति नही हे परंतु ब्रह्मादिक तो यमादिकनतें बडे हें तिनकी नित्यलीलामें गम्य होयगी यह शंका निवारण करत हें. **ज्यांहां नहीं प्रवेश विधिहरनो** ज्यांहां नित्यलीलामें विधि जो ब्रह्म ओर हर जो [४४]शिव तिनको हू प्रवेश नही हे तब ओर को प्रवेश कहांसूं होय. **ऐहवोमारग श्रीवल्लभवरनो** ऐसो श्रीवल्लभाचार्यजीको मार्ग हे जो जामें ऐसो उत्तमफल मिलत हे. अथवा ऐसो उत्तमफल मितल हें तब आसुरजीवभी या मार्गमें आवते होंयगे उनकूंभी यह फल मिलतो होयगो तब [४५]मामप्राप्यैवकौंतेयततोयांत्यधमांगतिम्. या

वाक्यको विरोध आवें यह शंका निवारण करिवेकूं कह्यो. [४६]नहिप्रवेशविधिहरने. विधि जो वेदोक्तविधि ताके हर जो बाधकरिवेवारे आसुरजीव तिनकों या मार्गमें प्रवेश हू नाहीं तब वह अलौकिकफल कहांते मिले. अब या तुकको फलितार्थ यह जो नित्य लीलाकी प्राप्ति भये पीछे कालादिकको भय नही ओर श्रीवल्लभाचार्यजीकी शरण गयेबिना यह फल मिले नही. ओर आसुरजीव **विधिपूर्वक** शरीण जाय नहीं तब वह फल कहांते मिले शंका. लौकिकदेह तो पंचमहाभूतको हे और [४७]शुक्रशोणितके योगतें उत्पन्न होत हें ओर अलौकिक देह कहा पदार्थको होत हे केसें होत हे. प्रत्युत्तर. बोहोत आछो तेने प्रश्न कियो याको. प्रत्युत्तर. जब जीव मुक्त होयकें या लोकतें भगवल्ललोकमें जात हे तब श्रीयमुनाजी भगवत्स्वरूपतें अभिन्न जो [४९]भगवच्चरणारविंदकी रज तातें लीलोपयोगी देह वा जीवको निर्माण करत हें फेर लीलोपयोगी देहतें अभिन्न होयकें जीव सर्वदा लीलाको अनुभव करे हे याहीतें द्वैत हू नही ओर कालादिकको बाध हू नहीं यह प्रकार सब ऋग्वेदकी कौषीतकि ब्राह्मणप्रभृति उपनिषदमें निरूपण कियो हे सोई श्रीगुसांईजीनें आनंदमयाधिकरणके दूसरे [५०]वरणकमें स्फुट निरूपण कियो हें ।।७।।

या रीतसो पुष्टि मुक्तिको स्वरूप निरूपण करिकें अब नित्यलीलास्थानको निरूपण करत हें.

४१. ब्रह्मलोकमें कालकर्मादिक बाध करत नाहि सो बात श्रीभागवतमें नयत्रशोकोनजरानमृत्युः इत्यादिकस्थलनमें प्रसिद्ध हे.

४२. जे पुण्यवान् स्वर्गमें जात हे ते अपने पुण्यप्रमाणे सुखभोग करिलेतहें तब विनको पण्य क्षीण होत हे तातें वे पाछे मृत्युलोकमें आवत हें ऐसें गीताजीमें कह्यो हे.

४३. विग्रह सो शरीर.

४४. अहंकाराधिष्ठाता जे इंद्र हें तिनको लीलामें प्रवेश नांही ओर निर्गुण परमभक्त जे शिव हें जिनको परशिव कहत हें तिनकों भगवल्लीलानुभवको साक्षात् अधिकार हे ओर वे शिव अपुने मार्गके प्रथम आचार्य हे यह सब बात नारदपंचरात्रादिक ग्रंथमें प्रसिद्ध हे तासों वैष्णवनको महादेवजीकी निंदा कब हू न करनी क्यों जो महादेवजीकी निंदातें प्रभु अत्यंत अप्रसन्न होत हे सो श्रीमहाप्रभुननें कितनेक ग्रंथनमें स्फुट लिखी हे ओर श्रीपुरुषोत्तमनें हु उत्सवप्रतान प्रहस्त इत्यादिकग्रंथनमें विस्तारसों लिखी हें.

४५. प्रभुनने गीताजीमें आज्ञा कीनी जो हे अर्जुन जे आसुरजीव हे ते मोकों प्राप्तहोत नांही ताहीते ये वारंवार अधमगतिकों ही प्राप्त होत हें.

४६. मूलतुकमें विधिहरशब्दतें वेदोक्तविधिके हरणकरिवेवारे इतनें लोप करिवेवारे जे आसुरजीव तिनको या मार्गमें प्रवेश होत नाही ऐसें टीकामें अर्थ कियो तातें यह सूचन कियो जो एतन्मार्गीयनकें वेदोक्तविधिको तथा संध्यावंदनादि वैदिककर्मको अनादर कब हू न करनो ओर जो विनासमझे याकों अनादर करे सो आसूर कह्यो जाय ओर यादुस्त्यजंस्वजरमार्यअपंथचहित्वाइत्यादि श्रीभागवतवचनानुसारतें जो कीर्तननमें परमानंदवेदसागरकी मरजादागयीटूट इत्यादि गायो हे सो परमदशाकूं प्राप्त भये ऐसे मुख्य भक्तनकी बात हे परंतु आधुनिकजीव विनकी तुल्यता करिके वेदको अनादर करे तो प्रभु वाको अंगीकार न करें सो निबंधादिकमें प्रसिद्ध हे.

४७. विधिपूर्वक शरण आवनो सो श्रीमहाप्रभुनकों साक्षात पुरुषोत्तम जानिकें ओर एक प्रभुनको ही दृढ आश्रय राखिकें शरण आवनो येही प्रभुनमें गीताजीमें तथा श्रीभागवतमें मामेकंशरणंव्रज मामेकमेवशरणमात्मानंसर्वदेहिनां याहिसर्वात्मभावेन भक्त्यैशगुरुदेवतात्मा इत्यादिवचननमें कह्यो हें या प्रकारकी शरणागति आसुर जीवको कब हू होत नांहि.

४८. शुक्र सो पुरुषको वीर्य ओर शोणित सो स्त्रीको रज इनदोइनके संयोगतेहि मनुष्यादिक प्राकृतदेह उत्पन्न होत हे.

४९. भगवान्‌की चरणरेणुतें हि अलौकिक देह होत हें सो प्रथमस्कंधमें यावैलसच्छ्री तुलसीविमिश्रपादाब्जरेण्वभ्यधिकांबुनेत्री या श्लोकके श्रीसुबोधिनीजीमें लिख्यो हे ओर श्रीयमुनाष्टककी टीकामें हू मुरारिपदपंकजस्फुरदमंदरेणूत्कटां याके व्याख्यानमें श्रीगुसांईजीने लिख्यो हे ओर अलौकिकदेह जुदो हे यह बात तो ब्रह्मसूत्रमें चतुर्थाध्यायके चतुर्थपादमें स्फुट हे तथा श्रीभागवतमें हू प्रयुज्यमानेमयितांशुद्धांभागवतींतनुं इत्यादि स्थलमें प्रसिद्ध हे.

५०. वरणक शब्दको अर्थ पहिलें लिख्यो हे.

संस्कृत टीका

८ ज्यांहां नित्य रास

ज्यांहां नित्य रास बहुपेरें मध नायक निरतत घेरें ।।
ज्यांहां रत्नजटिततट सरिता नवपल्लव भूमि हरिता ।।८।।

ज्यांहां सो नित्यलीलास्थान जो व्यापीवैकुण्ठ तहां नित्य रास होत हें सो हू. **बहुपेरें** सो बोहोत प्रकारतें होत हें ओर. **मध** सो मध्यमें दोदो [५१] व्रजभक्तनके बीचमें. **नायक** सो पूर्ण पुरुषोत्तम ते नृत्य करत हें सो केसे. **घेरें** सो काछनीको घेर धारणकरिकें नृत्य करत हें. अब काछनीतो उपलक्षणरीततें कही यातें रासक्रीडोचित सब वस्त्राभरण धारण करिकें सर्वदा नृत्य करत हें. अथवा. घेरें. सो व्रजभक्तनके [५२]समूह भेलेकरिकें नृत्य करत हें ओर **मधनायकनृत्यतहेरें** ओर हू पाठ हे ताको अर्थ ओर टीकामें लिख्यो हे ओर [५३]आधीतुकको अर्थ स्फुट हे ।।८।।

[५१]. दो दो व्रजभक्तनके बीचमें एकएक प्रभुनको स्वरूप हे यह बात रासपंचाध्यायीमें तासांमध्येद्वयोर्द्वयोः या स्थलमें प्रसिद्ध हे.

[५२]. व्रजभक्तनके समूह भेले करिकें नृत्यकरतहें ऐसें कह्यो यातें एक प्रभु ओर अनेक भक्त ओर जितने भक्त तितनें प्रभुनके स्वरूप इन दोई प्रकारके रासको सूचन कियो वे दोई प्रकार रासपंचाध्यायीमें आत्मारामोप्यरीरमत् तथा कृत्वातावंतमात्मानंयावतीर्गोपयोषितः इत्यादिश्लोकनतें वर्णन कियो हे.

[५३]. अब या आधीधातुको अर्थ स्फुट हे ताते टीकामें नहि लिख्यो परंतु अत्यंत अज्ञजनके बोधार्थमें लिखत हूं जहां भगवद्धाममें रत्न करिकें जटित हें तट सो दोई तीर जिनके ऐसे सरिता सो नदी श्रीयमुनाजी हें यातें जलक्रीडोपयोगी सब पदार्थ उहां हें यह सूचन कियो अब स्थलक्रीडोपयोगीवैभव कहत हें नवपल्लवभूमिहरितो नवपल्लव सो नये कोमलपतुवा अनेक वृक्षनमें लगे रहे हें ओर याहीतें सब भूमिहरिता सो सब वृक्षनकी हरियालीतें तथा तृणादिकतें हरी होय रही हे ओर प्रभु तथा श्रीस्वामिनीजी तथा भूमिमें सर्वत्र क्रीडा करत हें तामें प्रभुनकी कांति श्याम हे ओर श्रीस्वामिनीजीकी कांति पीरी हे इनदोइनकी कांति वा पृथ्वीपें पडत हें तातें वह पृथ्वी हरी दीखत हें क्यों जो कारो ओर पीरो रंग मिलें तो हरो रंग होय.

संस्कृत टीका

९ ज्यांहांरत्नधातुगिरिराजे

(५४)ज्यांहांरत्नधातुगिरिराजे वादित्रविविध पेरे वाजे ।।
ज्यांहा युवतियूथ बहु मांय श्रीजी श्यामलवर्ण सुहाय ।।९।।

याको अर्थ स्फुट हे ।।९।।

५५. अहर्निश सो दिनरात गुणगान करें यातें जो श्रीमहाप्रभुननें आज्ञा कीनी हे जो गायके सींगपे सरस्योको दानो जितनीबिरियां ठहरे तितनीबिरियां हू भगवत्स्मरणबिना न रहनो सो बात सूचन कीनी यह ही एकादशस्कंधमें योगीश्वरननें कही हे न चलतिभगवत्पदारविंदावल्लभ निमिषार्द्धमपिसवैष्णावग्रयः ओर गुणगानकी तथा स्तुतिकी हु आवश्यकता श्रीभागवत गायनविलज्जोविचरेदसंगः नामान्यनन्तस्यशोकिंतानियच्छ्रृएवंतिगाय तिगृणंतिसाधवः इत्यादिक अनेक स्थलनमें कही हें.

५६. अब कोई जातको जीव होय यह कह्यो तातें भगवद्भक्तिमें जीवमात्रकों अधिकार हे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शुद्र कोई जात होय तामें हू स्त्री होय अथवा पुरुष होय सबनकों भगवद्भक्तिमें अधिकार हे सोही एकादशस्कंधमें प्रभुननें आज्ञा कीनी हे सत्संगेनहिदैतेयायातुधानामृगाःखगाःगंधर्वाप्सरसोनागाः सिद्धाश्चारणगुह्यकाः. विद्याधरामनुष्येषुवैश्येः शूद्रास्त्रियोंत्यजाः रजस्तमःप्रकृतयस्तमिं स्तस्मिंन्युगेनऽध बहवोमत्पदं प्राप्तास्त्वाष्ट्राकायाधवादयः. इत्यादिश्लोकनमें या बातको विशेष विवेचन मेनें सत्सिद्धांतमार्तंडमें कियो हे.

५४. ऐसें वनकी शोभा कहिकें अब पर्वतकी शोभा कहत हें ज्यांहां रतन्धातुगिरिराजे जहां भगवद्धाममें अनेक प्रकारके रत्नकरिकें तथा सुवर्णादिकधातुनकरिकें युक्त ऐसें गिरि जे श्रीगिरिराजजी ते राजे सो शोभत हें ऐसें श्रीयुमानजी वृंदावन ओर श्रीगिरिराजजी इन तीनोनकी शोभा वर्णन करिकें

अब नृत्यके उपयोगी बाजेनको वर्णन करत हें वादित्रंविविध पेरेवाजे विविधेपेरें सो नानाप्रकारतें बाजे बजत हें यह सूचन कियो बाजेनेके चार प्रकार तो अमरकोशमें कहें हें तंतुवीणादिकंवाद्यमानद्धमुरजादिकं वंशादिकं तुसुषिरकांस्यतालादिकंघनं याको अर्थ वीणा सितार प्रभृति तारके बाजे तत कहेजांय ओर तबला पखावज प्रभृति आनद्ध कहे जायं ओर मुरली प्रभृति सुषिर कहेजांय ओर झांझ आदि घन कह्यो जाय अब या रीतसों सब उद्दीपनपदार्थनको वर्णन करिकें अब आलंबनको वर्णन करत हें ज्यां हायुवतिथबहुमांय श्रीजीश्यामलवर्ण सुहाय नित्य सिद्धादिभेदकरिकें तथा सात्विक राजसादिभेदकरिकें अनेक प्रकारके जे व्रजयुवतिनके युथ सो समूह हें तिनमें श्रीजी सो श्रीनाथजी पूर्णपुरुषोत्तम शोभत हें वे केसे हें श्यामलवर्ण श्यामस्वरूप हें क्यों जो शृंगाररसके अधिष्ठाता हें अब शृंगाररसके देवता श्रीकृष्ण हें यह बात तो रसशास्त्रमें प्रसिद्ध हे ओर प्रभुनकी श्यामताको कारण निबंधमें हू तदामरकतश्याममार्विभावेप्रकाशते इत्यादिकारिकानमें श्रीमहाप्रभुननें लिख्यो हे.

संस्कृत टीका

१० ऐणीपेरें श्रीगुसांईजीनें

ऐणीपेरें श्रीगुसांईजीनें जाणे जाणी अहर्निश गाय वखाणे ।
ते जीवजात होय कोय तेने तत्क्षण सखे सुख होय ।।१०।।

ऐणीपेरें सो पहिलें जो वर्णन कियो ता प्रकारसों श्रीगुसांईजीकों जाने जब ऐणीपेरें गोलोकनें जाणे ऐसें नही ताको भावार्थ यह हे जो लीलासामग्री सब पुरुषोत्तमरूप हे केवल व्रजयुवतिनके यूथके मध्यमें जितनो स्वरूप हे तितनो ही कछू पुरुषोत्तमरूप नही हे उहां लीलोपयोगी जे पदार्थ हें ते सब

पुरुषोत्तमरूप हें याहीतें **ऐणीपेरें श्रीगुसांईजीनेजाणे** ऐसे कह्यो सो युक्त हें येही अभिप्राय विद्वन्मंडनमें नित्यलीलावादमें स्फूट निरूपण कियो हे. अब केवल जाने इतनो ही नही परंतु. **जाणी** सो या प्रकारसों श्रीगुसांईजीकों जानिके [५५]अहर्निश गुणगान करे ओर. **बखाणे** सो बखाने यथामति स्तुति हू करे ते सो वह [५६]कोय जातको जीव होय ताको वाही क्षण सब सुख होय. अब लौकिकसुख तो लेश मात्र हे ओर सब निरवधि सुख तो लीलासुख ही हे सोई [५७]वेदमें निरूपण कियो हे ।।१०।।

अब नित्यलीलाको सुख निरूपण करिकें प्रार्थना करत हें.

[५५]. अहर्निश सो दिनरात गुणगान करें यातें जो श्रीमहाप्रभुननें आज्ञा कीनी हे जो गायके सींगपे सरस्योको दानो जितनीबिरियां ठहरे तितनीबिरियां हू भगवत्स्मरणबिना न रहनो सो बात सूचन कीनी यह ही एकादशस्कंधमें योगीश्वरननें कही हे न चलतिभगवत्पदारविंदावल्लभ निमिषार्द्धमपिसवैष्णावग्रयः ओर गुणगानकी तथा स्तुतिकी हु आवश्यकता श्रीभागवत गायनविलज्जोविचरेदसंगः नामान्यनन्तस्यशोकिंतानियच्छृएवंतिगाय तिगृणंतिसाधवः इत्यादिक अनेक स्थलनमें कही हें.

[५६]. अब कोई जातको जीव होय यह कह्यो तातें भगवद्भक्तिमें जीवमात्रकों अधिकार हे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शुद्र कोई जात होय तामें हू स्त्री होय अथवा पुरुष होय सबनकों भगवद्भक्तिमें अधिकार हे सोही एकादशस्कंधमें प्रभुननें आज्ञा कीनी हे सत्संगेनहिदैतेयायातुधानामृगाःखगाःगंधर्वाप्सरसोनागाः सिद्धाश्चारणगुह्यकाः. विद्याधरामनुष्येषुवैश्येः शूद्रास्त्रियोंत्यजाः रजस्तमःप्रकृतयस्तमिं स्तस्मिंन्युगेनऽध बहवोमत्पदं प्राप्तास्त्वाष्ट्राकायाधवादयः. इत्यादिश्लोकनमें या बातको विशेष विवेचन मेनें सत्सिद्धांतमार्तंडमें कियो हे.

[५७]. वेदमें सो छांदोग्योपनिषन्में भूमविद्यादि स्थलनमें प्रभुनकों तथा भगवल्लीलाको सर्वसुखरूपत्व लिख्यो हे.

संस्कृत टीका

११ सेवकजन दास

सेवकजन दास तमारो तेनें रूपवियोग निवारो ।।११।।

।। इति श्रीगोपालदासजीकृतवल्लभाख्याने पंचमकडवा समाप्त ।।

सेवकजन ऐसो में गोपालदास. अथवा. **सेवक** जो भायलाकोठारीताको. **जन** सो सम्बन्धिमें सो आपको [५८]दासहूं ताको. **रूपवियोग** सो मूलस्वरूपको विरह ताको. **निवारो** सो मिटाओ याको फलितार्थ यह जो भायला कोठारी आपके परम कृपापात्र हें विनकी कानतें ओर में हू आपकी शरण आयो हूं तातें कृपाकरिकें निरंतर आपके लीलास्थस्वरूपको अनुभव कराओ ।।११।।

श्लोक. [५९]पंचमेमोक्षदातृत्वमा-चार्यत्वंवर्णितम्. श्रीमद्विटठलनाथानांलीलासामग्र्यभिन्नता ।।५।।

।। इति श्रीमद्बालकृष्णचरणैकतान श्रीमद्गोवर्द्धनगुरुपादपद्मपरागप्राप्त परमोदय श्रीमद्गोकुलोत्सवात्मजजीवनाख्येनविरचितं पंचमाख्यानस्यव्याख्यानं समाप्तम् ।।

[५८] दासशब्द कह्यो तातें दीनता दिखाई ओर में आपके शरण आयो हूं यह सूचन कियो.

५९. अब या रीतसों पंचमाख्यानको व्याख्यान करिकें गोस्वामिश्रीजीवनजी महाराज या आख्यानको साररूप अर्थ एक श्लोकमें लिखत हें ता श्लोकको अर्थ या पांचमें आख्यानमें पुष्टिमोक्षदेवेवारे श्रीगुसांईजी ही हे यह वर्णन कियो ओर श्रीगुसांईजी हू स्वतंत्र आचार्य हे यह हू वर्णन कियो तापीछें भगवद्धाममें जे श्रीयमुनाजीप्रभृति लीलोपयोगि पदार्थ हें ते सब आपके ही स्वरूप हे यह वर्णन कियो अब या आख्यानके अर्थको दोहा ‘‘भक्तिमार्गथिरकतहरि सकलपुष्टिफलदान आपरूपलीलाकही इहंपंचम आख्यान’’)

।। इति श्रीमद्वल्लभाचार्यमतवर्तिना मोक्षगुरु स्वमातामहगोस्वामि श्रीव्रजवल्लभचरणैकतानेनस्वपितृसकाशादेवलब्धविद्येनपंचनदिघनश्यामभटटात्मज गोवर्द्धनाशुकविनाकृतं पंचमाख्यानव्याख्यान टिप्पणंसंपूर्ण ।।

संस्कृत टीका

षष्ठाख्यान

१ सगुणसनेही सामला

अब पंचमाख्यानकी समाप्तिमें गोपालदासजीनें रूपवियोगनिवारणकी प्रार्थना करी सोई. अब षष्ठाख्यानमें पूर्णरसरूप जो आपको नंदनंदनस्वरूप ताके

निरूपणपूर्वक प्रार्थना करत हें.

राग परज अब परजरागमें या आख्यानको गान कियो ताको भावार्थ यह जो रात्रिके तृतीय प्रहरको यह राग हे ओर वह समय गाढनिद्राको हे ओर [1] गाढनिद्रामें नित्य ब्रह्मप्राप्ति होत हे सोई ईक्षत्यधिककरणमें तथा तृतीयाध्यायमें निरूपण कियो हे तेसें श्रद्धापूर्वक या आख्यानको गान मनन निदिध्यासन करे तो याही लोकमें याही देहतें भगवद्दर्शन होय यह सूचनार्थ ही परजरागमें या आख्यानको गान कियो.

सगुणसनेही सामला वाला अहर्निश दरशन आपो ।।
परमसुख देवानेकाजें व्रजमंडल स्थिर करि थापो ।।१।।

सगुणसनेही गुण जे अलौकिकगुण तिन करिकें युक्त जे श्रीस्वामिन्यादिक तिनके स्नेहरूप. अथवा. विनकेविषें स्नेह हे जिनको ऐसे. अथवा. अलौकिकगुणकरिकें युक्त ओर स्नेहरूप ऐसे यातें आपकूं शृंगार-रसको [2]स्थायीभावत्व सूचन कियो ओर केसे. **सामला** सो श्यामवर्णविशिष्ट यातें शृंगार-रसको श्याम वर्ण हे ये हू सूचन कियो. अब इतनो वर्णन कियो इतनेमें ही प्रेमलक्षणाभक्तिको हृदयमें आविर्भाव होयकें स्त्रीभावकी स्फूर्ति भई ताको सूचन वचन कहत हें. [3]वाला सो प्यारे. अब ऐसे जो आप सो. **अहर्निशदरशन आपो** सो रातदिन दर्शनद्यो. अब दर्शन आपो ऐसी दर्शनकी प्रार्थना करि तातें शृंगार-रसको उत्तरदल जो [4]विप्रयोग ताको सूचन कियो. अब केवल दर्शन ही द्यो ऐसें नहीं. **परमसुखदेवानेकाजें** परमसुख जो लीलानुभव सो देवेकेलीयें यातें शृंगार-रसको पूर्वदल सूचित भयो. **व्रजमंडलस्थिरकरिथापो** व्रजमंडल जो लीलास्थान तामें मोकूं स्थिर करिकें राखो. अथवा. **व्रजमंडल** जो लीलास्थान अक्षरब्रह्म ताकों मेरे हृदयमें स्थिर करिकें राखो याको भावार्थ यह जो अक्षरब्रह्मको जब [5]हृदयगुहामें आविर्भाव होय तब पुरुषोत्तम हृदयमें पधारे सोई ब्रह्मवल्लीउपनिषदमें निरूपण कियो हे ओर व्रजमंडलकी स्थितिकी प्रार्थना करी तातें अलौकिक शृंगाररसको उद्दीपन-विभाव सूचन कियो. अब या तुकको फलितार्थ यह हे जो आप रसरूप हो आपकी लीलाको सर्वदा मोकूं अनुभव कराओ ।।१।।

अब प्रथम तुकमें जिनको स्वरूप निरूपण कियो ते ही आप हो सो निरूपण करत हे.

(१. गाढनिंद्रा सो जामे स्वप्न हु न दीसे ऐसी गहरी नींद जाकों शास्त्रमें सुषुप्ति कहें हें सो वा निद्रामें परब्रह्ममें जीवको प्रवेश नित्य होत हे परंतु मायाको आवरण रहत हे ताते फिर संसार प्राप्त होत हे यह बात छांदोग्यउपनिषतकी श्वेतकेतुविद्यामें तथा बृहदारण्यकादिक ओर हू उपनिषदनमें प्रसिद्ध हे ओर श्रीमहाप्रभुननें हू अणुभाष्यके ईक्षत्यधीकरणप्रभृतिस्थलनमें तथा श्रीसुबोधिनीजीमें लिखी हे.

२. जा रसनें जो स्थिर हे सो वाको स्थायीभाव कह्यो जाय अब शृंगाररसको स्थायीभाव प्रीति हे याहीतें इहां सनेही या पदतें स्थायिभावरूपता सूचन कीनी.

३. संस्कृतमें वल्लभ ऐसो प्रियको नाम हे ताको भाषामें वाला ऐसो अपभृंश हे तातें टीकामें प्यारे यह अर्थ कियो.

४. विप्रयोग सो विरह.

५. हृदयरूप गुहा सो गुफा याको तात्पर्य सब पहिले लिख्यो हे.

संस्कृत टीका

२ श्रीवल्लभकुंवर कोडामणा

श्रीवल्लभकुंवर कोडामणा तमारुं नाम निरंतर लीजें ।।
रूपसुधारसमाधुरि ते लोचनभरि भरि पीजे ।।२।।

आप वर्तमान कालमें केसें हो. **श्रीवल्लभकुंवर** श्रीवल्लभाचार्यजीके पुत्र हो. अथवा. **श्री** जे स्वामिन्यादिक तिनके. **वल्लभ** सो प्रिय ऐसे ओर केसे हो. **कुंवर** सो कुमार श्रीयशोदोत्संगलालित यातें सबलीला नित्य हे यह सूचन कियो ओर [६]विरुद्धधर्माश्रयत्व हू सूचन कियो. अथवा. **श्री** जे स्वामिन्यादिक ओर. **श्रीवल्लभ** जे ओर सब भक्त क्यों जो [७]भक्त जेसो प्रिय ओर कोई प्रभुनकूं नही हे ओर. [८]कु जो पृथ्वी तिनके. **वर** सो पति ऐसे जो आप सो केसे हो. **कोडामणा** [९]कोड जो मनोरथ तिनकूं उत्पन्न करिवेवारे भक्तनकों आपके दर्शनमात्रतें अनेक मनोरथ उत्पन्न होत हें या करिकें [१०]हृदयको फल निरूपण कियो अब जिह्वाको फल निरूपण करत हें. **तमारुंनामनिरंतरलीजें** आपको श्रीविटठल यह नाम सो निरंतर लउं. अब नेत्रको फल निरूपण करत हें. **रूपसुधारस** रूप जो अलौकिकसौंदर्य तारूपी जो सुधारस सो अमृत ताकी. **माधुरी** सो मिष्टता ताकों. **लोचन** जे नेत्र ते. **भरिभरिपीजें** सो भरिभरिकें पान करुं यातें लोचननकों [११]पानपात्रत्व सूचन कियो अब [१२]भरिभरि ऐसें दों बिरियां कह्यो यातें अत्यंतदर्शनाभिलाष सूचन कियो ओर जोइयें ऐसें नही कह्यो ओर पीजें ऐसें कह्यो यातें आपकों [१३]रसरूपत्व सूचन कियो या तुकको फलितार्थ यह जो आपको नामस्मरण निरंतर करुं ओर आपके दर्शन सर्वदा करुं ओर आप मेरे हृदयमें सदा विराजे ।।२।।

अब दूसरी तुकमें नामस्मरण सेवा दर्शन ओर हृदयमें स्थितिकी प्रार्थना करी सो यह फल [१४]गाढविरह बिना नही मिले क्यों जो विरह हे सो संयोगसुखको पोषक हें यातें श्रीगुसांईजीने गोपालदासजीकों मानसिक तिरोधानको अनुभव करायो तातें तत्सूचक वचननतें श्रीगुसांईजीनें नंदनंदन स्वरूपतें जो व्रजभक्तनकूं अनुभव करायो ताको निरूपण करत हें ओर [१५]मानसिकतिरोधानको प्रकार तो दशमस्कंधके छेले अध्यायमें कुररिविलपसित्वं इत्यादिक श्लोकमें स्फुट निरूपण कियो हे.

[६] प्रभुनमें सदा बालकपनो ओर प्रौढपनो यह दोई विरुद्ध धर्म रहत हें तातें विरुद्धधर्माश्रय हे.

[७] प्रभुनकुं भक्त जेसे प्रिय ओर नहीं हे सो गीताश्रीभागवतादिकके विषें येभजंतितुमांभक्त्यामयितेतेषुचाप्यहं तथा साधवो हृदयं मह्यं साधूनां हृदयं त्वहम्. मदन्यत् ते न जानन्ति नाहं तेभ्यो मनागपि. इत्यादि श्लोकनमें आज्ञा कीनी हे.

[८] कु ऐसो पृथ्वीको नाम अमरकोशमें प्रसिद्ध हे गोत्राकुः पृथिवीपृथ्वी या श्लोकमें ओर पृथ्वीके पति भगवान् ही हे. यह बात वाराहपुराणादिकनमें

प्रसिद्ध हें याहीतें कृष्णावातरमें सत्य भामाजी पृथ्वीको अवतार हे.

९. कोड ऐसो मनोरथको नाम गुर्जरभाषामें हे ताहीतें मनना कोड पूर्‌या इत्यादिक व्यवहार वा भाषामें हें.

१०. प्रभुनको ध्यान ओर मनोरथ यह हृदयको फल हे इतनें मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार यह चारों प्रकारके अंतःकरण यातें सफल होत हे ओर निरंतर नाम लेनो यह वाणीको फल उपलक्षण रीतसों लिख्यो तातें सब कर्मेन्द्रियनकीभगवत्परता फल हे ओर रूपसुधारसपान यह नेत्रको फल हू उपलक्षण रीतसों कह्यो तातें सब ज्ञानेन्द्रियनकी भगवत्परता फल हे यह सूचन कियो क्यों जो ज्ञानमार्गमें जीवको ही मुक्तिमे उपयोग होत हे ओर भक्तिमार्गमें देह प्राण इंद्रिय अंतःकरण जीव इन पांचोनको साफल्य होत हे सो निबंधके शास्त्रार्थ प्रकरणमें कारिका ५४ ब्रह्मानदेप्रविष्टानामात्मनैवसुखप्रमा संघातस्यविलीनत्वाद्भक्तानांतुविशेषतःसर्वेन्द्रियस्तथाचांतःकरणैरात्मनापिहि या कारिकामें श्रीमहाप्रभुननें स्फूट लिख्यो हे.

११. पान पात्र सो रूप सुधापान बासन नेत्र हें.

१२. भरि भरि ऐसें कह्यो ताते बिरियां बिरियां पान सूचन कियो याहीतें अत्यंत अभिलाष सूचित भयो जेसें अत्यंत प्यासो होय सो पात्र भरिभरिकें जल पीवे तेसें बिरियां बिरियां आपके दर्शन करे परंतु तृप्ति होय नहि.

१३. जो रस होय सो पीवेमें आवे तातें आपकों हू रसरूपत्व सूचित भयो.

१४. गाढविरह सो अत्यंत विरह ता बिना यह फल नहि मिले सो दशमस्कंधमें दुःसहप्रेष्ठविरहतीव्रतापधुताशुभाः इत्यादि स्थलमें प्रसिद्ध हे ओर भक्तिसूत्रमें दूसरे अध्यायके पहिले आह्निकमें हू यह बात लिखी हे.

१५. मानसिक तिरोधान सो प्रभु पास होय तो हू मनमें सूं प्रभु इहां नहीं हे ऐसो भान जेसें द्वारकाजीमें रुकमीण्यादिकनके पास प्रभु सदा बिराजे हें तों हू विनकूं या तरहको विरह होयके विनतें कुररिविलपसित्वं इत्यादि श्लोक कहे हें.

संस्कृत टीका

३ ते पद क्यारे

ते पद क्यारे देखिशुं जो गोधनपूठें धाये ।।
व्रजसुंदरी मुखसुख पामीनें वारंवार अघाये ।।३।।

तेपद सो वे चरण ते कोनसे जे. **गोधन पूठें धाये** गोधन ते गायनके समूह तिनकें पीछें धाये सो दोडे. अब चाले ऐसें नही कह्यो यातें यह सूचन कियो जो प्रातःकाल घरतें बनमें गाय चरायवे पधारत हें तातें तासमें गायनकूं बनमें जायवेकी अत्यंत त्वरा रहत हे तातें दोडत हें तिनके पीछें आप हू दोडत हें यातें भक्त पराधीनपनो हू सूचन कियो ओर आगें तुकमें वा समें व्रजसुंदरी आपके दर्शन करत हें यह निरूपण करनो हे यातें बेग आप पधारें तो आछी रीततें दर्शन न होय तब सब दिवस मनमें अत्यंत ताप होय यह हू सूचन कियो. अब वे पद केसें हें जब घरतें गोधनसंग पधारत हें तब. **व्रजसुंदरी** जे व्रजभक्त ते. **मुखसुखपामीनें** मुख जो प्रभुनको श्रीमुख ताको सुख जो दर्शनसुख ताको पामीनें सो पायकें. **वारंवार** सो बेरवेरमे. **अघाये** सो तृप्त होत हें. अब इहां वारंवार कह्यो सो [१६]निमेषोन्मेषके अभिप्रायतें कह्यो नही तो वा समें बेग आप पधारत हें सो वारंवार दर्शन करिवेको अवकाश कहां तें. अब या तुकको फलितार्थ यह जो प्रातःकाल बेग गोधनके संग पधारत हें ओर व्रजभक्त वासमें आपके दर्शन करत हें सो विनकूं निमेष हू युगसमान लगत हे सोई गोपीनां परमानंद आसीद्गोविंददर्शने. [१७]क्षणंयुगशतमिव यासांयेनविनाऽभवत्. या स्थलमें निरूपण कियो हे ।।३।।

अब व्रजभक्तनकों प्रभुनके विरहतें क्षण हू सो युग जेसी लगत हे तब सब दिन तो आप वनमें बिराजत हें तब वे निर्वाह केसें करत हें सो प्रकार कहत हें.

१६. निमेष सो नेत्रकी पलक लगनो ओर उन्मेष सो उघडनो.
१७. श्रीभागवमें कह्यो हे जो प्रभुनके दर्शनमें गोपीजननकूं परम आनंद होत भयो जिनप्रभुनबिना उनकों एक क्षण हू सो युग जेसो होत भयो.

संस्कृत टीका

४ दिवस सउ श्यामा

दिवस सउ श्यामा मली रसरूपतणो जस गाय ।।
गोप मंडलीमध्य देखीने वारंवार सुख थाय ।।४।।

दिवस सो दिनमें. **सउ श्यामा मली** सऊ सो सब श्यामा सो सर्वदा जिनको षोडश वर्षको वय हे ऐसे व्रजभक्त ते मली सो मिलके. **रस रूपतणो** सो रसरूप प्रभु तिनकों. **जसगाय** सो यशको गान करत हें. अब रसरूप ऐसें कह्यो यातें [१८]शीघ्रतापनिवारकत्व सूचन कियो यह प्रकार [१९]गोप्यःकृष्णेवनं याते तमनुद्रुतचेतसः. कृष्णलीलाः प्रगायंत्योनिन्युर्दुःखेनवासरान् इत्यादिस्थलमें स्फुट निरूपण कियो हे. ओर [२०]रसरूपतवजसगाय **ऐसो हू पाठ हे ताको अर्थ ओर टीकामें कियो हे. अब जिनकूं** [२१]कछू मिष मिलत हे ते वनमें जायकें दर्शन करत हें सोई निरूपण करत हे. **गोपमंडलीमध्यदेखीनें** गोप जे सखा तिनकी मंडली जो समूहतामें देखीनें सो देखिकें. **वारंवारसुखथाय** सो बेरबेर सुख होत हे. अब वारंवार सो प्रतिदिनके अभिप्रायतें. अथवा. थोडे थोडे कालके अंतरते. अथवा. निमेषोन्मेषाभिप्रायतें या तुकको फलितार्थ स्पष्ट हे ।।४।।

अब दिवसकों निर्वाह या प्रकारतें करत हें तब संध्या समें संयोगसुख मितल हे सो बारह तुकतें निरूपण करत हें.

१८. शीघ्र सो तुरत आप ताप निवृत्त करत हें.

१९. श्रीभागवतमें कह्यो हे जो प्रभु जब वनमें पधारत हे तब प्रभुनकें पाछें पाछें ही जिनको चित्त गयो हे ऐसे गोपीजन विरह दुःखतें कृष्णलीलाको गान करिकें दिन काढत हे.

२०. या पाठको अर्थ यह जो रसरूप ऐसो जो आपको यश हे ताकूं वे गावत हें अब प्रभुनके धर्म सब प्रभुनतें अभिन्न हे ऐसो अपनो सिद्धांत हे तातें इहां प्रभुनके यशकों हू रसरूप कह्यो सो योग्य हे.

२१. कछू मिष सो यमुनास्नानको अथवा जल भरिवेके अथवा छाक पहुंचायवेको इत्यादि कछूभी मिष.

संस्कृत टीका

५ वासर निर्वाह एम

वासर निर्वाह एम करे सखी सायंकालें पेखे ।।
अलक मुख खुररज लागी ते कमल भमर बिसेखे ।।५।।

वासरनिर्वाहएमकरे [२२]दिनमें निर्वाह या प्रकारते करत हें. **सखी** जे व्रजभक्त ते. **सायंकालेंपेखे** तब संध्यासमे [२३]आछी रीततें प्रभुनके दर्शन करत हें. अब इतनो वर्णन किये पीछें गोपालदासजीकों मानसिक तिरोधानको अनुभव होत हतो सो निवृत्त होयकें दर्शन लिए सो वर्णन करत हें. **अलकमुख** अलक जे [२४]कुटिलकेश तिन करकें युक्त ऐसो जो श्रीमुख ताकों. **खुररजलागीते** गायनके खुरकी रज लगी हे सो. **कमलभमरविसेखे** कमल जो श्यामकमल तापें

बेठे जे भ्रमर तेसी शोभा विशेष करकें दिखत हे. अब विशेष करकें शोभा तो ऐसें जो कुटिलालकयुक्त श्रीमुख भ्रमरयुक्त कमल जेसो लगत हे परंतु गोरज लगी हे सो [२५]पराग जेसी लगत हे यातें विशेषसादृश्य आयो याहीतें विसेखे ऐसें कह्यो यह प्रकार सब सविस्तर [२६]तंगोरजश्छुरित कुंतल या श्लोकके श्रीसुबोधिनीजीमें निरूपण कियो हे याको फलितार्थ स्फुट हे ।।५।।

२२. बासर ऐसो दिनको नाम हे तातें यह अर्थ कियो.
२३. संस्कृतमें प्रेक्षते यह हे ताको भाषामें पेखे ऐसें होत हे तातें आछी रीतसों यह टीकामें लिख्यो सो प्र उपसर्गको अर्थ हे.
२४. कुटिल केश सो बांकी छोकी केशनकी लट अलकशब्दको अर्थ कोशमें लिख्यो हे अलकाश्चूर्णकुंतलाः.
२५. पराग सो पुष्पके भीतरकी रज.
२६. तंगोरजच्छुरित या श्लोकके श्रीसुबोधिनीजीमें गोरज इत्यादि पदनतें चार पुरुषार्थको निरूपण कियो हे.

संस्कृत टीका

६ गोपबालकमंडली मध्ये

गोपबालकमंडली मध्ये रंग अनेक उपजावे ।।
मत्तगजगति मलपता तेश्रीगोकुलमाहे आवे ।।६।।

गोपबालकमंडलीमध्यें सो जे गोपनके बालक आपके सखा हें तिनके समूहके बीचमें. **रंग अनेकउपजावें** नानाप्रकारके [२७]हास्यरसोद्‌बोधकवचन तिन करिकें रंग जो कुतूहल ताकों उत्पन्न करत भये. **मत्तगजगतिमलपता** मस्त ऐसो जो बडों हाथी सो जेसें स्वच्छंदमंदगतितें चलत हे तेसें आप हू मलपता सो मंदमनोहरगतितें श्रीगोकुलमें पधारत हें ।।६।।

अब श्रीगोकुलमें पधारत हें तब व्रजभक्तनकों दर्शन होत हें ताको क्रमतें निरूपण करत हें.

[२७] हास्यरसकी तथा ओर रसकी उत्पन्न करिवेवारी कितनीक श्रीअंगकी चेष्टा करत हें तथा कितनेक वेसे वचन आप कहत हें.

संस्कृत टीका

७ लोचनभृंग पीये घणुं

लोचनभृंग पीये घणुं ते प्रगट मुखमकरंद ।।
कमल पत्रजेवी आंखडी ते जोई जोई टाल्या द्वंद्व ।।७।।

अब व्रजभक्तनके. **लोचनभृंग** सो नेत्ररूपी भ्रमरत ते. **पीयेघणूं** सो बोहोत पीवत हे. अब कहां पीवत हें सो कहत हें. **प्रगटमुखमकरंद** प्रकट सो व्रजभक्तनके नेत्रकमलतें जब प्रभुनके नेत्रकमल मिले तासमें प्रगटभयो जो मंदहास ओर शृंगाररसोद्‌बोधक चेष्टा तारूपी जो मकरंद सो पीवत हें. अब

लोचनकों भृंगसादृश्य तो [२८]श्याम रक्तवर्णविशिष्टत्व [२९]चांचल्य ओर [३०]रस पानकर्तृत्व इत्यादिक धर्मतें स्फुट हे यातें दर्शनमात्रतें प्रथम कछुक तृप्ति निरूपण करी. अब निरोध निरूपण करत हें. **कमलपत्रजेवीआखंडीतें** ते सो वे कमल पत्रजेसे [३१]प्रभुनके नेत्र तिनकूं. **जोई जोई** सो देखिदेखिकें यह [३२]द्विरूक्ति अत्यंत उत्कंठा सूचन करिवेके लियें हे. अब. **टाल्याद्वंद्व** सो सांसारिक जे सुख दुःख तिनकों मिटावत हें याको फलितार्थ यह जो जब प्रभु बनतें पधारत हें तब दर्शनमात्रतें कछुक तृप्ति होत हे तातें प्रपंच विस्मृति होयकें भगवदासक्ति होत हे येही निरोध हे ।।७।।

अब संपूर्ण संयोग सुख पूर्वक तापनिवृत्ति निरूपण करत हें.

२८. जेसे भ्रमरमें श्यामता तथा ललाई होत हें तेसें नेत्रमें हू होत हे.

२९. ओर भ्रमर चंचल होत हें तेसें नेत्र हूं चंचल हे.

३०. जेसे भ्रमर पुष्पको रस पीवत हे तेसे नेत्र हू मुखको शोभादिकरूप रस पीवत हें ताते नेत्रकों भृंग कहे येही दशमस्कंधमें गोप्योहिद्रक्षितद्रशोभ्यगमन्समेताः पीत्वामुकुंदमुखसारधमक्षिभ्रंगैस्तापंजहुर्विरहजं व्रजयोषितान्हि या स्थलमें निरूपण कियो हे.

३१. या प्रकरणमें श्रीभागवतमें कृष्णः कमलपत्राक्ष पुण्यश्रवणकीर्तनः स्तूयमानोनुगै र्गोपैः साग्रजोव्रजमाव्रजत् ऐसें लिख्यो हे तातें इहां कमलपत्र जेसे नेत्र सो प्रभुनके समझते.

३२. द्विरुक्ति सो जोई जोई यहा दो बिरियां कहनो यातें वारंवार दर्शन करत हें यह सूचन करत हें ताहीतें व्रजभक्तन नहीं प्रभुनमें अत्यंत उत्कंठा सूचन भई.

संस्कृत टीका

८ जोतां तृप्ति न

(३३)जोतां तृप्ति न उपजे प्रभु अधरसुधारस पाये ।।
भुजलता भीडी भामिनि तारें दिवस ताप बुझाये ।।८।।

याको अर्थ स्फूट हे याको फलितार्थ यह जो मार्गमें दर्शन होत हे ताहीतें कछू तृप्ति नहीं होत हे यातें दोहनादिकभिषतें [३४]गोष्ठमें पधारिकें संपूर्ण संयोगसुख देकें तापनिवृत्ति व्रजभक्तनकी करत हें यह सब प्रकार [३५]भावनासहस्त्र [३६]गुप्तरसादिकप्रमेयग्रंथनमें स्फुट कियो हे ।।८।।

अब गोष्ठलीला निरूपण करिकें संपूर्ण वात्सल्य रस पूरित नंदालयकी लीला ताको निरूपण करत हें.

३३. अब जोता तृप्ति न उपजे सो प्रभुनके दर्शनमात्र कियेतें तृप्ति नहीं होय तब नेक दुहि दीजे हमारी गैय्या इत्यादि कीर्तनमें जेसे मिष कहे हे तेसो कछूभी मिष करिकें प्रभु उनके घरमें पधारिके अपुनो अधरामृत प्यावत हें ओर संध्याभोग अरोगत हें ओर भूजरूपलतातें उनको आलिंगन देत अथवा भक्त अपनी भुजरूपलतातें प्रभुनको आलिंगन करत हे तब विनको दिनमें भयो विरहताप दूर होत हे या तुकमें हू ओर पीत्वामुकुंदमुखरसारधमक्षिभृंगैः या श्लोकके श्रीसुबोधिनीजीको विशेष विवेचन हे ओर भूजलता कही तातें बाहूको सुंदरपनो कोमलपनो ओर छाया करिवेवारे पतो सूचन कियो ओर भामिनी शब्द कह्यो तातें भक्तनको कछूक मान हू सूचन कियो क्यों जो भामिनी ऐसो कोपयुक्त स्त्रीको नाम कोशमें कह्यो हे येही सब टीकामें फलितार्थमें गुप्तरीतसों दिखायो हे.

३४. गोष्ठ सो गायनके खिरक.

३५. भावनासहस्त्रसो श्रीहरिरायजीकृत सहस्त्रश्लोकी सेवाभावना.

३६. गुप्तरस श्रीगुसांईजीकृत ग्रंथ हे ओर प्रमेयग्रंथ सो वेदादि चार प्रमाणनमें कह्यो जो भगवत्स्वरूप ओर भगवल्लीला तिनके ही केवल प्रतिपादन

करिवेवारे ग्रंथ.

संस्कृत टीका

९ पूरण सुख दई

पूरण सुख दई गोष्ठमां प्रभु आघेरा पाउधारे ।।
जसोदाजी ले भाषणनें राइलूण उतारे ।।९।।

अब [३७]गोष्ठसें संपूर्ण सुख व्रज भक्तनकों देकें. **आघेरा** सो उहां ते आगें जो नंदालय तहां पधारत हे तब. **जसोदाजीलेभामणा** श्रीयशोदाजी बलैया लेकें. **राइलुणउतारे** द्दष्टिदोष निवारणके लियें राई लोंन उतारत हें याको फलितार्थ स्फुट हे ।।९।।

३७. अब गोष्ठ सो गायनके खिरक तिनमें व्रजभक्तनको पूर्णसुख देकें ओर संध्या भोग आरोगिके प्रभु आगे नंदालयको पधारत हें सो श्रीभागवतमें तत्सत्कृतिंसमधिगम्यविवेशगोष्ठं सव्रीडहांसविनययपांगमोक्ष या स्थलमें कह्यो हे येही वर्णन या तुकमें कह्यो हे.

संस्कृत टीका

१० वस्त्रांचल मुखरज

वस्त्रांचल मुखरज पोंछीनें रूप सकल निहारे ।।
उभी थाय रोमावली कर कोमल अंग संभारे ।।१०।।

अब यशोदाजी आपकी साडीके छेडातें प्रभुनके श्रीमुखतें रज पोंछिके ओर सब अंगनको सौंदर्य निरखत हें फेर. **करकोमलअंगसंभारें** अब कोलमशब्दकों मध्यमणि न्यायतें करमें ओर अंगमें सम्बन्ध हे याते जब कोमल श्रीहस्ततें श्रीयशोदाजी प्रभुनके कोमलश्रीअंगको स्पर्श करत हें तब. **उभीथायरोमावली** श्रीयशोदाजीके श्रीअंगमें रोमांच होत हे ओर मातृचरणको प्रेम देखिकें भक्तैकपरवश जे प्रभु तिनके श्रीअंगमें हू रोमांच होत हे ।।१०।।

अब गोरजकी निवृत्तिके लियें अभ्यंग करावत हें सो निरूपण करत हें.

संस्कृत टीका

११ करी पेरें पेरें

करी पेरें पेरें वारणा सुतने सदनमाहें पधरावे ।।
सुंदरी गृहकारजमिषें वली निरखवाने आवे ।।११।।

फेर श्रीयशोदाजी. **पेरेंपेरें** सो [३८]अनेक प्रकारतें. **वारणा** सो बलैया लेकें. **सुत** जे प्रभु तिनकों. **सदन** जो घर तामें पधरावत हें तब. **सुंदरी** जो व्रजभक्त ते घरके कामके मिषतें. **वली** सो फेर प्रभुनको श्रीमुख निरखिवेकों आवत हें याको फलितार्थ स्फुट हे ।।११।।

३८. वारणाके अनेक प्रकार सो आरती करत हे मुठिया वारत हें बलैय्या लेत हे इत्यादिक ओर हू प्रकार श्रीभागवतमें गोवर्द्धनोद्धारण प्रसंगमें प्रसिद्ध हे अब या तुकमें ओर यासूं पेहली तुकमें जो वर्णन कियो हे सो ही श्रीभागवतमें तयोर्यशोदारोहिण्यौपुत्रयोः पुत्रवत्सले इत्यादि श्लोकमें दिखायो हे.

संस्कृत टीका

१२ उष्णोदक सोंधो भेली

उष्णोदक सोंधो भेली वली अंग अघोल करावे ।।
अंगवस्त्र करी स्वच्छवपूने पछें तेल चढावे ।।१२।।

उष्णोदक जो तातो जल ताकों सोंधेमें मिलायकें श्रीअंगको उबटना करत हें ओर [३९]अलीअंगअंघोल करावे ऐसो हू पाठ हे फेर अंगवस्त्रतें श्रीअंगकों स्वच्छ करिकें पीछें तेल. जो फूलेल सो चढावे. सो चरणारविंदतें लेकें केश पर्यंत समर्पत हें ।।१२।।

३९. अली सो सखी जो षोडशसहस्त्र नंदालयमें रहत हें ते ऐसो अर्थ ओर टीकामें कियो हे सब या तुकमें जो स्नानको गताध्यानश्नमौतत्रमज्जनोन्मर्दनादिभिः या श्लोकमें निरूपण कियो हे.

संस्कृत टीका

१३ अनेक सुगंध वसनने

अनेक सुगंध वसनने भूषण फूल अंबोडे फावे ।।
ठणठणतो वालो लाडकडो ते भोजनशालायें आवे ।।१३।।

अनेक सो नाना प्रकारके जा [४०]ऋतुमें जेसे चाहियें तेसे. **सुगंध** सो अतर प्रभृति. **वसन** सो वस्त्र ओर. **भूषण** सो शयनसमयोचित आभरण ओर केशमें कांगसी करिकें [४१]पुष्पकी रचना करत हें सो. **फावे** सो शोभत हें ओर [४२]अनेकवसनसुगंध नीवी ऐसो हू पाठ हे. अब या लीलाके दर्शन भये यातें गोपालदासजीके हृदयमें वत्सलरस उत्पन्न भयो ताके सूचनवचनपूर्वक शयनभोग अरोगवेकों प्रभु पधारत हें सो निरूपण करत हें. **ठणठणतो** सो नुपूरके शब्दसहित. अथवा. नेत्रकमलमें कछुक निंद्रा आई हे यातें. ठणठणतो. सो मंदमंद लटकतभये. **भोजनशालायें** सो भोग मंदिरमें. **आवें** सो पधारत हें अब

भोजनशालाये जाय ऐसे नहीं कह्यो ओर आवे ऐसें कह्यो याको भावार्थ यह जो गोपालदासजीकें वासमें ऐसो अनुभव भयो जो में भोग मंदिरमें ठाडो हूं यातें ऐसें कह्यो. अथवा. शयन भोग सिद्ध करिकें श्रीरोहिणीजी प्रभुनकी राह देखत हें फेर जब प्रभु पधारत हें तब दर्शनानंदको अनुभव करत हें याहीते भोजनशालायें आवे ऐसें कह्यो. अब वा समें प्रभु केसे लगत हें सो कहत हे. **वालो** सो प्रिय. अब ठणठणते पधारत हें ताको हेतु कहत हें. **लाडकडो** सो श्रीयशोदाजी नंदरायजीके अत्यंत लाडिलेहें याको भावार्थ यह जो शृंगारादिक करिकें श्रीयशोदाजी नंदरायजीके लाडके आनंदतें पूर्ण प्रभु शयनभोग आरोगिवेकों लटकतभये पधारत हें ।।१३।।

अब मातृसमर्पितशयनभोगको श्रीस्वामिनीजीके अधरामृततें हू अदिकस्वाद लगत हे यह निरूपण करिवेके लियें प्रथम श्रीस्वामिनीजीके अधरामृतको उत्कर्ष वर्णन करत हें.

४०. ऋतुअनुसार वस्त्राभरणादिक श्रीयशोदाजी धरावत हे याहीतें श्रीभागवतमें यथाकामयथाकालंव्यधत्तांपरमाशिषः यह कह्यो हे.

४१. पुष्पकी रचना सो केशके जुडापें फूलकी माला धरावत हें क्यों जो गुर्जरभाषामें अंबोडा ऐसो जुडाको नाम हे ओर अनेक प्रकारकी फूलनकी रचना हू करत हे.

४२. अनेक वसनसुगंधनीवी या पाठमें नीवी सो पहिरवेको वस्त्र ओर वसनशब्द करिकें दूसरे वस्त्र जानने अब या तुकमें जो वर्णन कियो हे सो ही श्रीभागवतमें नीवींवसित्वारुचिरां दिव्य स्रग्गंध मंडितौ या श्लोकमें कह्यो हे.

संस्कृत टीका

१४ राधा अधरसुधा

राधा अधरसुधा विना हरिनें बीजूं कांई नव भावे ।।
प्रात पधारे नें निशायें आवे प्रीत नवी उपजावे ।।१४।।

राधा जे मुख्यस्वामिनीजी [४३]वृषभानुजा परिनिष्ठतानंद रूप तिनकी जो. **अधरसुधा** सो अधरामृत ताबिना. **हरि** जो सर्व दुःखहर्ता प्रभु तिनकों. **बीजूंकांईनवभावे** ओर कछू स्वाद नहीं लगत हे. अब इहां हरिशब्द कह्यो यातें यह सूचन कियो जो आप सबनके सब दुःखहर्त्ता हें तथापि आपकी हू [४४] आपशांति श्रीराधाजीके अधरामृततें होत हे यातें श्रीस्वामिनीजीके अधरामृतकों अत्यंत उत्कर्ष सूचन कियो ओर श्रीराधाजीकों मुख्य स्वामिनीपनो तो श्रीमद्‌भागवत द्वितीय स्कंधके चतुर्थाध्यामें श्रीशुकदेवजीनें [४५]नमोनमस्ते. या श्लोकमें निरूपण कियो हे तथा ऋग्वेदमें हू निरूपण कियो हे. अब ऐसें प्रिय श्रीस्वामिनीजी तिनकों छोडिकें प्रभु ओर कहुं पधारत न होयंगे तब ओर लीलानकी सिद्धि केसें होयगी यह शंका निवारण करत हें. **प्रातपधारे** प्रातःकालके विषें गाय चरायवेकों पधारत हें ओर. **निशायें** सो रातकों शयनभोग अरोगिकें शय्यामंदिरमें श्रीस्वामिनीजीके पास पधारत हें. अब प्रभु तो सर्वसमर्थ हें तब आखो दिन विप्रयोग दुःखको क्यों अनुभव करावत हें या शंकको निवारण करत हें. **प्रीतनवीउपजावे** प्रतिदिन नई प्रीत उत्पन्न श्रीस्वामिनिजीके हृदयमें करत हें याको भावार्थ यह जो विप्रयोगबिना पूर्ण संयोगसुख होत नाही यातें दिनकों विप्रयोगको अनुभव करावत हें. रात्रिको परिनिष्टित संयोग सुखको अनुभव करावत हें ओर प्रथम गोष्ठ लीलामें [४६]अपिरिनिष्ठतानंदको हू निरूपण कियो हे याहीतें कह्यो प्रातःपधारेनेनिशायेंआवेप्रीतनवीउपजावे ।।१४।।

अब प्रभु शयनभोग अरोगत हें ताको निरूपण करत हें.

---

[४३]. वृषभानुजा सो वृषभानजीकी पुत्री यह बात पद्‌मपुराण कृष्णजन्मखंडादिकमें प्रसिद्ध हे ओर मुख्यस्वामिनीजी यह वामभागस्थ हे यातें प्रमोदरूप हें याहीतें सर्वोत्कृष्ट आनंद रूप हें तासूं मोदप्रमोदौ अपरिनिष्ठितपरिनिष्ठतावानंदौ या अणुभाष्यके अनुसारसूं इहां टीकामें परिनिष्ठितानंदरूप लिखे.

[४४]. प्रभुनकी हू तापनिवृत्ति परमभक्त करत हें सो दृष्टांतपेव्रजपशूनसहरामगोपैः इत्यादि स्थलके श्रीसुबोधिनीजीमें श्रीमहाप्रभुननें हरेरपिहरिर्यदि इत्यादि

निरूपण कियो हे.

४५. नमोनमस्तेस्त्वृषभायसात्वतां या श्लोकमें निरस्तसाम्यातिमयेनराधसा या जग्गें राधः शब्द करिके श्रीस्वामिनीजी कहे हें ऐसे शिष्ट कहत हे क्यों जो ऋग्वेदमें कहींक राधः ऐसो श्रीस्वामिनीजीको नाम कह्यो हे यह बात भारत व्याख्याकार नीलकंठचतुर्थस्कृतमंत्रभागवत देखेंसूं स्पष्ट होत हे.

४६. जे गोष्ठलीलामें दक्षिणभागस्थस्वरूप हें ते मोदरूप हें याते टीकामें अपरिनिष्ठतानंद कह्यो याको विशेषतात्पर्य आनंदमयाधिकरणके भाष्यके विचार कियेतें स्फुट होत हे.

संस्कृत टीका

१५ मातानूं मन रंजवा

मातानूं मन रंजवा वालो आरोग्या बहु स्वादें ।।
सुगंधबीडी कर धरीने उठया नूपुरने नादें ।।१५।।

अब इहां यशोदाजीनूं मनरंजवा ऐसें नहीं कह्यो ओर सामान्य मातृशब्द कह्यो यातें श्रीयशोदाजी ओर श्रीरोहिणीजी इन दोइनको सूचन कियो इन दोइनको मनरंजन करिवेको. **वालो** सो प्यारे पुत्र वे. **आरोग्य बहुस्वादें** बोहोत [४७]स्वादतें शयनभोग अरोगे इहां आरोग्यास्वादें ऐसें नही कह्यो बीचमें बहुशब्द कह्यो यातें आप धीरेंधीरें अरोगे ओर मातृसमर्पितभोग श्रीस्वामिनीजीके अधरामृततें हू स्वाद लाग्यो यह सूचन कियो ता पीछे. **सुगंधबीडीकरधरीनें उठयानूपुरनेनादें** सुगंध जो बरास जायफल इलायची प्रभृति जा ऋतुमें जेसी उचित होय तेसी ताकरकें युक्त जो बीडी ताको श्रीहस्तमें लेकें नूपुरको शब्द करत भये उठे इहां

आचमन नही कह्यो सो तो [४८]संदंशन्यायतें अर्थात् सिद्ध भयो अथवा प्रभु शयनभोग अरोग चुके तब श्रीयशोदाजीने बीडी दीनी सो आप वामश्रीहस्तमें लेकें शय्यामंदिरमें श्रीस्वामिजीनीके पास पधारत हें फेर श्रीस्वामिनीजी आचमन कराय अपुने हस्तकमलतें बीडी अरोगावत हें याहीतें बीडीकरधरी ऐसें कह्यो अरोगी ऐसें नही कह्यो ओर लोकमें अत्यंत उतावल करत हें तब कहत हें जो उहां भोजन करत हो तो इहां आयके अचोइयो याहीतें श्रीस्वामिनीजीके संयोगकी उतावल सूचन करी याको फलितार्थ यह जो अत्यंत स्वादतें अरोगे तातें श्रीयशोदाजीश्रीरोहिणीजीकों प्रसन्न करिकें पूर्णवत्सलरसमें अनुभव करायो फेर श्रीस्वामिनीजीको पूर्ण संयोग शृंगारको अनुभव करायवेकों बेगबेग शय्यामंदिरमें पधारत हें ।।१५।।

अब श्रीयशोदाजीकों श्रीरोहिणीजीको ओर श्रीस्वामिनीजीकूं ही केवल यथायोग्य सुख देत हें ऐसें नहीं जा व्रजभक्तको जेसो मनोरथ ताकों तेसो सुख देतहें यह सूचन करत भये गूढ जो शयनलीला ताको संक्षेपतें निरूपण करत हें.

४७. बोहोत स्वादतें प्रभु अरोगत हें सो मातृचरणके स्नेहतें आपकों शयनभोग बहुत स्वाद लगत हें सो श्रीभागवतमें जनन्युपहृतंप्राश्यस्वाद्वन्नमुपलालितौ या श्लोकमें दिखायो हे.

४८. संदंश सो चीमटा जेसे दोई आडीसूं चीमटाकूं पकडिवे ते वाके बीचमें जो बस्त होय सो आपहीतें पकडी जाय तेसें इहां भोग अरोगिवेको ओर बीडी अरोगिवेको वर्णन कियो तातें बीचमें आचमन आपहीतें सूचित भयो.

संस्कृत टीका

१६ सकलव्रजमां पोढिया

सकलव्रजमां पोढिया वालो विविधरससुखदान ।।
ऐ लीला हमारे मन वसो ते भक्त मागे मान ।।१६।।

सकलव्रजमा कलाकरिकें सहित सो सकल पूर्णचंद्र ता करिकें युक्त ऐसो व्रज जो नीत्यलीलास्थान ताके विषें. अथवा. कला जो कामशास्त्रोक्तकला ता करिकें युक्त जे व्रजसुंदरीयें तिनकों व्रज जो समूह तामें याको भावार्थ यह जो प्रभु पोढत हे तब अनेक व्रजभक्त अनेक सेवा करत हें चरणारविंद दाबवेकी पंखा करिवेकी इत्यादिक. अथवा. सकल सो सब [४९]व्रजमंडल तामें. **पोढिया** सो पोढे याको भावार्थ यह जो व्रजमंडलमें जितनें व्रजभक्त तिनके सब मनोरथ पूर्ण करिवेको सबनकों शयनलीलाके मनोरथानुसार सुख देत हें येही अभिप्राय दशमस्कंधमें [५०]सुखंसुषुप्तुर्व्रजे या श्लोकमें निरूपण कियो हे. अब इतने वर्णनमात्रतें गोपालदासजीकों शयनलीलाके दर्शन भये तातें प्रेमलक्षणाभक्ति उत्पन्न भई तांतें कह्यो. **वालो** सो प्यारे ओर प्रभु केसे हें. **विविधरससुखदान** विविध सो नाना प्रकारके रस जो शृंगाररस ताके सुखदान सो सुख देवेवारे. अब प्रातःकालतें सायंकाल पर्यंतकी लीला निरूपण किरकें प्रार्थना करत हें. **एलीला** ऐसो जा लीलाके अभी मोकों दर्शन होत हें सो. **हमारेमनवसो** सो मेरे मनमें सर्वदा बसो ओर. **ते** सो नंदालयकी बाललीला सो. अब. **भक्त** जो आपको सेवकमें गोपालदास सो येही. **मान** जो [५१]सन्मान सो मागत हू. अथवा. [५२]मान सो प्रमाण अलौकिकलीलोपयोगी इंद्रिय सो मागत हूं याको भावार्थ यह जो आपनें लीला वर्णन करायकें जिह्वा सुफल करी ओर लीलाके दर्शन करायकें चक्षु सफल किये. अब नित्य लीलामें मेरो प्रवेश करायकें मेरे सर्वदेवकों सुफल आप करो ।।१६।।

अब फेर लीलानकों अनंतपनो सूचन करत भये प्रेमपूर्वक प्रार्थना करत हें.

४९. सब व्रजमंडलमें आप पोढत हें सो श्रीभागवतमें संविश्यवरशय्ययांसुखं सुषुपतुर्व्रजे या श्लोकमें दिखायो हे.
५०. या श्लोकमें व्रजे या सप्तमीको अभिव्याप्ति अर्थ मान्यो हे तातें सब व्रजमें आप पोढे ऐसो श्रीसुबोधीन्यादिक ग्रंथनको आशय हे.
५१. मेरे हृदयमें लीलाको आविर्भाव होय येही सन्मानमें मांगत हों.

५२. करणव्युत्पत्तितें मान ऐसो इंद्रियादिकनको नाम हे सो प्रस्थानरत्नाकर ग्रंथमें श्रीपुरुषोत्तमजीने विवेचन कियो हे ओर भक्तमागेमान याको ऐसे हू अर्थ होत हे जो शयनभये पीछे भक्त जे व्रजभक्त ते मान सो प्रसादी पुष्पमाला चर्वित तांबूल प्रभृति सत्कार मांगत हें ओर जे राजस भक्त हें ते सखीस्नेहसों श्रीस्वामिनीजीके मानकी इच्छा करत हे यह लीला मेरे मनमें बसो.

संस्कृत टीका

१७ श्रीविटठल द्विजरूप

श्रीविटठल द्विजरूप तमारी लीला ऐणीपेरे झाझी ।।
ओडवे केम चालशे ते प्रीत अमसुं बाझी ।।१७।।

।। इति श्रीगोपालदासजीकृतेनवाख्यानेष्ठाख्यानं समाप्तिम् अगात् ।।६।।

अब आप केसे हो. **श्रीविटठल** सो [५३]नित्यलीलाविशिष्ट पुरुषोत्तम हो ओर केसे हो. **द्विजरूप** द्विज जो चंद्रमा ता जेसो आनंददायक हे रूप सो सौंदर्य जिनको. अथवा. द्विज. जे ब्राह्मण तिनके विषें हे रूप जिनको याको भावार्थ यह जो वेद भगवद्रूप हें ते ब्राह्मणके विषें रहत हें. अब वेदकों भगवद्रूपत्व तो [५४]वेदोनारायणः साक्षात् इत्यादि वाक्यनमें स्फुट हे. अथवा. **द्विजरूप** सो वर्तमानकालमें ब्राह्मणस्वरूप जिननें धारण कियो हे ऐसें जे आप

तिनकी. **लीलाएणीपेरेंझाझी**

ऐणीपेरें सो या प्रकारतें लीला झाझी सो अनंत हें याहीतें. ओडवेकेमचालशे उडाये केसें चलेगो उडावनो सो ठगनो याको भावार्थ यह जो आपकी लीला तो अनंत हें ओर हमकूं थोडीसी लीलाको थोडो सो अनुभव करायकें उडाओगे सो नहि चलेगो ताको हेतु कहत हें. **प्रीतअमसूं बाझी** प्रीत हमतें बंधी हे याको भावार्थ यह जो जो प्रीततें बंधजात हे सो वाको योग्य पदार्थ वातें छिपावे तो वह कृतघ्न होय यातें सर्वदा सर्व लीलानको प्रत्यक्ष अनुभव हमकूं कराओ इहां हमकूं यह बहुवचन सबभक्तनके अभिप्रायतें हे यातें गोपालदासजीकों परोपकारित्व सूचित भयों भगवदीयनको येही लक्षण हे ओर प्रभुनको प्रतिबद्धत्व तो [५५]वशेकुर्वंतिमांभक्त्या इत्यादिस्थलके विशेष स्फुट हे ओर ओलंभे केम चालशे जो वात अमसूंवांझी ऐसो हू पाठ हे ताको अर्थ ओर टीकामें लिख्यो हे ।।१७।।

(३३)षष्ठे श्रीविटठलाधीशैःकृष्णरूपेणयाःकृताः ।।
संक्षिप्तावर्णितालीलाः प्रार्थिताश्चमुहूर्मुहूः ।।६।।

।। इति श्रीमद्बालकृष्णचरणैकतान श्रीमद्गोवर्द्धन गुरुपादपद्मपराग प्राप्त परमो श्रीमद्गोकुलोत्सवात्मजजीवनाख्येनविरचितं षष्ठाख्यानस्यव्याख्यानंसमाप्तम् ।।

५३. विटठल सो निःसाधनजनोद्धारकर्ता हें तातें पुरुषोत्तम यह अर्थ कियो ओर श्रीयुक्त हें याते लीलाविशिष्ट यह अर्थ कियो.

५४. षष्ठस्कंधमें कह्यो हे जो वेद साक्षात् प्रभुनको स्वरूप हे अब वेदरूपसों प्रभु ही ब्राह्मणनके हृदयमें तथा मुखमें विराजत हें ताहीते ब्राह्मण सर्ववर्णनतें उत्कृष्ट हे सब देवतानको निवास स्थान हें सो वेदादिकमें प्रसिद्ध हे येही इहां टीकामें लिख्यो हे.

५५. नवमस्कंधमें प्रभुननें दुर्वासाकों आज्ञा कीनी हे जो अन्याश्रयरहितें भक्त मोको भक्तिकरिकें वश करि लेत हें जेसें पतिव्रता स्त्रियें गुणज्ञपतिकों

वश करत हें.

५६. या रीतसों षष्ठाख्यानको व्याख्यान करिकें गोस्वामि श्रीजीवनजीमहाराज या आख्यानको सब अर्थ संक्षेपसों एक श्लोकमें आज्ञा करत हें या श्लोकको अर्थ श्रीगुसांईजीने पहिलें श्रीकृष्णावतारमें जे लीलाए करी ते ही या छटठे आख्यानमें संक्षेपसों वर्णन कीनी ओर फिरफिरकें मांगी इतनी ऐसी आपकी अनंत लीला हे तिनको सर्वदा मोकों अनुभव कराओ ऐसें गोपालदासजीने प्रार्थना कीनी अब या आख्यानके अर्थको दोहा.)

।। इति श्रीमद्वल्लभाचार्यमतवर्तिनामोक्षगुरुस्वामातामातामह गोस्वामिश्रीव्रजवल्लभ चरणैकतानेनस्वपितृसकाशादेवंलब्धविद्येन गोवर्द्धनाशुकविनाकृतंषष्ठाख्यान व्याख्यानटिप्पणंसंपूर्णम् ।।)

संस्कृत टीका

सप्तमाख्यान

१ आपे सेवा करी

ऐसे षष्ठाख्यानमें नंदनंदनस्वरूपकी लीलाके दर्शन भये ताको वर्णन करिकें. अब सप्तमाख्यानमें श्रीविटठलस्वरूपकी लीलाको साक्षात् अनुभव होत हे

ताको निरूपण करत हें. राग सामेरी. याको अभिप्राय पंचमाख्यानके आरंभमें लिख्यो हे.

आपे सेवा करी सीखवे श्रीहरि भक्तिपक्ष वैभव सुदृढ कीधो ।।
पोतानी लीला ते पोतें कही उच्चार आनंद अधिक दीधो ।।१।।

आप जो विटठलनाथजी ते. **सेवाकरीसीखवे** भगवत्सेवा करिकें भक्तनकों सिखावत हें तब तो आपको कछू [१]फलाकांक्षा होयगी या शंकाको निवारण करत हें. **श्रीहरि** सबनके सर्व दुःखहर्ता ओर श्रीकरिकें युक्त याको भावार्थ यह जो लोकमें यत्किंचित् श्रीवारो होत हे सो प्रायः कोईकी आकांक्षा नही करत हे तो आप तो [२]श्रीपति हें. अथवा. **श्रीहरि** जो श्रीविटठलनाथजी ते आपकी सेवा आप करिकें भक्तनकों सिखावत हें सोई आगें रूप बेउ एकने भिन्न थई विस्तरे या तुकमें स्पष्ट निरूपण करेंगे. अब भक्तनकों ऐसे सिखावेको कहा कारण कहत हें. **भक्ति पक्षवैभवसुदृढकीधो** भक्तिपक्ष जो भक्ति ताकों वैभव सो विस्तारपूर्वक सुदृढ सो अत्यंत दृढ कियो याको भावार्थ यह जो भक्ति मार्ग तो श्रीवल्लभाचार्यजीने प्रथम ही प्रकट कियो हे आपनें वाकूं भक्तानुग्रहार्थ सविस्तार सुदृढ कियो अब या रीततें सेवाको प्रकार सिद्ध भयो परंतु सेवाके बीचके अवकाशको समय वृथा जात होयगो या शंकाको निवारण करत हें. **पोतानी लीला ते वदन पोतें कही** पोतानीलीला आपकी लीला सो वदन पोते कही सो आपके श्रीमुखतें ग्रंथद्वारा कही. अथवा. **वदन** जो आपको श्रीमुख श्रीमहाप्रभुजी तिनद्वारा कही यातें सेवाके अवकाशमें सुबोधिन्यादि ग्रंथद्वारा [३]श्रवण कीर्तन स्मरण करने यह सूचन कियो अब श्रीमुखतें लीला कही ताको प्रयोजन कहा सो कहत हें. **उच्चारआनंदअधिकदीधो** सेवानंदको प्रथम निरूपण कियो. अब यातें अधिक स्मरणानंद आपने दियो ओर कीर्तनानंद हू दियो यह सूचन कियो. अब स्मरणानंदको आधिक्य यह जो कछुक हू समयको नियम हे ओर स्मरणानंद तो सर्वदा अनुभव करिवेको हे ओर सेवा तो केवल आप करे तब सुख होय ओर कीर्तन तो आप करे तब हू आनंद होय ओर दूसरे कोई करे तो हुं श्रवणानंद होय याहीतें श्रीमद्भागवतमें अष्टमस्कंधमें गजेंद्रने कह्यो हे. [५]एकांतिनोयस्यनकंचनार्थंवांछंतियेवैभगवत्प्रपन्नाः अत्यद्भुतंतच्चरितंसुमंगलंगायंत-आनंदसमुद्र मग्नाः. तथा वेदस्तुतिमें हू. [६] इतितवसूरयस्त्रयधीपतेऽखिललोकमलक्षणकयामृताब्धिमवगाह्यतपांसिजहुरित्यादि. याको फलितार्थ यह जो [७]सेवामार्ग ओर स्मरणमार्ग आपने आचरण करिके दृढ कियो ।।१।।

अब सेवामार्ग ओर स्मरणमार्ग ये दोई आपनें मनः कल्पित प्रकट किये तब तो ये मार्ग वेदोक्त नही होयंगे तब इन मार्गनतें मोक्षप्राप्ति केसें होयगी या शंकाको निवारण करत हें.

(१. फलाकांक्षा सो जेसें द्रव्यकी अथवा यशकी चाकरीकी इच्छासों गुरु शिष्यको सिखावे तेसें आपकों हू जीवनके पास ते कछू फलकी इच्छा होयगी तातें सेवा सिखावत हें यह शंका ताको उत्तर यह जो आप सर्व दुःखहर्ता हें तातें जीवनके संसार दुःखहरणार्थ ही कृपा करिकें अपुनी सेवा सिखावत हें याही अभिप्रायतें जनशिक्षा कृतेकृष्णभक्तिकृत् यह आपको नाम हे.

२. श्रीपति सो लक्ष्मीजीके पति याको अभिप्राय यह जो लक्ष्मीजीके किंचित्कृपालेशमात्रतें जीवकों द्रव्यादिक मिलत हे ओर आप तो उनके हु पति हें तातें आपकों कहा आकांक्षा होय सो ही लक्ष्मीकलत्रायकिमस्तिदेयं विभूतयेयत उपसेदुरीश्वरीनमन्यतेस्वयमनुवर्तती भवान इत्यादि वचनमें कह्यो हे.

३. सर्वदा प्रभुनको गुणश्रवणादिक करनो सो श्रीभागवतमें श्रोतव्यकीर्ति तव्यश्चस्मर्तव्यश्चेच्छाताऽभयं इत्यादिस्थलमें प्रसिद्ध हे.

४. जे निश्चय करिकें प्रभुनके शरण आये हे ओर अन्यथाश्रय रहित हें ते भक्त कछूबी पदार्थकी इच्छा करत नाहीं वे अति आश्चर्यरूप ओर परमंगल ऐसो जो प्रभुनको चरित्र ताकों गान करि आनंदसमुद्रमें मग्न रहत हें.

५. वेदननें प्रभुनको विनती कीनी हे जो अहो त्रिलोकी प्रभृतिके पति प्रभु सब लोकके दुःख पाप दूरकरिवेवारे जो आपकी कथारूप अमृतसमुद्र तामें मग्न होयके विद्वान भक्त सब सांसारिक संतापनको त्याग करत हें यह बात श्रीभागवतमें त्वत्कथामृष्टपीयुषनद्यांमनोवारणःस्मरंतःस्मारयंतश्चमिथोघौघहरंहरिं इत्यादि अनेक दूसरे स्थलनमें हू कह्यो हे.

६. आधीतुकमें सेवामार्गकी ओर आधीतुकमें स्मरण मार्गकी दृढता कही येही श्रीमहाप्रभुननें तस्मात्सर्वात्मनशश्वद्गोकुलेश्वरपादयोः स्मरणं भजनंचापिनत्याज्यमितिमेमति इत्यादि स्थलमें आज्ञा कीनी हे.

संस्कृत टीका

२ वेददधिमध्य नवनीत

वेददधिमध्य नवनीत जे भजनरस ।।
मथित माधुरी जीवें श्रवणे पीधो ।।
तक्रसम कर्मपथ स्नेहरसहीन ।।
जे श्वेत जाणी विमुख ताणी लीधो ।।२।।

अब वेदरूप जो दधि सो केसो. **मथित** सो मथ्यो भयो ताके मध्यमें रह्यो ऐसो जो. **नवनीत** सो ज्ञानमार्ग तत्सम्बन्धी. **जे भजनरस** सो भक्तिरस रसशब्दतें घृतरूपत्व सिद्ध भयो ताकी जो. माधुरी. सो मिष्टता. अब माधुरी कही यातें लौकिक घृत तो फीको होत हे ओर वह तो मिष्ट हे यातें घृततें हूं उत्कर्ष सूचन कियो. अब या माधुरीको कहा उपयोग भयो सो कहत हें. **जीव** जो दैवीजीव तिननें. **श्रवणेंपीधो** श्रवण जे कान तिनतें पीयो यातें श्रवणनकों पानपात्रत्व सूचित भयो याको भावार्थ यह जो वेदरूप जो दधि ताको आपनें मथन करिकें नवनीतरूप ज्ञानमार्ग उत्पन्न कियो. अब वेदको मथन सो व्याससूत्रानुसार विचार भाष्यरूप यातें ज्ञानमार्ग अनादिसिद्ध हे परंतु आपनें वेदमेतें ही काढिकें स्पष्ट जुदो दिखायो यह सूचित भयो. अब जेसें नवनीतको हू परिणाममें सार घृत तेसें ज्ञानको सार भक्ति सोई [८]श्रीभागवतादिकनमें प्रसिद्ध हे ओर गीताजीमें हू [९]
ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचित न कांक्षति । समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् ।। इत्यादिक स्थलनमें कह्यो हे ओर नवनीततें सारभूत घृत ताकों उत्पन्न करिवेकों सामर्थ्य तो अग्निको हे यातें श्रीमहाप्रभुनको अग्नित्व हू सूचित भयो ओर जीवनकों उपदेशद्वारा भक्तिरूप घृत प्यावत हें तातें परमउपकारित्व हू सूचित भयो क्यों जो प्रथमउपकार तो घृत उत्पन्न करेको ओर दूसरो उपकार जो घृत प्यायके [१०]पुष्टि संपादन करी ताको यह दोई प्रकारको उपकारत्व दोई स्वरूपनकों हे. अब वेदार्थ विचारिकें ज्ञानमार्ग आपनें प्रकट कियो ओर वाको फलरूप भक्तिमार्ग हू प्रगट कियो तब ओरभी वेदार्थके विचार करिवेवारे हें

तिननें कहा कियो सो कहत हें. **तक्रसमकर्मपथ** तक्र जो छाछ ताजेसो कर्ममार्ग. अब कर्ममार्गकों तक्रसमता दिखावत हें. **स्नेहरसहीन** जेसे तक्र [११]स्नेहरस जो घृत तातें हीन तेसें कर्मपथ जो भटटप्रभाकरादिदर्शित मार्ग सो हू स्नेहरसहीन सो भक्तिरसहीन हे इहां तक्रसम कर्म नही कह्यो कर्म पथ कह्यो यातें यह सूचन कियो जो वेदोक्त संध्या वंदनादिकर्म तो [१२]सेवारूप हे सो सस्नेह हे परंतु भटटाचार्य प्रभृतिननें वेदार्थ अन्यथा लगायके जो प्रकार कह्यो सो निःस्नेह हे. याहीतें कर्मपथ ऐसें कह्यो अब भटटभास्करमतानुयायी हू बोहोत हें ताको कारण कहा सो कहत हें. **जे** सो जो. **श्वेतजाणी** श्वेत जानिकें सो जेसे नवनीत श्वेत हें तेसे तक्र हू श्वेत हे परंतु नवनीत स्नेह रूप हे ओर तक्र निःस्नेह हे तो हू श्वेतवर्णकी भ्रांतितें सार जानिकें ले तेसें वेदोक्त प्रकारकी भ्रांतितें भटटभास्करोक्तमतको अंगीकार करत हें. वस्तुतः वह प्रकार वैदिकसिद्धांतविरुद्ध हे सो पूर्ण मीमांसाभाष्यादिग्रंथनमें स्फुट निरूपण कियो हे याहीते तक्रसमकर्मपथ ऐसें कह्यो. अब ऐसो उनकों अज्ञान क्यों ताको कारण कहत हें. **विमुख** सो भगवद्विमुख हे क्यों जो कर्म भगवद्रूप हें ऐसें वे नहीं जानें कर्मकूं ही फलदाता मानत हें ओर प्रभूनतें भिन्न-भिन्न मानत हें तातें ही. **ताणी लीधो** ऐसें कह्यो याको भावार्थ यह जो भटटाचार्यप्रभृतिननें जोरावरी खेंचिके वेदमेंतें अपनो प्रकार सिद्ध कियो हे ओर मुख्य वैदिकसिद्धांतको प्रकार तो श्रीमहाप्रभुननें ही निरूपण कियो हे याको भावार्थ यह जो ज्ञानमार्ग कर्ममार्ग ओर भक्तिमार्ग ये [१३]तीनोई वैदिक हें ओर इन तीनोनको यथार्थ स्वरूप आपनें ही दिखायो ओर ये तीनों ही [१४]मोक्षसाधक हे ।।२।।

अब प्रथमतुकमें निरूपण किये ऐसे आप हें यातें आपके चरण [१५]शरणजानो येही पुष्टिमोक्षको मुख्यसाधन हे सो निरूपण करत हें.

७. श्रीभागवतमें नैश्कर्म्यमप्यच्युतभाववजीतंनशोभतेज्ञानमलनिरंजनंश्रेयः सुसृतिभक्तिदस्यतेविभोकिलश्यंतियेकेवलबोधलब्धये इत्यादिस्थलमें यह प्रसिद्ध हे ओर नारदपंचरात्रादिकनमें हू प्रसिद्ध हे.

८. यह जीव भगवत्सेवादिक करिकें अक्षरब्रह्मरूप होत हे आनंदांशके आविर्भावते सदा प्रसन्न रहत हे तब याको काहू पदार्थको शोक ओर इच्छा होत नाहि फेर निर्गुणभावतें सब प्राणीनमें समान रहे तब मेरी फलरूप भक्ति पावत हे ऐसें प्रभूननें आज्ञा कीनी हे.

९. पुष्टि सो जेसें घृतसों शरीरकों पोषणरूप फल होय तेसें भक्तिद्वारा पुष्टिमार्गीय फल.

१०. स्नेह ऐसो घृतको ओर प्रीतिको नाम हे सो मेदिन्या कोशनमें प्रसिद्ध हे.

११. श्रीमहाप्रभुनने निबंधार्थनिर्णयादिस्थलनमें जो प्रकार लिख्यो हे ताप्रकारसों भगवदरूप जानिकें कामनारहित संध्यावंदनाग्निहोत्रयज्ञादि वैदिककर्म करिकें

प्रभुनके अर्पण करे तो विनकर्मनको भगवान अपनी सेवाकरिकें मानत हें सोही गीता श्रीभागवतादिकमें यत्करोषि यदश्नाति तद्धिपन्नं तस्यमहत्समर्पणं इत्यादिस्थलनमें प्रसिद्ध हे.

१२. तीनो मार्ग वेदादिसंमतहें याहीते एकादशस्कंधनमें योगास्त्रयोथयाप्रोक्तानृणा श्रेयो विधित्सया ज्ञानंकर्मचभक्तिश्चनोपायोन्योस्तिकर्हिचित् यह प्रभुननें आज्ञा कीनी हे.

१३. ज्ञानमार्ग ओर भक्तिमार्ग साक्षान्मोक्षसाधक हें ओर कर्ममार्गज्ञानद्वारा मोक्षसाधक हें.

१४. शरणयेतें ही मोक्ष होत हे सो बात गीताश्रीभागवतादिकमें मामेवयेप्रपद्यंते मायामेतांतरंतिते तथा मामेकमेवशरणमात्मानंसर्वदेहिनाम् याहिसर्वात्मभावेन यास्यसेह्यकुतो भयं इत्यादि श्लोकनमें प्रभुननें आज्ञा कीनी हे.

संस्कृत टीका

३ ऐ चरण शरण

ऐ चरण शरण विना लोक दशचारमा ।।
कहो केहेनो कांई अर्थ सीधो ।।
शूं कहूं चतुर थई थई अने विस्तरें ।।
भजे नही पशु जेम विषय कीधो ।।३।।

अब चरणारविंदके दर्शन करिकें अपनें अंतःकरणकों उपदेश करत हें. **ऐचरण** सो ये चरणारविंद तिनकी शरणबिना. **लोकदशचारमा** चतुर्दशलोकनमें कहो कोई कोभी कछू अर्थ सिद्ध भयो हे यह [१६]काकुक्ति हे याको अर्थ यह जो या **चरणशरणबिना** चतुर्दशलोकमें या जीवको कार्य जो पुष्टिमोक्षप्राप्ति सो सिद्ध न होय तो हू आश्चर्य हे सो. शु कहूं. सो कहा कहूं. **चतुरथईथई** बुद्धिमान होय होयकें. **विस्तरेंभजेनहि** विस्तारपूर्वक आपकी सेवा तथा स्मरण करत नही हें तब कहा करत हे सो कहत हें. **पशुजेमविषयकीधो** जेसें पशु केवल विषयसुखमें जानत हें तेसें अज्ञानी जीव हू केवल [१८]सांसारिक जो तुच्छ सुख ताकों सेवत हें. आपकी सेवा नामस्मरण निरंतर नहीं करत हें ।।३।।

अब सांसारिकसुखतें चित्त निवृत्त होयकें आपकी सेवा नामस्मरणमें केसें चित्त लगे ताको उपाय कहत हें.

१५. अर्थ सो भजनानंदिक पुष्टिमार्गीयफल.

१६. काकुक्ति सो जामे स्वरकी विकृतीतें ओर अर्थ होय ऐसो बोलनो काकुशब्दको ऐसो ही अर्थ अमरकोशमें लिख्यो हे काकु स्त्रियांविकारोयःशोकभीत्यादिभिर्ध्वनेः.

१७. सांसारिक विषयसुखमें ही जे निमग्न होत हे तिनकी सब चतुरतादिक व्यर्थ हे सोही दशमस्कंधमें धिक्कुलं धिकक्रियादाक्ष्यं विमुखायेत्वधोक्षजे ओर विषयमें आसक्त मनुष्यनकों इहां पशुतुल्य कहे ताको तात्पर्य यह जो स्वमार्गमें जो स्नेहको ओर रसको प्राधान्य कह्यो हे सो केवल भगवल्लीलाविषयक ही हे परंतु जे दंभी अज्ञ ग्रंथनमें तथा कीर्तनमें रसको प्राधान्य दिखायके आप विषयासक्त होत हें तिनके चित्तमें कभीभी रंचहू भगवदावेश होत नाही सो ही श्रीमहाप्रभुननें विषयाक्रांत देहानांनावेशः सर्वथाहरेः इत्यादि स्थलमें आज्ञा कीनी हे ओर यारीतके जो मिष्ठान्नादिविषयमें जीभके तथा विषयसुखकेलोभी निर्मलभक्तिमार्गकों दूषण उपजावत हें तिनको निश्चय नरकप्राप्ति ही होत हे सो श्रीमहाप्रभुनने निबंधमें विस्तारसों लिख्यो हे ओर श्रीहरिरायजीप्रभृतिप्राचीन गोस्वामिबालकननें कामाख्य दोषविवारणादिकग्रंथनमें कामको ओर भगवद्भावको परस्पर परम वैर हे सो स्पष्ट निरूपण कियो हे इहां विषयासक्तकों पशुतुल्य कहे याको फलितार्थ यह जो जेसें पशुनकों गम्य अगम्य स्त्रीको कछु विचार नही होय ओर भार उठायवे प्रभृतिको श्रम बहूत करे परंतु फल कछू नहि तेसें निबंधोक्त शिश्नोदरपरायण जनन कूंभी जाननो.

४ बोल वल्लभसुवन

बोल वल्लभसुवन विमल वाणी ।।
जेनी गति ब्रह्मादिदेवें न जाणी ।।४।।

अब. **वल्लभसुवन** या प्रकारकी जो. **विमलवाणी** सो पवित्रशब्द ताकों. **बोल** सो निरंतर उच्चार कर. अब श्रीविटठल ऐसें नही कह्यो ओर वल्लभसुवन कह्यो ताको भावार्थ यह जो श्रीविटठल ऐसें उच्चारकरे तो केवल श्रीगुसांईजीको ही नाम स्मरण होय ओर वल्लभसुवन ऐसें कहेंते श्रीमहाप्रभुनको ओर श्रीगुसांईजी दोइनको नामस्मरण होय. अथवा. वल्लभ. सो श्रीमहाप्रभुनजी ओर उनके. **सुवन** सो श्रीगुसांईजी इनको. **विमल** वेदतुल्यनिर्दोष ऐसी जो ग्रंथरूप. **वाणी** ताकूं. **बोल** सो उच्चार कर. अब याको कारण कहा सो कहत हे. **जेनीगति ब्रह्मादिदेवेनजाणी** जिन दोइस्वरूपनकी गति सो ज्ञान तथा लीला सो ब्रह्मादिकदेवतानतें हू जानीजात नही याको भावार्थ यह जो श्रीमहाप्रभुनको ओर श्रीगुसांईजीको निरंतर नामस्मरण यातें चित्त सर्वदा शुद्ध रहे ओर भाष्यादिक जे [१९]प्रमाणप्रमेयग्रंथ तिनको अभ्यास यथोचित करे तब आपके स्वरूपको यथार्थ ज्ञान नही तो ब्रह्मादिकनकों हू आपके स्वरूपको ज्ञान नही तब जीवकों कहांतें होय ।।४।।

अब आपके स्वरूपकों ज्ञान आप करावें तब ही ताको उदाहरण कहत हें.

[१८] प्रमाण जे वेदसूत्रादिक तिनके व्याख्यान ते प्रमाणग्रंथ ओर प्रमेय जो लीलायुक्त भगवत्स्वरूप ताके प्रतिपादक जे ग्रंथ ते प्रमेयग्रंथ.

संस्कृत टीका

५ नंदनंदन रूपें

नंदनंदन रूपें रासलीला करी ।।
पोतें न उच्चरी छानी राखी ।।
दिवसएकादनी उत्तराकुंवरप्रत ।।
व्यासनंदन विमलवदन भाखी ।।५।।

अब **नंदनंदनरूपे** सो कृष्णावतार धारण करिकें छः महीनाकी रात्री करिकें रासक्रीडा करी सो. [२०]पोतेनउच्चारीछानीराखी आपने कोईको आज्ञा नही करी छानी राखी सो गुप्तराखी यातें या लीलाको सबनकों ज्ञान नही हे तब या लीलाको सबलोक केसें जानत हें ताको कारण कहत हे. **दिवसएकादनीउत्तरा-कुंवरप्रत** छः महीनाकी लीलामेंते एकाद दिनकीलीला उत्तरा जो विराटराजकी बेटी ताको कुंवर सो बेटा परीक्षितराजा ताकों. **व्यासनंदनविमलवदनभांखी** व्यास सो वेदव्यासजी तिनके नंदन सो पुत्र श्रीशुकदेवजी तिननें विमल सो प्राकृतसम्बन्ध रहित अलौकिक जो मुख तातें कही. अब परीक्षित नही कह्यो ओर उत्तराकुंवर कह्यो यातें वाकों भगवत्सम्बन्ध सूचन कियो क्यों जो उत्तराके गर्भमें जब परीक्षितराजा हते तब जनमलीयोताहांताई प्रभुनके विनकुं [२१]दर्शन भए यातें अलौकिकदेह इनको हे ओर [२२]जितेंद्रिय हें यातें इतनीलीलाश्रवणको अधिकार सूचन कियो. अब परीक्षितराजाके देहको

अलौकिकत्व तो श्रीमहाप्रभुननें श्रीभागवतत्वदीपमें [२३]अलौकिकस्यदेहस्यनदाहोलौकिकोमतः. अतः शापमिषेणसस्तक्षकाग्निमवासृजत्. या कारिकामें स्फुट निरूपण कियो हे. अब व्यासनंदन ऐसो शुकदेवजीको नाम इहां कह्यो यातें भगवद्रूपत्व सूचन कियों क्यों जो व्यासजी [२४]ज्ञानावतार हें तिनकें हूं नंदन सो आनंददेवेवारे ज्ञानीनको आनंददेवेवारे तो प्रभु ही यह सर्व उपनिषदनमें निरूपण कियो हे याको भावार्थ यह हे जो ऐसे अलौकिकश्रोता ओर अलौकिकता हते तो हू एकदिवसकी लीलाको ज्ञान भयो तब सामान्यजीवकों आपकी लीलाको ज्ञान कहांतें होय यातें आपकी वाणीरूपग्रंथ तिनके [२५]यथोचित अभ्यासतें ही आपके स्वरूपको ज्ञान होय ।।५।।

अब आपकी वाणीरूप ग्रंथको अभ्यास करे तो आपके स्वरूपको ज्ञान होय ऐसें पहेलें निरूपण कियो तब आप तो अब प्रगट हें ओर ग्रंथ हू अब किये हें ओर ब्रह्मादिक तो सब पूर्वकालके हें ओर इनकुं भगवत्स्वरूपको ज्ञान हे सो हू पुराणदिकमें प्रसिद्ध हे तब आपकी वाणीसूं ही ज्ञान होय ऐसें क्यों कह्यो या शंकाको निवारण करत हें.

१९. संस्कृतमें छन्नशब्द हे ताको भाषामें छानी यह अपभ्रंश भयो ताते गुप्तराखी यह अर्थ कियो ओर गुप्त राखिवेको कारण तो यह जो लीला अत्यंत रहस्य हे.

२०. जब परिक्षितराजा गर्भमें हते तब अश्वत्थामानें पृथ्वीको निष्पांडव करिवेके लियें ब्रह्मास्त्र छोडयो तब परीक्षितकी माता उत्तरा जरिवे लगी तासूं प्रभुनके शरणगई तब प्रभुननें वाके गर्भमें पधारिके सुदर्शनचक्रतें ओर कौमोदकी गदातें ब्रह्मास्त्रको निवारण करिकें परीक्षितकी रक्षा कीनी ताहीतें परीक्षितको नाम विष्णुरात हे ओर परीक्षितकों गर्भमें ही प्रभुनको साक्षात् दर्शन भयो फिर जन्म भये पीछे गर्भमें मेनें देख्यो सो पुरुष कौन ऐसी परीक्षा करत रहे याहीतें विनको नाम परीक्षित यह भयो.

२१. जेसे उत्तरा छोटेवयमें ही अभिमन्युके मरणतें विधवा भई परंतु परमप्रतिव्रता हे जितेंद्रिय तेसें परीक्षित हू भगवद्भक्त जो उत्तरा ताको पुत्र हे ओर गर्भमें ही भगवत्सम्बन्ध पाये हें ताते परमधर्मपरायण जितेंद्रिय हें ताहीतें रास लीला श्रवणको अधिकार उनको भयो याको तात्पर्य यह जो जो मनुष्य जितेंद्रिय न होय ताकों रहस्य लीलाश्रवणमें मनकी दुष्टतासों कदाचिद् अत्यंत अपराध होय तब उलटो अकल्याण होय तातें भगवल्लीलाके श्रवणकी अथवा कीर्तनकी जो आकांक्षा होय तो काम क्रोधादिवासना दूर करिकें जितेंद्रिय होवो.

२२. परीक्षितराजाको देह अलौकिक हे ताको लौकिक दाह योग्य न होय यातें प्रभुननें शापको मिष करिकें तक्षककी विषरूप अग्नितें वाको दाह करवायो ऐसें श्रीमहाप्रभुननें द्वादशस्कंधके निबंधमें लिखी हें.

२३. प्रभुनकी क्रिया ओर ज्ञान यह दोय मुख्यशक्ति वेदमें प्रसिद्ध हें तामें कितनेंक क्रियावतार हें जेसें परशुराम मोहिनी प्रभृति तिननें क्षत्रियवध दैत्यमोहनादिक क्रिया ही करीहे ओर कितनेक ज्ञानावतार हे जेसें व्यास कपिलादिक तिननें मुख्यतासूं ज्ञानकी वृद्धि करी हे ओर ज्ञान क्रियावतार होय ते पूर्णावतार जेसें रामकृष्णादिक तिन अवतारनमें अत्यंत अलौकिक कर्म दीसत हें ओर गीतादिकद्वारा परिपूर्ण ज्ञान हू दीखत हें या बातको विशेष विवेचन निबंध श्रीसुबोधिनीजी प्रभृतिनमें कियो हें तातें टीकामें व्यासजीकों ज्ञानावतार कहे सो योग्य हे याहीतें भाष्यप्रकाशमें श्रीपुरुषोत्तमजीनें तं कृष्णमुनिमानमामिसततंमज्ञानवतारं हरेः.

२४. यथोचितअभ्यास सो जेसो चाहिये तेसो अभ्यास.

संस्कृत टीका

६ ब्रह्मादि महामुनि

ब्रह्मादि महामुनि अतिज्ञानपारंगत ।।
ते मधुसिंधुनी कहियें मांखी ।।
न कोय हुवो न होय ए रूपसम ।।
तेहना सकल निज निगम साखी ।।६।।

ब्रह्मादिक जे. **महामुनी** अत्यंत मननशील सो [२६]युक्तिपूर्वक भगवत्स्वरूपको चिंतन करिवेवारे वे केसें हें सो कहत हें. **अतिज्ञानपारंगत** अति सो अतींद्रिय अलौकिकज्ञान ताके पारंगत सो पारपाये भये. **तेमधुसिंधुनीकहियेंमांखी** ते सो वे मधु जो सेहेत ताको सिंधु जो समुद्र ताकी मांखी कहियें. अब [२७]मधु सिंधुस्थानापन्न ज्ञान तातें ज्ञानकों मिष्टत्व [२८]अपारत्व साररूपत्व यत्न प्राप्यत्व चिरकालभयत्व सूचन कियो ओर [२९]माखीस्थानापन्न जे ब्रह्मादिक तिनकों ज्ञानरस प्रियत्व परिमिताधिकारित्व सूचन कियो अब [३०]पारंगत कहे यातें यह सूचन कियो जो पारंगत जो होय ताको समुद्रकी अगाधताको यथार्थज्ञान न होय जितनो डूबे इतनो ही ताकों ज्ञान होय यातें ब्रह्मादिक हू अलौकिकज्ञानवारे हें परंतु जितनो प्रभुननें उनकूं अधिकार दीयो हे तितनो उनकों ज्ञान हे ओर-पूर्णज्ञान तो आप कृपा करें तब होय वा कृपाको साधन यथोचित आपकी वाणीरूपग्रंथको अभ्यास हे याहीतें. **नकोयहुवोनहोयएरूपसम** एरूपसम सो श्रीविटठलस्वरूपके तुल्य नकोयहुवोनहोय ऐसो कोई अवतार न भयो ओर न होयगो. अब यामें प्रमाण कहा सो कहत हें. **तेहनासकलनिजनिगमसाखी** ता बातके सकल सो सब निजनिगम निज सो स्वकीय निःश्वासरूप ऐसे निगम जे वेद. अथवा. निज. जे भक्त-ओर. निगम. जे वेद. अथवा. **निज** जे भक्त तिनको. **निगम** जो ज्ञान करायवेवारो अंतःकरण सो साखी सो साक्षी हे याको फलितार्थ यह जो आप पूर्णपुरुषोत्तम हें आपके स्वरूप ज्ञान आपकी कृपातें होय या बातके साक्षी भगवदीय ओर वेद हें ।।६।।

अब ब्रह्मादिकनकूं हू जाको पूर्ण ज्ञान नही हे ऐसो अनाद्यनत तो अक्षरब्रह्म हू हे ताको आज अवतार होयंगें या शंकाको निरास करत भये आपके स्वरूपको जाकों अनुभव नही सो निंद्य हे यह निरूपण करत हें.

२५. युक्ति सो वेदमें कही ऐसी युक्तियें तिन करिकें जो परब्रह्मको परिचिंतन करनो सो ही मनन कह्यो जाय याहीतें युक्तिभिःपरिचिंतनंमननं यह लक्षण शास्त्रमें कियो हे ओर युक्तियें वेदसंमतही लेनी श्रीमहाप्रभुननें तपसावेदयुक्त्यानुप्रसादात्परमात्मनः इत्यादि स्थलमें दिखायो हे.

२६. मधु सो अलौकिक आनंदात्मकभगवत्स्वरूप ताको ज्ञान हू स्वरूपतें अभिन्न हे यातें ज्ञानकों मधुरूप कह्यो.

२७. समुद्रके द्दष्टांततें ज्ञानको अपारपनो सिद्ध भयो ओर जेसें सेहेत सब वनस्पतीनको सार हे तेसें भगवद्ज्ञान ओर भगवद्भक्ति सबवेदादिकनको सार हे जेसें मक्षिका बडे प्रयत्नकरिकें सब वृक्षनको सारं एक जग्गें भेलो करत हें तेसें व्यासादिकननें बडो परिश्रम करिकें वेदकी अनेक शाखानमें तें सार लेकें

ब्रह्मसूत्र श्रीभागवतादिकके विषें ज्ञानको तथा भक्तिको निरूपण कियो हे याहीतें टीकामें यत्नप्राप्यत्व कह्यो ओर जेसें सेहेत बहुतकालमें सिद्ध होत हे तुरत सिद्ध होत नाहि तेसें ज्ञान ओर भक्ति हू बहुतकालमें सिद्ध होत हे याहीतें टीकामें चिरकाललभ्यत्व कह्यो.

२८. जेसें माखी सब वनस्पतीनको सार एकजग्गें भेलो करत हें तेसें ब्रह्मादिक व्यासादिकनने सबवेदनको सार श्रीभागवतादिकनमें भेलो कियो हे सो जीवनको प्राप्त होत हे ओर जेसें माखीकों मधु अत्यंतप्रिय हे तेसें ब्रह्मादिकनकों ज्ञानात्मक रसात्मक भगवत्स्वरूप अत्यंत प्रिय हे ओर जेसें माखी सगरो मध पी सकत नाही थोडोसो ही पी सके तेसें ब्रह्मादिक हू भगवत्स्वरूपको सर्वांशसु यथार्थसाक्षात्कार प्राप्त होय नाही वेसो साक्षात्कार तो केवल व्रजभक्तनकुं ही भयो याहीतें टीकामें ज्ञानरसप्रियत्व ओर परिमिताधिकारित्व ब्रह्मादिकनकों कह्यो.

२९. जेसे नौका समुद्रके पार जात हे परंतु वाके नीचेको भाग जितनो समुद्रमें डूबे तितनी ही समुद्रकी अगाधता स्पष्ट होत हे वास्तविक रीतिसूं कितनो अगाध हे सो अनुभव नौकासूं होतनाही ओर श्रीरामचंद्रजीकी सेनाके वानर सगरे सेतुपें होयके समुद्रके पार गये परंतु समुद्रकी अगाधताको अनुभव विनकुं न भयो यह अनुभव तो मंदराचलकूं ही भयो जो इतनो बडो याकेभीतर डूबनलाग्यो सो ही कोइक कभीनें कह्यो हे अंबुधितऐहवानरभटैकिंत्वस्यगांभीरतामापातलनिमग्नपीवरतनुर्जानाति मंथाचल.

संस्कृत टीका

७ ए प्रभु रसपुंज

ए प्रभु रसपुंज भूमिपर रुचि करी ।।
भाग्यहीन जीव जेणें कणिका न चाखी ।।

तेने देव उपर रह्या धिक्कार बोले ।।
मंदमति कही अने निंदा दाखी ।।७।।

ए प्रभु सो ये श्रीगुसांईजी वे केसे हें. **रस पुंज** सो [३१]निरवध्यानंदात्मक ते. **भूमिपररुचिकरी** भूमि जो पृथ्वी तापें रुचिकरी सो इच्छा करी याको भावार्थ यह जो ऐसें जीव कर्म बंधतें पृथ्वीपें देह धारण करत हें तेसें नही आपकी इच्छातें आप प्रगटे यह द्वितीयाख्यानमें स्पष्ट निरूपण कियो हे. अथवा. **रुचि** जो तेज ताकू भूमिपे फेलायो यातें आसुरांधकार-नाशकत्व सूचन कियो. अब या रीततें अत्यंत दुर्ल्लभ ओर उत्तम पदार्थ स्वेच्छातें सुलभ भयो तो हू. **जेणें** जो जाने. **कणिकानचाखी** लेशमात्र हू आपके स्वरूपानंदको अनुभव न कियो ते. **भाग्यहीनजीव** वह मंदभाग्यजीव. अब गोपालदासजी कहत हें जो यह केवलमें नही कहत हूं. **तेनें देवउपररह्याधिक्कार बोले** वा जीवकों देवता हू स्वर्गमें बेठे धिक् धिक् ऐसें कहत हें और. **मंदमतिकही अनें निंदादाखी** यह मंदबुद्धि हे ऐसें अनेक प्रकारकी [३२]निंदा वाकी करत हें याको फलितार्थ स्पष्ट हे ।।७।।

अब या रीततें देवता भूतलके जीवनकों धिक्कार कहत हें तब वे आप स्वर्गमें क्यों बेठि रहे हें आपके स्वरूपको अनुभव काहेकों नहिं करत हें या शंकाको निवारण करत हें आधी तुकतें.

३०. निरवध्यानंदात्मक सो अगणित आनंदरूप ओर केवल रस होय सो स्थिर रही सके नहि यातें मूलमें रसपुंज ऐसें कह्यो इहां पुंज शब्दतें घनीभूतरसरूपपनो सूचित भयो.

संस्कृत टीका

८ विबुध वांछे

विबुध वांछे वास वसुमती उपरें ।।
श्रीवल्लभकुंवरनी टेहेल करवा ।।
घोषथी वेगें पाउंधारे ते गिरिभणी ।।
श्रीगिरिराजधरणनो ताप हरवा ।।८।।

विबुध जे देवता ते. **वसुमतीउपरें** सो पृथ्वीपें. **वास** सो स्थिति ताकों. **वांछे** सो [३३]इच्छत हें काहेकों सो कहत हें. **श्रीविटठलकुंवरनी टेहेलकरवा** श्रीवल्लभ सो श्रीमहाप्रभुजी उनके कुंवर सो पुत्र श्रीविटठलनाथजी नितकी टेहेल करवा सो सेवा करिवेवारेनकी परिचारकी करिवेकों. अब [३४]विबुध शब्द देवतावाचक कह्यो यातें विनकों आपको माहात्म्य ज्ञान आछी रीततें यह सूचन कियो ओर वांछे ऐसे कह्यो यातें इच्छा मात्र करत हे परंतु आपकी पूर्णकृपाबिना यह पदार्थ उनको नहीं मिलत हे यह सूचन कियो ओर पृथ्वीवाचक [३५]वसुमती शब्द कह्यो यातें पुष्टिसंपत्तितें पूर्णत्व ओर आपके प्रकाशितत्व ओर आपके पुत्रपौत्रादिकरत्नतें भूषितत्व सूचन कियो क्यों जो वसु शब्द द्रव्यकिरण रत्नवाचक हे तातें ओर टेहेल करवा ऐसें कह्यो यातें देवतानको दैन्य सूचन कियो याको भावार्थ यह जो आपकी सेवा देवतानकूं हु दुर्ल्लभ हे ऐसें आधी तुकतें माहात्म्य निरूपण समाप्त करिकें. अब प्रथम तुकमें आप सेवाकरीसीखवे ऐसें कह्यो ताको प्रकार निरूपण करत भये आपके चरित्रको निरूपण करत हें. **घोषथीवेगें पाउधारेतेगिरिभणी** [३६]घोषथी सो श्रीगोकुलतें ते गिरिभणी ते सो वह जापें श्रीनाथजी बिराजत हे वह गिरि सो पर्वत गिरिराजजी ताकीआडी वेगें सो उतावलतें पाउधारे सो पधारत हें. अब गिरिभणी ऐसें कह्यो यातें श्रीगिरिराजजीके दर्शन या बिरियां गोपालदासजीकों भये यह हू सूचित भयो. अब बेग गिरिराजजीकी आडी क्यों पधारत हें ताको कारण कहत हे. **श्रीगिरिराजधरणनो तापहरवा** श्रीगिरिराजधरण जे श्रीनाथजी तिनको ताप सो आपके हृदयमें श्रीनाथजीके दर्शनकी आर्ति ताकों मिटायवेके लियें. अथवा. **श्री** जो शोभा. अथवा स्वामिन्यादिक तिन करिकें युक्त ऐसे जे गिरिराजजी तिनको ओर विनकें **धरण.** ते धारण करिवेवारे श्रीनाथजी तिनकों जो आपतें श्रीगुसांईजी तें मिलवेको ताप ताकों मिटायवेके लियें बेग श्रीगोकुलतें गिरिराजजीको पधारत हें ओर आधी तुकतें माहात्म्यनिरूपण समाप्त कियो ओर आधी

तुकतें चरित्रारंभ कियो यातें दोईप्रकारकों [३७]एकविषयत्व सूचन कियो ।।८।।

अब श्रीगोकुलतें गिरिराजजी आप कोन रीतसों पधारत हें ताकों निरूपण करत हें.

---

३१. भगवद्विमुखजीवनकी देव निंदा करत हें यह बात श्रीभागवतादिकनमें अनेक जग्गें प्रसिद्ध हे यच्चित्ततोदः कृपयाऽनिंदविंदा शावौकरौनोकुरुतःसपर्यां इत्यादि स्थलनमें.

३२. प्रभुनकी सेवाके लियें देवता हू पृथ्वीमे वास इच्छा हें यह बात पंचमस्कंधाकिनमे यैर्जन्मलब्धंनृषुभारताजिरेमुकुंदसेवौपयिक स्पृहादिनः इत्यादि स्थलनमें स्फुट होत हे.

३३. विबुध ऐसो देवको ओर पंडितको नाम हे सो मेदिनी कोशमें कह्यो हे विबुधो ज्ञेसुरेवरूल्लताविटपयोः स्त्रियाम्.

३४. वसु सो धन पृथ्वीमें रहत हे यातें पृथ्वीको वसुमती कहत हे अब आपके प्राकटयतें इहां पुष्टिसमृद्धिरूप धन सुलभ भयो तातें देवता पृथ्वीपें निवास चाहत हें अब वसु शब्दके ओर हू अर्थ हे तिन अर्थनको हू पृथ्वीपें संभव श्रीगुसांईजीके प्राकटयतें भयो सो टीकामे दिखावत हें ओर वसु शब्दके किरण रत्न इत्यादिक अर्थ तो हैम कोशमें लिखे हें वसुत्वग्नौदेवभेदेनृपेरुचि योकेवेशुष्केवसुस्वादौ रत्नेवृद्धौषाधेधने ऐसें स्वादिष्ट वस्तुको तथा पोषण करिवेवारे औषधको नाम हू वसु हे सो अर्थ हू इहां मिलत हे क्यों जो आपने परम स्वादिष्ट भक्तिरस पृथ्वीपें फेलायो हे ओर देवतानके पोषणके उपाय हू आसुरखंडनयज्ञप्रवृत्त्यादिक आपनें किये हे.

३५. घोष ऐसो खिरकको नाम हे ओर श्रीनंदरायजीकी गायनको खिरक श्रीगोकुल हे तातें घोषथी सो श्रीगोकुलतें यह अर्थ कियो.

३६. एक विषय सों जेसें एकही तुकमेंतें पहिली आधी तुकमें महात्म्य वर्णन कियो जो देवता हू आपकी सेवाकी इच्छा करत हें ओर दूसरी आधी तुकमें स्नेहोपयोगि चरित्र कह्यो तब जेसें या एकही माहात्म्य ओर चरित्र ये दोई कहे हें तेसें एकही श्रीगुसांईजीके स्वरूपके विषें अनंतमाहात्म्य ओर स्नेहोपयोगी अनंतचरित्र ये दोई रहत हें यह सूचित भयो ओर याहीतें परिपूर्ण भक्तिदातापनो हू सूचित भयो क्यों जो प्रभूनमें माहात्म्यज्ञानपूर्वक सुदृढस्नेह होय सो ही भक्ति कही जाय.

संस्कृत टीका

९ फूल फेंटे भर्यां

फूल फेंटे भर्यां वसन वाघातणां ।।
विविध भूषणते अंग धरवा ।।
तुरंग चाल्यो वायुवेगें उतावलो ।।
जाणे नौका चाली सिंधु तरवा ।।९।।

फूल माला करिवेकें लियें ओर. **वसनवाघातणां** वागा नयो करिवेके लिये वस्त्र ओर. **विविध** सो नाना प्रकारके. **भूषण ते** आभरण ते. **अंगधरवा** सो वे सब प्रभूनके श्रीअंगमे धरायवेके लिये यह सब. **फेंटेभर्यां** सो फेटमे बांधिकें घोडापें आप बिराजें फेर वह [३८]घोडा केसो चलत हे सो निरूपण करत हें. **तुरंग चाल्यो** घोडा चाल्यो सो केसो. **वायुवेगेंउतावलो** जेसो पवनको वेग होत तेसे वेगतें उतावलो चलत हे. अब ऐसे वेगतें घोडा चलत हे तब आपको श्रम होतों होयगो ओर पुष्प वस्त्र आभरण फेंटमे हते हु मिसलाय जाते होयंगें या शंकाके निवारणार्थ द्दष्टांत कहत हें. **जाणेनौकाचालीसिंधुतरवा** मानों नाव वायुके वेगतें सिंधुतरवा सो [३९]समुद्र तरिवेकों चली. अब वायुवेगें अतावलो यह विशेषण [४०]लिंगविपरिणामतें [४१]द्दष्टांतदार्ष्टांतिक दोइमें लगत हे. अब नौकाके द्दष्टांततें जेसें नाव अत्यंत उतावली चले तो हू वामें बेठें होय तिनकों रंच हू श्रम नहीं होय तेसें वह घोडा हू ऐसो चलत हे जेसें रंच हू आपकों श्रम न होय यह सूचन कियो याको भावार्थ स्फुट हे ।।९।।

अब नित्य या रीततें पधारत हे तब पहेलें कह्यो जो ताप हरवा सो केसें संभवे ताप तो बहोतदिनताई न मिलैं तब होय या शंकाको निवारण करत हें.

३७. या जग्गें घोडापें बिराजवेकों वर्णन कियो हे सो वह घोडा दो घडीमें बारह कोस चले ऐसो पादशाहनें श्रीगुसांईजीको भेट कियो हतो सो नित्य आप श्रीगोकुलमें श्रीनवनीतप्रियजीकी सेवा करिकें वा घोडापें बिराजीकें श्रीगिरिराजजी पधारत हते सो वार्तानमें प्रसिद्ध हें.

३८. नदी प्रभृतीनकी नाव छोटी होत हें तातें प्रबल वायुतें विनमें उपद्रव होत हे ओर महासमुद्रमें चलिवेवारी बडी नावकों तो प्रबलवायु आछो अनुकूल पडत हे ओर बहत बड़ी नावमें वेगहू जानि पड़त नाही तातें समुद्रकी नावकों दृष्टांत कह्यो ओर यातें आप विरहदुःखसमुद्र तरिवेकों तुरत पधारत हें यह हू सूचन कियो ओर सिंधु सो महानदी तरिवेकों जैसें नौका चले तेसें घोड़ा चल्यो ऐसो हू अर्थ कितनेक कहत हें.

३९. लिंगविपरिणाम सो लिंग फिरावनो जेसें घोडा पुल्लिंग हे ओर नौका स्त्रीलिंग हे यातें वायुवेगें उतावलो यह पुल्लिंगकों विशेषण नौकामें लगि सकें नहि तासूं वायुवेगें उतावली ऐसें स्त्रीलिंग करिकें नौकामें लगावनो.

४०. दृष्टांत सो उहां नौका ओर दार्ष्टांतिक घोड़ा.

संस्कृत टीका

१० दिवसएकाधनो

दिवसएकाधनो विरह ते जुगसमो ।।

नीराजनमिषें रूप हृदय धरवा ।।
जीवनें ए कृत्य नित्यप्रति क्षणक्षणें ।।
श्रीविटठलनाथ एवा उच्चरवा ।।१०।।

दिवसएकाधनो दिवसनो सो दिन ताको ऐकाध सो एक अर्द्ध दुपेहेर पर्यंततत्परिमित जो **विरह** [४२]दोईस्वरूपनकों परस्पर सो केसो. **जुगसमो** सो युगतुल्य. अब युगकी सङख्या नही कही यातें [४३]असङख्यात युगतुल्यता सूचन करी. अब ऐसे गाढ विरह तापकी निवृत्ति केसें होय ओर देहस्थिति हू केसें रहे सो कहत हें. **नीराजनमिषेंरूपहृदयधरवा** नीराजन सो आरती [४४]ताके मिषतें रूप जो प्रभुनको स्वरूप ताकों हृदयमें धरिवेके लियें. अब नीराजनमिषें ऐसे कह्यो समयको नाम नही कह्यो यातें संध्याआरती शयन आरती दोई सूचन करी ताको प्रकार यह सो संध्या आरतीके समें तो शृंगार सहित वेणुवेत्रगोरज सहित स्वरूपको हृदयमें धारण करें याते तापनिवृत्ति होयकें सुखाभिलाष बढे सो ही तात्पर्य तं गोरजश्छुरितकुंतल या श्लोकके सुबोधिनीजीमें निरूपण कियो हे ओर शयन आरतीके समें [४५]अव्यवहित श्रीअंगके दर्शन होय यातें निरवधिसुख-प्राप्ति होयकें वह स्वरूप हृदयमें बिराजे तातें दूसरेदिन विरहमें देहस्थिति रहे. अब भगवत्प्रवेश हृदयमे होय तब गाढ विरहमें देहस्थिति रहे यह प्रकार तो आनंदमयाधिकरणके द्वितीयवरणकमे श्रीगुसांईजीनें स्पष्ट निरूपण कियो हे. अब या प्रकारतें सेवा जीवकों शिक्षाके लियें आप करत हें यह सूचन करत भये कहत हें. **जीवनें** सो आपके शरणागत जीव हें तिनके. **एकृत्य** सो यह सेवा या रीततें अवश्य कर्तव्य हे. सो कब कहत हें. **नित्यप्रति** सो दिवसदिवसप्रति तामें हू. **क्षणक्षणें** यातें क्षणमात्र हू सेवाबिना न रहनो. अथवा. यह सेवारूप कृत्य केसो हे सो कहत हें. [४६]नित्य यातें ऐसें न करे तो अपराधी होय यह सूचन कियो. अब नित्य कोनसे समे करे सो कहत हे. **प्रतिक्षण** क्षणमात्र हू सेवाबिना रहनो नहीं. सोहू. [४७]क्षणें सो आनंदपूर्वक करे. अब प्रतिक्षण सेवा करनी ऐसें कह्यो तब अनोसरमें कहा सेवा करे सो कहत हे. **श्रीविटठलनाथएवाउच्चरवा** एवा सो प्रथम जिनको निरूपण कियो ऐसे. अथवा. गोपालदासजी प्रत्यक्षदर्शन करिकें कहत हें. **एवा** जो जेसे अभी दर्शन देत हें ऐसे श्रीविटठलनाथ ते श्रीगुसांईजी ते. **उच्चरवा** सो विनको नामस्मरणकरनो. अथवा. **श्री** जे स्वामिनीजी तिन करिकें युक्त ऐसे जे. **विटठलनाथ** ते पूर्णपुरुषोत्तम हें. **एवा** सो ऐसें ध्यान करिकें नामस्मरण करे यातें मानसी सेवा हू सूचन करी याको भावार्थ यह जो निरंतर सेवा करे अनोसरमें मानसी सेवा करे युगलस्वरूपके ध्यानपूर्वक नामस्मरण करे यह सब जीवकों अवश्य कर्तव्य हें ।।१०।।

अब जीवको शिक्षा करिवेके लियें [४८]सेव्यसेवकभावात्मक आपकी लीला निरूपण करी यातें उत्कृष्टापकृष्टभावकी और [४९]द्वैतकी शंका होय ताको निवारण आधी तुकमें करत भये युगलस्वरूपकी लीलाको निरूपण करत हें.

४१. दोई स्वरूपनकों सो श्रीनाथजीको ओर श्रीगुसांईजीको परस्पर विरह.

४२. असङ्ख्यात सो अनेक युग यह अभिप्राय श्रीभागवतमें क्षणंयुगशतमिवयासांयेनविनाऽभवत् इत्यादि स्थलमें प्रसिद्ध हे.

४३. आरती करिवेके मिषसूं भगवत्स्वरूप हृदयमें पधारत हें याको तात्पर्य यह जो भावात्मकजोत ते प्रकाशित भगवत्स्वरूपकूं सन्मुख ठाड़े रहिके आछी रीतितें निरखिके अपुने हृदयमें पधरावत हें ओर आरती फिरावत हे ताकरिकें हृदयमें पूर्वविरह तापादिक हें तिनको दूर करत हे याहीतें आरतीके दीपनकूं विरहरूपनो हू कहींक भावग्रंथनमें लिख्यो हे ओर प्रभु कृपा करिकें हृदयमें पधारे ऐसें मेरे हृदयमें सदा बिराजेंगे तथा बाहर हू ऐसें ही सेवासुख सदा देगें या हर्षतें तथा दीनतातें दंडवत् कारक हें.

४४. अव्यवहित सो बहुत करिकें खुल्यो भयों जो शयनके समें विशेष वस्त्र आभरण नहि रहें हे तातें श्रीअंगकी सहज, सुंदरताको अनुभव वा बिरियां आधो होय ऐसें वस्त्राभरण सहित स्वरूपके तथा केवल श्रीअंगको स्नेहसूं दर्शन करे सो ही धन्य होय याहीतें वेणुगीतमें धन्यास्तुमूढमतयोपिहरिण्यएताआनंदनंदमुपात्तविचित्रवेषं या श्लोकमें विचित्रवस्त्राभरणवेष सहित प्रभुके दर्शनतें हरिणीनके धन्य कही ओर प्रभु एक वेष बडो करिकें दूसरे वस्त्रादिक धारण करत हें तब हरिणीनकों सब श्रीअंगके दर्शन होत हे सो सब या श्लोकके श्रीसुबोधिनीजीमें तथा लेखमें स्पष्ट हे.

४५. कर्मके तीन प्रकार हें नित्य, नैमित्तिक ओर काम्य तामें नित्य सो जे सदा करने ही चहियें ओर न करे तो प्रत्यवाय लगे जेसें संध्यावंदनादिक ओर नैमित्तिक सो निमित्त आयेतें जरूर करने चहिये जेसें प्रायश्चितादिक जो पाप करे तो अवश्य करनो पड़ नही तो कछू जरूर नहि ओर काम्य सो कामना पूरे करिवेवारे कमवि कियेतें कामना पूरी होय परंतु न करे तो दोष नहि इन तीनों कर्ममें नित्यकर्म आवश्यक हे ओर भगवत्सेवा हे सो नित्यकर्म हे याहीते नारदीयपुराणमें कह्यो हे यथासंध्यातथानित्याविष्णुपूजास्मृताबुधैः याके विशेष प्रमाण वचन मैंने सत्सिद्धांतमार्तंडमें लिखे हें तासूं भगवत्सेवा न करे तो अपराधी होय यह सब अभिप्राय कृष्णसेवासदाकार्या या श्लोकको टीकामें श्रीगुसांईजीनें लिख्यो हे.

४६. क्षण ऐसो उत्सवको नाम अमरकोशमें लिख्यो हे क्षणउद्धर्षो महउद्धवउत्सवः.

४७. सेव्यसेवकभावरूप लीला सो श्रीनाथजी स्वरूपतें आप ही सेव्य ओर श्रीगुसांईजी स्वरूपतें आप ही सेवक यह लीला.

४८. द्वैत तो दोय प्रकारको ज्ञान जेसें श्रीनाथजी जूदे हें ओर श्रीगुसांईजी जूदे हें ऐसें जाननो यह द्वैत मिटे बिना फल न होय.

संस्कृत टीका

११ रूप बेऊ एक

रूप बेऊ एक ते भिन्न थई विस्तरे, ।।
विविध लीला करे भजन सार ।।
विविध वचनावली नेणसेणें करी ।।
संगना सूचवे निस विहार ।।११।।

श्रीनाथजी ओर श्रीगुसांईजी ये. **रूपबेऊ** सो दोईस्वरूप. **एक** सो अभिन्न हे. **ते** सो वे. **भिन्नथई विस्तरे** लीलासामग्रीरूपतें ओर पुत्र पौत्रादिरूपतें भिन्न सो अनेकस्वरूपतें विस्तार पावत हें ताको कारण कहत हें. **विविधलीलाकरेभजनसार** विविध सो नानाप्रकारतें लीला करत हें सो लीला कोनसी कहत हें भजनसार भजन जो सेवा ओर नामस्मरण सोई हे [५०]सार जामे ऐसी सेव्यसेवकभावरूप लीला सो करत हें. अथवा. युगल स्वरूपकी लीला निरूपण करन हे तामे द्वैतशंका होय ताको निवारण करत भये लीला निरूपण करत हें. **रूपबेउएक** प्रभु ओर श्रीस्वामिनीजी ये दोई स्वरूप एक हे परंतु. **भिन्नथई** [५१]द्विधाहोयकें. **विस्तरे** सो [५२]विस्तारसूं लीला करत हें. वे लीला केसी सो कहत हें. **भजनसार** भजन जो सेवा नामस्मरण ताके सारभूत याको भावार्थ यह जो नित्यलीलाविष्ट ये दोई स्वरूप हें तिनको [५३]यथाधिकार सदा ध्यान करे सेवा ओर विनरूपनके नामको निरंतर स्मरण करे तो पुष्टि मोक्षकी प्राप्ति होय

याहीतें भजनसार ऐसें कह्यो. अब सोई लीला निरूपण करत हें तहां प्रथम युगल स्वरूप बिराजत हें ओर सब व्रजभक्त यथाधिकार सेवा करत हें ता समे दोई स्वरूप परस्पर. **विविधवचनावली** नाना प्रकारके रसोद्‍बोधक वचनामृत ताकी आवली सो परंपरा ता करिकें. अब आवली शब्दतें वचनको मुक्तासादृश्य सूचन कियो ओर. **नेणसेणेंकरी** सो नेत्रकमलकी [५४]साकृतमनोहरचेष्टा तातें. [५५]संगना सो समस्या ता करिकें. **निस** जो रात्री तामे किये जो **विहार** अथवा. करिवेके हें जे विहार तिनको. **सूचवे** सो सूचन करत हे याको भावार्थ स्फुट हे ओर नेनसेने मली ऐसो हु पाठ हे ताको अर्थ ओर टीकामें लिख्यो हे ॥११॥

अब [५६]शृंगार धरत हें ताको वर्णन करत हें.

४९. उत्सवादिकनके भेदसों प्रभुनकी अनेक प्रकारकी लीलानको अनुभव जीवकों श्रीगुसांईजी करावत हें परंतु भजनरूपसार सो स्थिर अंश सब लीलानमें समान रहत हें.

५०. द्विधा सो एक ही पूर्णपुरुषोत्तम अपनी इच्छातें श्रीनाथजी ओर श्रीस्वामिनीजी ये दोय स्वरूप धारण करिकें अनेक लीला करत हें यह बात बृहदारण्यकके पुरुषविध ब्राह्मणमें कही हे तथा नारदपंचरात्रादिकमें हू स्पष्ट लिखी हे.)

५१. विस्तारसूं सो अनेक प्रकारकी लीला करत हें अथवा स्वरूपको विस्तार करिकें लीला करत हें अर्थात् जितनें व्रजभक्त हें ते सब श्रीस्वामिनीजीकेही स्वरूप हें.

५२. यथाधिकार सो अपने अधिकार प्रमाणें ध्यान करे पहिलें बाललीलाको ध्यानकरनो फिर प्रभुनमें दृढ स्नेह होय तब प्रौढ लीलाको ध्यान करनो अधिकार बिना वेसो ध्यान करे तो जीवके दुष्ट स्वभावतें महाअपराध पडिकें मार्गतें पात होय.

५३. साकृत सो जा करिकें अपुने अपुने मनको अभिप्राय सूचित होय ऐसी.

५४. संज्ञा शब्दको अपभ्रंश भाषामें संगना यह भयो यातें संगना सो समस्या यह अर्थ टीकामें कियो.

५५. अब पहिली तुकके पूर्वार्द्धमें श्रीनाथजी ओर श्रीगुसांईजी ये एक ही हें परंतु अपुनी इच्छातें सेव्यसेवकभाव अंगीकार कियो हे यह वर्णन कियो

फेर उत्तरार्द्धमें मंगलाके समयको गुप्त वर्णन कियो ओर जो श्रीअंगमें रति चिह्नके दर्शनतें रात्रिविहार सूचित होत हे इत्यादिक अब तापाछें श्रीगुसांईजी जब शृंगार करत हें माला धरावत हें ताबिरियां जो गुप्तलीला होत हे ताको स्पष्ट वर्णन या तुकमें करत हें सो सब टीकामे स्फुट लिख्यो हे याहीतें छठे आख्यानमें श्रीकृष्ण स्वरूपकी लीला वर्णन करिकें या आख्याननें श्रीवटठलस्वरूपतें जो लीला करी ताको वर्णन करत हें ऐसें टीकामें या आख्यानके आरंभमें लिख्यो हे सो अविरुद्ध हे नही तो युगुलस्वरूपकी लीला तो श्रीकृष्णस्वरूपकी हे ताको वर्णन या आख्यानमें केसे संभवे ओर अप्रस्तुत निरूपण करिवेमे प्रकृतहानि अप्रकृताभ्यागम इत्यादिक दोषहू आवे तासूं जब श्रीगुसांईजी शृंगार करत हें ताबिरियां जो अलौकिकदृष्टिवारेकूं दीसे ऐसी गुप्तभगवल्लीला होत हे ताको या तुकमें वर्णन कियो हे ऐसें भासत हे ओर सौंदर्यनिजहृदगतंप्रकटितं या श्लोकमें जो प्रकार कह्यो हे तासूं श्रीगुसांईजीको स्वरूप उभयात्मक हे तातें कछूभी उपक्रमादि विरोध नांही.

संस्कृत टीका

१२ रत्नमुक्तावली

रत्नमुक्तावली पाटसूत्रें करी ।।
गलसरी शोभिता करे सिंगार ।।
विविधकुसुमावलीग्रथित हाथें करी ।।
एकएकनें कंठे आरोपेहार ।।१२।।

[५७]रत्नामुक्तावली रत्न जे माणिक्यादिक ओर मुक्ताते मोती तिनकी आवली सो समूह ताकी. **पाटसूत्रें करी गलसरी** पाटसूत्र जे रेशमी डोरा तिनतें करी गलसरी सो कंठसरी बनायकें. **शोभिताकरेसिंगार** परस्पर यथाभिलाष समयोचित सिंगार करत हें. अब गलसरी तो उपलक्षण रीतितें कही यातें सब प्रकारके आभरण परस्पर धरावत हें यह सूचन कियो ओर. **विविध** सो नानाप्रकारके वर्णन आकृति ओर सुगंध जिनमें हें ऐसे जे. **कुसुम** ते पुष्प तिनकी. **आवली** हें सो पंक्ति माला वे केसी. **ग्रंथितहाथेंकरी** दोई स्वरूपननें अपुने श्रीहस्ततें गुंथीभई ओर जालीके. **हार** ते एकएकनेंकंठेआरोपे दोई स्वरूप परस्पर श्रीकंठमें धरावत हें याको भावार्थ स्फुट हे ।।१२।।

अब श्रीगुसांईजी पुष्प वस्त्र आभरण [५८]लावत हें ताको अत्यंत रुचिसुं श्रीनाथजी युगल स्वरूपतें अंगीकार करत हें सो वर्णन कियो फेर आप भोग धरत हें सो निरूपण करत हें.

५६. रत्नमुक्तावली या जग्गें विविध मुक्तावली ऐसो हू कोईक टीकामें पाठ हे.

५७. श्रीगुसांईजी श्रीगोकुलते घोडापें बिराजीकें श्रीनाथजीके लिये आभरणवस्त्रादिक बांधिके ले पधारत हें सो पहिलें फूलफेटें भर्यां या तुकमें वर्णन कियो हे.

संस्कृत टीका

१३ विविध मेवा भोग

विविध मेवा भोग मिष्टान रस,
रसमस्या अर्पेते बहुप्रकार ।।
विविध बीडा सुगंध कर्पूर एलची,
लवंग पुंगी अनें खेरसार ।।१३।।

विविधमेवा नानाप्रकारके आले सूके भुंजे पगे मेवा ओर. मधुर. सो दूधघरखांडघरकी सामग्री ओर. **मिष्टान** सो बालभोगकी सामग्री ओर. **रस** सो आंबगंडेरीप्रभृतिके रस. **रसमस्या** ते रसीले पदार्थ चमचातें अरोगीवेके ये सब. **बहुप्रकार** बोहोत प्रकारके. **अर्पे** सो आप भोग धरत हें ओर कहा धरत हें सो निरूपण करत हें. **बीडा** ओर. **विविध** ते नाना प्रकारकी. **सुगंध** सो कहत हें. **कूर्परएलचीलवंगपूगीअनेंखेरसार** कर्पूर सो बरास एलची सो इलायची लवंग सो लोंग **पूगी** सो सोपारी ओर [५९]खेरसार सो काथा गोली ए सब धरत हें यह सब अनोसरके साजको प्रकार हे याको भावार्थ स्फुट हे ।।१३।।

अब अनोसरको साज सब सिद्ध भये पीछें युगलस्वरूप शय्यापें बिराजत हें तासमेके प्रकारको वर्णन करत हें.

---

५८. खादिरसार या संस्कृत शब्दको भाषामें खेरसार यह अपभ्रंश भयो हे याहीतें काथा गोलीको नाम संस्कृतमें खदिरवटी हे ताको भाषामें खेरोडी कहत हें.

संस्कृत टीका

१४ व्यंजन शीतल वायु

व्यंजन शीतल वायु मुकुर करकमल धरि,
देखाडतां मोहे सकलसंसार ।।
एअहर्निश ध्यान विटठलाधीशनूं,
सकल कलिमल दुरितकोटि क्षार ।।१४।।

अब उहां व्रजभक्त. **व्यंजनशीतलवायु** व्यंजन जे पंखा ते करत हें वे केसे पंखा हें. शीतलवायु जिनतें शीतल सो ठंडो पवन आवत हे. अब शीतल यह विशेषण उपलक्षणरीतितें कह्यो यातें शीत मंद सुगंध त्रिविध वायु स्वाभाविक विनतें आवत हे यह सूचन कियो ओर. **मुकुरकरकमलधरिदेखाडतां** मुकुर सो आरसी हस्तकमलमें लेकें परस्पर दोंऊस्वरूप दिखावत हें तासमें. **मोहेसकलसंसार** मोहे सो मोहित होत हें ते कोन सो कहत हें सकल कला जो कामशास्त्रोक्त कला. अथवा. चोसठ कला तिनकरिकें युक्त ऐसे ओर संसार [६१]सं सो सुंदर सो हंसजेसी गजजेसी हे सार सो गति जिनकी ऐसे व्रजभक्त ते मोहत हें याको फलितार्थ यह जो वासमेकी युगल स्वरूपकी शोभा देखिकें सब व्रजसुंदरी हू मोह पावत हें तातें वह अनिर्वाच्य शोभा हे. अथवा. **सकल** जो चंद्र ताको संसार सो सुंदर गती सो. **मोहे** सो [६२]स्थिर होत हे याको भावार्थ यह जो वासमेकी शोभा देखिकें चंद्र हू स्थगित होत हे क्यों [६३]जो निष्कलंकचंद्रजेसी गोल आरसी ओर वामे दो निष्कललंकचंद्र जेसे चंद्र स्थिर होत हे. अब ऐसे स्वरूपके ध्यानको फल निरूपण करत हें. **ए** सो जा रीतको निरूपण कियो ऐसो जो. **अहर्निशध्यान** रात्रिदिवस ध्यान सो कोनको. **विटठलाधीशनूं** सो श्रीगुसांईजीको. अथवा. ज्ञान रहित जे निःसाधनजन तिनपे अनुग्रह करिवेवारे श्रीयमुनाजी प्रभृति तिनके अधीश ते पति श्रीनाथजी तिनको सो ध्यान केसो हे सो कहत हें. **सकलकलिमल दुरितकोटिक्षार** सकल सो सब कलिजो कलियुग ताके मल सो मलरूप जे पाखंडमत तथा [६४]अन्या-श्रयादिक तातें भये जे दुरितकोटि सो असङख्यात पाप तिनको क्षार सो [६५]धोयवेवारे. अब क्षारे ऐसें कह्यो यातें पापकों [६६]पंकरूपत्व ओर भगवत्ध्यानकों अमृतरूपत्व सूचन कियो ओर इनतुकनको ओर हू [६७]अर्थ हे सो ओर टीकानमें लिख्यो हे याको भावार्थ स्फुट हे ।।१४।।

अब सौंदर्य निरूपणपूर्वक व्रजभक्तनको सुखदातृत्व निरूपण करत हें.

५९. या तुकके पूर्वार्द्धको वींझणेवायुशीतलकरेकमलकरमुकुरदेखाडतांमोहेसर्व संसार ऐसो हू पाठ कहींक दीखत हे ओर उत्तरार्द्धमें अहर्निशध्यान श्रीविटठलअभिधानसकल ऐसो पाठ ओर टीकामें हे.

६०. सं उपसर्गको अर्थ सुंदर संस्कृतमें प्रसिद्ध हे ओर सुगतौ या धातुको घत्रंशब्द सार भयो हे तातें गती यह अर्थ कियो.

६१. भगवल्लीला देखिके चंद्र स्थिर रहत हे सो कीर्तनमें चंददेखिबिथकित रह्यो हरिनारीवेमोहेनाद इत्यादि अनेक जग्गें गायो हे याहीतें पंचाध्यायीके श्रीसुबोधिनीजीमें चंद्रमाकी मधयआकाश पर्यंत गति लिखी हे.

६२. जो चंद्रमामें कारो कारो दीसत हे ताको कलंक कहत हें ओर वासों रहित सो निष्कलंक.

६३. अन्याश्रयादिक इहां आदि शब्दतें भिन्नाश्रय वगेरे लेने भिन्नाश्रयादिकको स्वरूप श्रीगुसांईजीनें कथायमास्तेकथिताः या श्लोकके उपर स्वंतत्र लेखमें लिख्यो हे तथा निबंधमें हू हे.

६४. भगवत्ध्यान सब पापनकों धोयके बुद्धिकों निर्मल करत हें सो श्रीभागवतमें यदंघ्र्यनुध्यानसमाधिधौतयाधियानुपश्य तिहितत्वमात्मनःइत्यादि स्थलनमें कह्यो हे.

६५. पंक सो कीच ओर पंक ऐसो पापको हू नाम हे अस्त्रीपंकंपुमान्पाप्मा यह अमरकोशमें कह्यो हे ओर अमृत ऐसो जलको हू नाम हे यातें टीकामें पापको पंक रूप कहे ओर ध्यानको अमृतरूप कहे.

६६. दूसरी टीकानमें यह अर्थ लिख्यो हे जो पहिली तुकमें शृंगारको वर्णन कियो फेर विविधमेवाभोग या तुकमें भोग धरिवेको तथा बीडी अरोगायवेको वर्णन कियो अब या तुकमें दर्शन होतमें श्रीगुसांईजी प्रभुनकों पंखा करत हें तथा आरसी दिखावत हें ताबिरियां दोउ स्वरूपनकी शोभा ओर परस्पर प्रेम देखिकें सब जगत् मोहतहें अब यारीतको श्रीनाथजीको ओर श्रीगुसांईजीको अहर्निश मनमें ध्यान तथा मुखमें श्रीविटठल यह अभिधान सो नाम ये दोई जीवनके कलियुगसम्बन्धी सब दोष ओर सब पाप दूर करत हें ऐसें अर्थ ओर टीकामें लिख्यो हे परंतु इनतुकनको गुप्त मुख्य अर्थ नही लिख्यो तातें या टीकामें मुख्य अर्थ ही लिख्यो हे.

संस्कृत टीका

१५ एप्रभु भुवि प्रगट

एप्रभु भुवि प्रगट विप्रवरतनधरी,
डीठडे त्रिभुवनचित्तचाले ।।
हावभावादिक कोटिकोटिककरे,
मदनजुरविथाते वेगें टाले ।।१५।।

अब. **ए प्रभु**

ते ये श्रीगुसांईजी. अब प्रभुशब्द कह्यो यातें [६८]कर्मजन्यदेहको निराकरण कियो. अब इनने. **भुवि** सो पृथ्वीकेविषें. **प्रगट** सो प्रत्यक्ष. [६९]विप्रवरतनुधरी सो आचार्यस्वरूप धारण कियो ओर तनुशब्दतें वंश विस्तारकत्व सूचन कियो. अथवा. **ए प्रभु** ते नित्यलीलाविशिष्ट पुरुषोत्तम तिननें. **भुविप्रगट** [७०]भू जो सृष्टिको उत्पत्तिस्थान अक्षरब्रह्म लीलास्थान ताके विषें प्रगट सो अभी मोकों प्रत्यक्ष दर्शन होत हें तेसी. **तनु** सो स्वरूप. धरी. सो धर्यो. अब प्रभुनको अनेकलीला विशिष्ट अनेकरूप हें तामे कोनसो स्वरूप धर्यो सो कहत हें. [७१]विप्रवर विशेषकरिकें व्रजभक्तनकी रमणेच्छा पूरणकरिवेवारी ऐसी जो वरतनु सो नायक स्वरूप सो धर्यो. अब [७२]तनुशब्दतें लौकिकेंद्रियतें अग्राह्यपनो ओर अनेकरूप धरिकें अनेक व्रजभक्तनके मनोरथ पूर्ण करत हें यह सूचन कियो हे ओर गोपालदासजीकों वा समें वास्वरूपके दशर्न भए यातें गोपालदासजीके सब इंद्रिय अलौकिक भये यह हू सूचित भयो ओर धरी ऐसें कह्यो याते षडभावविकारको निराकरण भयो क्यों जो [७३]षडभावविकार तो कर्मतें जाको देह उत्पन्न होय ताकों होय सो इहां नही हे तातें अब वह स्वरूप केसो हे सो

कहत हें. **डीठडे** सो वा स्वरूपके दर्शन कियेतें. **त्रिभुवनचित्तचाले** तीनो भुवनके चित्त चलायमान होय. अब त्रिभुवन ऐसें कह्यो परंतु जाति तथा व्यक्ति नही कही यातें प्राणीमात्रको चित्त चले ऐसो वह स्वरूप हे यह सूचन कियो. अब चालेछें ऐसें नही कह्यो ओर चाले ऐसें ही कह्यो यातें कदाचित प्राणीमात्रकूं ये स्वरूपके दर्शन होय तो सबनकों प्रेमलक्षणा भक्तितें अलौकिक भाव सिद्ध होयकें विरहार्थ चित्त होय परंतु लौकिकेंद्रियतें या स्वरूपके दर्शन नहीं होय यह सूचन कियो अब या स्वरूपको लौकिकेंद्रियतें अग्राह्यत्व निरूपण करिकें अलौकिकेंद्रिय ग्राह्यत्व निरूपणपूर्वक व्रजसुंदरीनको मनोरथपूरकत्व निरूपण करत हें. अब युगल स्वरूपके दर्शन करिकें मोहित होयकें सब व्रजसुंदरी. **हावभावादिककोटिकोटिककरे** हावभाव जे मनोहर कामचेष्टा ते कोटिकोटिक ते अनेक प्रकारके करत हें फेर प्रभु प्रसन्न होयकें विनकी. **मदनजुरविथातेवेगेंटाले** मदन जो काम तारूपी जो ज्वर ताकी विथा सो व्यथा पीडा. **ते** सो वाकूं वेगें टाले बेग [७४]निवृत्त करत हें सो मनोरथ पूर्ण करत हें याको भावार्थ स्फुट हे ।।१५।।

अब या रीततें सब व्रजसुंदरी सर्वदा प्रभूनके समीप रहत हें ओर प्रभु विनके सर्व मनोरथ पूर्ण करत हें तो हू आपकी दर्शनेच्छा विनकी पूर्ण नहीं होत हे ऐसे मनोहर प्रभु हें सो निरूपण करत हें.

६७. प्रभु सो समर्थ हे तातें जेसें जीव अपुने आछे बुरे कर्मके आधीन होयकें आछो बुरो देह पावत हें तेसें इहां नहि अपुनी इच्छातें ही स्वरूप धरत हें.

६८. विप्र सो वेदाभ्यासी ब्राह्मण क्यों जो वेदाभ्यासाद्भवेद्विप्रः ऐसो निरुक्त हे तिनमें हू वर सो श्रेष्ठ इतने आचार्य याहीतें विप्रवरतनु सो आचार्यस्वरूप यह अर्थ कियो ओर तनुविस्तारे धातुमेंतें तनुशब्द भयो हे तातें वंशविस्तारको अर्थ कियो या पक्षमें पोनीतुकको अर्थ लिखतहुं डीठडेत्रिभुवनचितचाले आपके दर्शनमात्रतें तीनलोकनके चित्त संसारवासनातें दूर होत हें सो ही श्रीभागवतमें भिद्यते हृदयग्रंथिश्छिद्यंते सर्वसंशयाः क्षीयंतेचास्यकर्माणिद्दढएवात्मनीश्वरे या श्लोकमें कह्यो हे ओर कठवल्लीप्रभृति उपनिषदनमें हू यह स्फूट हे ता पीछे हावभावादिकनको कोटिकोटिककरे हाव सो हो भगवद्विरुहृतापकरिके जीवनके देहेन्द्रियादिकनको प्रभुमें विनियोग याही अभिप्रायतें अष्टादशाक्षरगोपालमंत्रमें स्वाहापद कह्यो हे ओर भावादिक सो भगवद्भाव भगवत्सेवा प्रभुनमें अनेक मनोरथ सिद्ध करत हें फेर मदनजुरबिथाते वेगे टाले मदन तो उपलक्षण रीतिते कह्यो याते कामक्रोधादिरूप सब पीडा आप दूर करत हें अथवा मदनजुरविथा सो अलौकिकभावनातें भगवदविषयककामसंतापकी पीडा ताको आप भगवल्लीलानुभव करवायके मिटावत हें ओर वास्तविकरीतसूं तो या तुकमे युगलस्वरूपकी

लीलाको वर्णन हे सो टीकापें विस्तारसुं लिख्यो ही हे.

६९. संस्कृतमें भवत्यस्मादिति भूः ऐसी हू कहींक भू शब्दकी व्युत्पत्ति करी हे ओर भू ऐसो पृथ्वीको नाम हू हे यातें उत्पत्तिस्थान ओर लीलास्थान यह भू शब्दको अर्थ कियो.

७०. विप्र शब्दकी विशेषण विपर्त्तीति विप्रः ऐसी व्युत्पत्ति करिकें रमणेच्छापूरण करिवेवारे यह अर्थ कियो.

७१. तनुशब्द सूक्ष्मवाची हू हे यातें जेसें परमाणुप्रभृति अतिसूक्ष्मपदार्थ लौकिक इंद्रियतें दीखत नाहीं तेसें भगवत्स्वरूप हू लौकिकइंद्रियनतें अनुभवमें आवत नाही ओर तनुधातुको अर्थ विस्तार हे तातें अनेकस्वरूप हे ऐसे हू सूचित भयो याहीतें टीकामें तनुशब्दको भावार्थ लिख्यो सो यथार्थ हे.

७२. प्राकृत शरीरादिकनके छ विकार होत हे पहिलें उत्पत्ति १. ता पीछें कछू स्थिति. २. फेर वृद्धि सो बढ़नो. ३. फेर विपरिणाम सो अवस्था बदलनी केशादिकनको रंग बदलनो. ४. पीछे अपशयसो वामेसुं कचू भाग क्षीण होनो. ५. फेर नाश. ६. इन छह विकारनकों शास्त्रमें षडभावविकार कहत हें ये सब भगवत्स्वरूपमें नाहीं क्यों जो प्रभु तो अपुनी इच्छातें ही स्वरूप धरत हें.

७३. प्रभु यह आर्ति निवृत्त करत हें सो श्रीभागवतमें तद्दर्शनस्मररूजस्तृणरूषितेनलिंपंत्यआननकुचेषुजहुस्तदाधिं इत्यादि स्थलमें श्रीसुबोधिनीजीमें प्रसिद्ध हे.

संस्कृत टीका

१६ जालरंध्रे सखी

जालरंध्रे सखी जाणें चित्रें लखी
वांछित नाथनी छबि निहाले ।।

कमल खंजन मीन मधुप ज्यांहां त्यांहां थकी
वक्रलोचन प्रांत पाछां वाळे ।।१६।।

अब जा समें युगल स्वरूप एकांतमें बिराजत हें ता समें कितनेक व्रजभक्तनकों प्रभुनके दर्शनकी अत्यंत इच्छा होत हे तब. **जालरंध्रे** शय्या मंदिरमे पवन ओर प्रकाश आयवेके लियें नाना प्रकारकी सुंदर जाली हें तिनके रंध्र जे छिद्र तिनमेंतें. **सखी** ते व्रजभक्त ते. **वांछितनाथनीछबिनिहाले** [७५]वांछितनाथ ते मनभावतें पति ऐसे जे प्रभु तिनकी छबि सो सौंदर्य शोभा ताकों निहाले सो वारंवार [७६]देखत हें ता समें व्रजभक्तनकी केसी व्यवस्था होत हे सो कहत हें. **जाणेंचित्रेंलखी** प्रभुनके दर्शनतें मोहित होयकें चित्रजेसें स्थिर होत हें तेसें स्तब्ध होय जात हें. अब चित्रें लखी ऐसें कह्यो यातें व्रजभक्तनको सौंदर्य ओर जालरंध्रकों अधिक शोभायुक्तत्व ओर प्रभुनके दर्शनमें तत्परपनो सूचन कियो. अब विन व्रजभक्तनकी अत्यंत आर्त्तता जानिकें जालरंध्रमें कटाक्षपूर्वक प्रभु देखत हें ताको निरूपण करत हें. **कमल** सो श्याम अथवा लाल कमल. **खंजन** सो अतिचंचल एक तरहको पक्षी. **मीन** सो मच्छ. **मधुप** सो भ्रमर ये सब नेत्रके उपमान हें तिन सबनको. **वक्रलोचनप्रांत** वक्रलोचन सो बांकी दृष्टि ताके प्रांत सो कटाक्ष. अथवा चक्र ऐसे जे लोचनप्रांत सो कटाक्ष ते. **ज्यांहांत्यांहांथकी** ज्यांहांतांहांतें. **पाछांवाले** सो पीछे फिरावत हें याको भावार्थ यह जो प्रभुनके कटाक्षकी उपमालायक हूं ये पदार्थ नही हें. अब लाल रेखा ओर सजलपनो सूचन करिवेके लियें कमलकी उपमा ओर चपलता सूचन करिवेके लियें खंजनकी उपमा ओर [७७]आकृति सादृश्यतें मीनकी उपमा ओर श्यामवर्णतें गोल आकृतितें नेत्रका कनीनिकाकों भ्रमरकी उपमा भावार्थ स्फुट हें ।।१६।।

या रीत [७८]षोडशकलापूर्ण जे श्रीपुरुषोत्तम तिनको लीला सहित सोल्हे-सोल्हे तुकतें निरूपण करिकें. अब या लीलास्वरूपके दर्शन केसें भये ताको हेतु आधी तुकतें कहिकें कडवा समाप्त करत हें.

---

७४. वांछितनाथ या जग्गें वांछितानाथ ऐसें हू कितनेक कहत हें ताको अर्थ वांछिता जो सब व्रजभक्तनके मनोवांछित श्रीस्वामिनीजी तिनके नाथ जो प्रभु तिनकी शोभा वे सब देखत हें वांछितनाथ ऐसें कह्यो तातें दोई स्वरूपनकी लीलाको दर्शन करत हें यह सूचन कियो ओर वांछिता शब्दतें परम आसक्तितें वे देखत हें विनको इर्ष्यादिक कछू नाही यह सूचन कियो तथापि नंदगोपसुतदेविपर्तिमेकुरूतेनमः इत्यादि श्रीभागवत वचनके अनुकूल वांछितनाथ यह

पाठ हे तातें टीकामें यह ही लिख्यो.

७५. या आख्यानमें श्रीगुसांईजीको वर्णन हे तामें जालरंध्रतें सखी प्रभुनके दर्शन करत हें यह वर्णन कियो तातें छ महिनाताई श्रीगुसांईजी परासोलीमें बिराजे तब पिछाडी जालियामेंते श्रीनाथजीके दर्शन आपकूं होत हते इत्यादि वार्ता गुप्त रीतिसों सूचन कीनी.

७६. नासिकाके पासको नेत्रको कोनो मत्स्यके मुखके ठिकाने ओर श्रीकर्णके पासको नेत्रको कोनो मत्स्यके पुंछके ठिकानें हे ओर जेसें मत्स्य लंबे होत हे तेसें नेत्र हू दीर्घ हें ओर मत्स्य जेसे जाडो होय तेसें नेत्र हू उहडहे हें तातें नेत्रकी ओर मत्स्यकी आकृति सद्दश भयी.

७७. कनीनिका सो नेत्रकी तारा जाकों कीकी कहत हें सो.

७८. पुरुषोत्तम षोडशकलापूर्णह्निं यह बात छांदोग्य उपनिषतकी श्वेतकेतुविद्यामें तथा अथर्व वेदकी प्रश्नोपनिषन्मे तथा ओर हू उपनिषदनमें स्फुट लिखी हे.

संस्कृत टीका

१७ दासनो दास भणे

दासनो दास भणे सकल सज्जन सुणे
श्रीविटठल आपनो विरह पाले ।।१७।।

।। इति श्रीगोपालदासजी विरचित सप्तमकडवासमाप्त ।।

दास जो भायला कोठारी तिनको. [८०]दास में गोपालदास सो. **भणे** सो कहत हुं. अब में कहत हूं सो. **सकलसज्जनसुणे** सकल ते सब. अथवा. सर्वकलाकरिकें युक्त ऐसे ओर. [८१]सत् सो नित्य जे प्रभु तिनके. **जन** ते भक्त ते. **सुणे** सो सुनत हें यातें में जो कहुंगो सो अणुंमात्र हू अप्रामाणिक हे नही यह सूचन कियो. अब कहा कहनो हे सो कहत हें. **श्रीविटठलआपनोविरदपाले** श्रीगुसांईजी आपको विरद जो विरुद प्रतिज्ञा पाले सो पालन करत हें. अथवा. श्री जे श्रीस्वामिनीजी ओर विटठल श्रीपुरुषोत्तम ये युगल [८२]स्वरूप आपको बिरद जो [८३]निःसाधनजनहितकरनो ताकों पालत हें याको भावार्थ यह जो परमकृपापात्र भायलाकोठारी तिनकी कानतें श्रीविटठल यह विरुद युक्त करिवेकेलियें युगलस्वरूपकी लीलाके मोकुं दर्शन कराये नही तो मोकों यह दर्शन कहांते यह वार्ता अणुमात्र हु मिथ्या नही हे याको [८४]भगवदीय सब साक्षी हें ओर आधीतुकतें कडवा समाप्त कियो यातें मोकों युगल स्वरूपके दर्शनमात्र भये या लीलामें अभी प्रवेश नही भयो हे यातें आधो फल प्राप्त भयो यह सूचन कियो ।।१७।। [८५]सप्तमे विटठलेशानांसेव्यसेवकभावतः. शिक्षणंमूलरूपंचलीलाभिर्विनिरूपितम् ।।७।।

।। इति श्रीमद्बालकृष्णचरणैकतानश्रीमद्गोवर्द्धनगुरुपादपद्मपरागप्राप्त परमोदयश्रीमद्गोकुलोत्सवात्मजजीवनाख्येनविरचितं सप्तमाख्यानस्य-व्याख्यानं समाप्तम् ।।

७९. इहां दासके दासपनो गोपालदासजीने अपुनो कह्यो हे यातें प्रभु अवश्य तुरत मोपें कृपा करेंगे यह सूचन कियो क्यों जो भगवद्भक्तके दासभावते भगवान् बहुत प्रसन्न होत हें सो श्रीभागवतपांडवगीतादि अनेक ग्रंथनमें दासानुदासो भवितास्मिभूयः त्वद्दभृद्रत्यभृत्परिचारकभृत्य भ्रत्यस्यभृत्यइतिमामवलोकनाथ इत्यादिस्थलनमें दिखायोहे.

८०. सत् ऐसो नित्यको नाम हे ओर याहीतें प्रभुनको हू नाम हे सो गीताजीमें सदभावेसाधुभावेय तथा ओंतत्सदितिनर्देशोब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः

इनश्लोकनमें कह्यो हे ओर सकलमज्जन सर्वकलासहित जे पुरुषोत्तम तिनके सज्जन सो पुष्टिमार्गीयभक्त ऐसो हू अर्थ कहत हें ता पक्षमें टीकामें सोलहतुककी सङख्याको जो प्रयोजन लिख्यो सो इहां मूलमें पुरुषोत्तमवाचक सकलशब्दतें सूचन कियो.

८१. विरुद्ध सो पुराणादिकनमें गायो ऐसो आपको यश जैसें परमकृपाल हें सत्यप्रतिज्ञ हें इत्यादि.

८२. निःसाधनजनको आप अंगीकार करत हे याहीतें अपुनो श्रीविटठल यह नाम रूप जो विरुद ताको आप यथार्थ पालत हें क्यों जो विद् सो ज्ञान ता करिकंठ सो रहित इतनें निःसाधन तिनकों ल सो अंगीकार करिवेवारे सो श्रीविटठल कहिये.

८३. भगवदीय सबसाक्षी हे यह सकलसज्जनसुणे याको तात्पर्यार्थ कह्यो.

८४. अब या रीतसों गोस्वामिश्रीजीवनजीमहाराज सप्तमाख्यानको व्याख्यान करिके या आख्यानको सब अर्थ संक्षेपसों एक श्लोकमें कहत हें ता श्लोकको अर्थ या सातमें आख्यानमें श्रीपुरुषोत्तम आप ही श्रीनाथजी स्वरूपसों सेव्य ओर श्रीगुसांईजीस्वरूप. सो सेवाकरिवेवारे होयकें जीवनकों अपुनी सेवा सिखावत हें सो विशेषकरिकें वर्णन कियो ओर श्रीगुसांईजीको मूलरूप जो युगलस्वरूप तिनको हू लीला सहित वर्णन कियो अब या आख्यानके अर्थ को दोहा सिखयीसेवाआपकरि हरिधरिविटठलरूप, कहिसप्तम आख्यान फिर लीलाजुगलसरूप.)

।। इति श्रीमद्वल्लभाचार्यमतवर्तिनामो क्षगुरुस्वमातामहगोस्वामिश्रीव्रजवल्लभचरणैक्तानेनस्वपितृसकाशादेवलब्धविद्येनगोवर्द्धनाशुकविनाकृतं सप्तमाख्यानव्याख्यान टिप्पणं संपूर्ण ।।

सिखरी सेवा आप करि, हरि धरि विटठल रूप,
कहि सप्तमाख्यान फिर, लीला जुगल स्वरूप ।।

संस्कृत टीका

अष्टमाख्यान

१ ललित मनोहर

अब सप्तमाख्यानमें श्रीगोकुलतें गिरिराजजी पधारिकें नित्य श्रीगोवर्द्धनधरकी सेवा आप भक्त शिक्षार्थ करत हें यह निरूपण द्वारा परमस्नेह [१] दोईस्वरूपनको परस्पर हे यह निरूपण कियो फेर दोईस्वरूपके सेव्यसेवकभाववर्णनतें द्वैतशंका होत हे ताके निवारणके लियें नंदनंदन स्वरूपतें जो आपकी अनोसर समयकी लीला ताको निरूपण कियो तथा या लीलाके ध्यानको फल ओर माहात्म्य [२]निरूपण कियो. अब अष्टमाख्यानमें श्रीविटठलावतारकी लीला निरूपणपूर्वक श्रीगोकुलमें श्रीनवनीतप्रियजीकी सेवा आप परमप्रेमतें जीवशिक्षार्थ करत हें सो निरूपण करत हें. रागधन्याश्री. अब या आख्यानको जे गान करेंगे ओर तदनुसार गान करेंगे ते धन्य हें यह सूचनार्थ धन्याश्री रागमें याको गान कियो.

ललित मनोहर श्रीवल्लभसुवन सुजाण ।।
नखशिकसुंदर व्रजजनजीवनप्राण ।।१।।

ललित ते सुंदर ते हू सामान्य ही. **मनोहर** चित्त हरण करें ऐसे ओर केसे. **सुजाण** सो सर्व विद्याके कलाके निधान ओर भक्तकी सेवाके हू

जानिवेवारे. अब ऐसे कोन सो कहत हे. **श्रीवल्लभसुवन** श्रीवल्लभाचार्यजीके पुत्र श्रीगुसांईजी आप. अब सुवन कहे यातें लौकिकजीवतुल्य होयगें या शंकाको निवारण करिवेकों नंदनंदन आप हें सो कहत हें. **नखशिखसुंदर** चरणारविंदके नखतें लेकें केशपर्यंत सुंदर ऐसे जे **व्रजजन.** ते व्रजसुंदरी तिनके **जीवनप्राण.** ते अत्यंत प्रिय अथवा. **ललित** जे व्रजसुंदरी तिनके मनकों हरण करिवेवारे ओर. श्री. जे श्रीस्वामिनीजी तिनके. वल्लभ. ते पति. अब व्रजसुंदरीप्रभृतिलीलासामग्रीमें द्वैत भासत हे ताको निवारण करत हे. **सुवन** सो [३]स्वरूपाभिन्नलीलासृष्टिके उत्पन्न करिवेवारे सोई [४]वेदमें तथा तत्वदीपके विषें श्रीमहाप्रभुननें कदाचित्सर्वात्मात्मैवभवतीहजनार्दनः या स्थलमें स्फुट निरूपण कियो हे ओर आप केसे हें. **सुजाण** विविध भोगचतुर येही विशेषण पुरुषोत्तमको [५] ब्रह्मवल्लयुपनिषदमें कह्यो हे. अब केवल [६]मनोहरत्व तो मंत्रादिकनतें हू होत हे ताके निवारणार्थ सौंदर्य्यनिरूपण करत हे. **नखशिखसुंदर** सर्वांगसुंदर ओर केसे. **व्रजजन जीवन प्राण** व्रजजन जे सखीजन ताके जीवन जो चारों यूथाधिपति श्रीस्वामिन्यादिक तिनके प्राण ते अनन्यप्रिय. अथवा. **ललित** जे श्रीगोवर्द्धनधर तिनके. **मनोहर** सो चित्त हरिवेवारे ऐसे ओर. **श्री** जे स्वामिनीजी तिनके. **वल्लभ** सो प्रिय क्यों जो अत्यंतसेवातें दोईस्वरूपनकों आप रिझावत हें याहीतें. **सुवन** ते पुष्टिमार्गके प्रगटकरिवेवारे क्यों जो षुंङ् प्रसवार्थकधातुको सुवन शब्द हे ओर आप केसे हें. **सुजाण** अलौकिकज्ञानवारे यातें भक्तनको सेवाशिक्षकत्व पुष्टिमार्गाचार्यत्व ज्ञानदातृत्व सूचन कियो ओर आप केसे हें. **नखशिखसुंदर** अत्यंत सुंदर ओर केसे हें. **व्रजजनजीवनप्राण** जन जे दैवीजीव तिनके व्रज जे समूह तिनके जीवन जे श्रीमहाप्रभुजी तिनके प्राण सो अत्यंत प्रिय पुत्र याको भावार्थ स्फुट हे ।।१।।

अब सौंदर्य निरूपण करिकें तेजको निरूपण करत हें.

(१. दोईस्वरूप सो श्रीनाथजी ओर श्रीगुसांईजी इनको परस्पर अत्यंत स्नेह हे सो ही गोविंदस्वामिप्रभृतिवैष्णवननें ऐसी प्रीतकहु नहिदेखी इत्यादि कीर्तननमें गायो हे.

२. ध्यानको फल तथा माहात्म्य ऐ अहर्निशध्यान इहांते लेकें निरूपण कियो.

३. स्वरूपाभिन्नलीलासृष्टि सो नित्यलीलामें वन, नदी, वृक्ष, प्रभृति तथा पशु पक्षिप्रभृति सब पदार्थ भगवत्स्वरूपतें जुदे नही हे सब भगवद्रूप ही हे.

४. वेदमें सो बृहदारण्यकादि उपनिषदनमें पुरुषविधब्राह्मणादिस्थलनमें नित्य लीलासृष्टि कहीके ओर तत्वदीपशास्त्रार्थप्रकरणमें छ प्रकारकी सृष्टि लिखी हें तामें कदाचित्सर्वमात्मैव या कारिकामे पुरुषोत्तम आप ही लीलामें नदीवृक्षादिरूप होत हें या सृष्टिमें आनंदांशतिरोभावादिक नाहीं ऐसें नित्यलीलासृष्टि कही हे.

[५] ब्रह्मवल्लीउपनिषतके प्रथम मंत्रको विपश्चित् शब्द हे ताको अर्थ आनंदमयाधिकरणके भाष्यमें ऐसे ही लिख्यो हे.

[६] कितनेक वशीकरणादिकनके ऐसे मंत्र हे जिनतें आप सुंदर न होय तो हू ओरके धनको हरण करि सके तेसें इहां नहीं.

संस्कृत टीका

२ वदनकांति जाणे

वदनकांति जाणे उदया कोटिक भाण ।।
द्विजकुलमंडल प्रगटया पुरुष प्रमाण ।।२।।

वदनकांति सो श्रीमुखको तेज सो केसो. **जाणेउदयाकोटिकभाणं** मानों कोटि भानु सो अनेक सूर्य उदया सो उदयभये. अब सूर्यकी उपमा दीनी यातें [७]भक्तहृदयाब्जविकासकत्व अज्ञानांधकारनाशकत्व [८]उलुकसद्दशपाखंडिजनकों गतिहीन कर्तृत्व इत्यादिक अनेक अभिप्राय सूचन किये ओर आप केसे हें. **द्विजकुलमंडन** द्विज जे ब्राह्मण तिनको कुल सो तैलंग कुल ताके मंडन ते आभरण रूप. **प्रगटया** ते प्रगट भये ते कोन सो कहत हें. **पुरुषप्रमाण** प्रमाण जो वेद तद्रूप पुरुष याको भावार्थ यह जो तैलंगकुलको शोभा करिवेके लियें ओर यथार्थ वैदिकमत स्थापन करिवेके लियें साक्षात् वेदस्वरूप आप प्रगट भये ।।२।।

अब तेजको निरूपण करिकें नाममाहात्म्य निरूपण करत हें.

७. जेसें सूर्य कमलको विकास करत हें तेसें आप भक्तनके हृदयकमलको विकास करत हें.

८. उसूक सो घुघु वे जेसें सूर्योदय भयेतें अंध होय जात हे तातें चलिसकत नहि तेसें पाखंडमतवारे हू आपके आगें अंधजेसे होय जात हें तातें पाखंडमतप्रवृत्तिकरिसकत नांही अब इन दोय तुकनमें सुजानशब्दतें सर्वज्ञ ओर सबनके मन हरण करिवेवारे सर्वांगुसंदर सबनकों जीवायवेवारे पूर्ण पुरुषोत्तम आप प्रगटे हें यह कह्यो ओर जेसें गीताजीमें दिविसूर्य सहस्त्रस्यभवेद्युगपदुत्थिता या श्लोकमें अनेकसूर्यनकी कांतिजेसो प्रभुनको तेज हे यह कह्यो तेसें इहां हू वदनकांति जाणेउदयाकोटिक भाण यह कह्यो यातें इन दोय तुकनमे ऐश्वर्यगुणनको वर्णन कियो भगवानके ऐश्वर्य वीर्य यश, श्री, ज्ञान, वैराग्य यह छ गुण मुख्य हे ओर या आख्यानमें ध्रुवपदकी बारह तुक हे तिनमेतें दोय दोय तुकनमें एक एक गुणको वर्णन कियो हे सो आगें टीकामें स्फुट होयगो.

संस्कृत टीका

३ नाम ते निरुपम

नाम ते निरुपम उच्चरे सकल कल्याण ।।
तेना साखी चारे वेद पुराण ।।३।।

ते सो वह प्रसिद्ध श्रीविटठल ऐसो नाम वह केसो हे. **निंरूपम** सो जाकों उपमा नहीं हे सोई कहत हें. **उच्चरेसकलकल्याण** उच्चरे उच्चार कीयेतें सकलकल्याण सर्व प्रकारतें शुभ होय. अथवा. **सकल** ते सर्व. **कल्याण** ते शुभभक्तजन ते. **उच्चरे** सर्वदा उच्चार करत हें. अथवा. उच्चरे. सो उच्चार करे

तो. **सकल** सो [९]तेजोविशिष्ट होय ओर. **कल्याण** सो [१०]पर्यवसानमें वाको मोक्ष होय याहीतें निरूपण ऐसें कह्यो अब यह तुम कहत हो सो यथार्थ हे तामे प्रमाण कहा सो कहत हें. **तेनासाखी** तेना सो में कहत हूं ताके साखी ते साक्षी. **चारेवेदपुराण** चारों वेद तथा पुराण अब चार वेद कहे परंतु पुराणकी सङ्ख्या नही कही यातें [११]साक्षात् भगवत्प्रतिपादक श्रीमद्भागवतादिक सारभूत सात्विकपुराण ते साक्षी हें यह सूचन कियो याको भावार्थ यह हे जो श्रीविटठल ऐसो नाम निरंतर प्रेमपूर्वक उच्चार करे तो सर्वकार्य सिद्ध होय यह वार्त्ता वेदपुराणमें प्रसिद्ध हे ॥३॥

ऐसें नाममाहात्म्य निरूपण करिकें. अब स्फुट वीर्यनिरूपण करत हें.

[९] सकल सों कलासहित इतनें तेजोयुक्त होय यह अलौकिकतेज ब्रह्मज्ञान परम चिह्न हे सो निबंधमें कह्यो हे सर्वज्ञत्वंचतस्येष्ट लिंग तेजोप्यलौकिक याही अभिप्रायतें इहां टीकामें तेजको अर्थ कियो.

[१०] पर्यवसानमें सो प्राकृतदेह छूटे पीछे मोक्ष होय.

[११] कितनेक पुराण भगवनाके अंशरूप ऐसे जे ओर देवता तिनको वर्णन करिके परंपरासम्बन्धतें प्रभुनको वर्णन करत हें ओर श्रीभागवतप्रवृत्ति वैष्णवपुराण तो साक्षात् भगवानको ही प्रतिपादन करत हें ओर अठारहपुराणनमें छ पुराण सात्विक हें छ राजस हें ओर छ तामस हें यह बात पद्मपुराणके उत्तरखंडमें महादेवजीने पार्वतीजीकों कही हे तहां श्रीभागवत सात्त्विकपुराणनमें गिन्यो हे.

संस्कृत टीका

४ असुर हणेवा

असुर हणेवा ब्रह्मवाद करपाण ।।
भक्ति करे सहु वाजंते रे निसाण ।।४।।

असुर जे आसुरमत ताको. **हणेवा** सो नाश करिवेकेलिये. [१२]ब्रह्मवादकरपाण ब्रह्मवाद जो वेदांत तारूपी करपाण सो कृपाण जाकों भाषामें खांडा कहत हें सो शस्त्र याको फलितार्थ यह जो वैदिक सिद्धांतानुसार सर्व आसुरमतनको खंडन आपनें कियो याहीतें. **भक्तिकरेसहुवाजंतेरेनिसाण** सहु सब वैष्णव निसान जो घोसा सो बजायकें भक्ति करे सो सेवा नाम स्मरण निःशंक करत हें ।।४।।

अब [१३]वीर्यनिरूपण करिकें यशको निरूपण करत हें.

१२. ब्रह्मवादकरपाण या जग्गें ब्रह्मवादकरीवखाण ऐसो हू पाठ कितनेक कहें हे ओर उत्तरार्द्धमें भक्तिकरोसहु ऐसो हु पाठ हे.

१३. अब तीसरी तुकमें नामोय्चारमासों सर्व मोक्षादि कल्याणकी सिद्धि कही तहां देवताप्रभृति प्रतिबंध करि सकत नहि यह सूचन कियो याहीतें वेदको तथा अजामिलाख्यनादि पुराणभागनकों प्रमाण बतायो क्यों जो धर्मराजके हू दूत केवल नामके महिमातें अजामिलकों रोकि न सकि याते देवनिरोधरूप वीर्य पुष्टिके अनुसार वर्णन भयो आसुरखंडनरूप वीर्यको मर्यादाके अनुसार स्फुट वर्णन चोथी तुकमें कियो.

संस्कृत टीका

५ वैष्णवजनने आपे

वैष्णवजनने आपे पद निर्वाण ।।
मार मुगतो कोय न मागे दाण ।।५।।

वैष्णवजन जो भगवदीय. अथवा. वैष्णव जे भगवदीय तिनके जन जो अनुगृहीत गोपालदासजी प्रभृति तिनको. **आपेपदनिर्वाण** निर्वाणपद जो [१४] मोक्षपद नित्यलीलास्थान गोलोक सो आपे सो देत हें याको फलितार्थ यह जो नित्यलीलामें वाकों अंगीकार करत हें याहीतें कहत हें. **मारगमुगोतोकोयनमागेदाण** मारग जो [१५]परप्राप्तिको मार्ग सो मुगतो प्रतिबंधरहित हे सो ही लौकिकरीतितें बोध करत भये कहत हें. **कोयनमागेदाण** दाण जो राजानको कर सो कोई मागत नहीं हे याको भावार्थ यह जो राजानको कर सब पदार्थपें लगत हे परंतु चक्रवर्ती राजा काउनको कछू पदारथ देत हे तो वाको कोई कर नही लेत हे तेसें आप हू जापें कृपा करिकें निर्वाणपद देत हे ताको देवता हू प्रतिबंध नहीं कर सकत हें यह प्रकार [१६]बृहदारण्यकादिक उपनिषदमें निरूपण कियो हे ।।५।।

अब [१७]ओर हू यशको निरूपण करत हें.

१४. अब भगवद्भक्तको मोक्ष सुलभ हे जो विष्णुपुराण नारद पंचरात्रादिकनमें भोमान्मनोरथान्कामानस्वर्गिवद्यपरंपदम् प्राप्नोत्याधितोविष्णोनिर्वाणमपिचोत्तमम् मुक्तिरतेषांकरस्थिता इत्यादि स्थलनमें कह्यो हे.

१५. पर सो क्षरअक्षरते उत्तम ऐसे पुरुषोत्तम ओर संस्कृतमें मुक्तशब्दको भाषामें पुगतो ऐसो अपभ्रंश हे यातें अब पुरुषोत्तम प्राप्तिको रस्ता छूट हे अब या रस्तामें कछू अडचनो नाही याही अभिप्रायतें टीकामें प्रतिबंधरहित यह अर्थ कियो.

१६. बृहदारण्यकमें तृतीयाध्यायके चतुर्थ ब्राह्मणमें वामदेव ऋषिको ब्रह्मभावतें सर्वरूपता कही हे तहां ब्रह्मनिष्टकों देवता हू बाध करि सकत नाहीं यह कह्यो हे.

१७. पांचमी तुकमें पुष्ट्यनुसारतें यशको वर्णन कियो अब छटठीतुकमें ओरहू यशको सो मर्यादाके अनुसार यशको वर्णन करत हें सो हू यश दो प्रकारको हे लौकिक ओर अलौकिक सो आगे टीकामें स्फुट होयगो.

संस्कृत टीका

६ चरणचांखडी वंदे

चरणचांखडी वंदे राणोराण ।।
सरस थया ते हुता जे प्रेत पाषाण ।।६।।

चरणचांखडी सो चरणारविंदमें धरिवेकी पादुका तिनको. **वंदेराणोराण** सो राजानके हुं राजा चक्रवर्ती. अथवा. [१८]राजानके राजा इंद्रादिक ते. **वंदे** वंदन करत हें ओर वंदेराजाराण ऐसो हु पाठ हे. अब लौकिकयश निरूपण करिकें अलौकिक यश निरूपण करत हें. **जेप्रेतपाषाण** जे प्रेतरूप पाषाण. **हुता** सो हते. **तेसरसथया** सो वे आपकी पादुकाके [१९]वंदनतें [२०]सरस रस जो भक्तिरस ताकरिकें युक्त भये. अथवा. **सरस** सो रस जो पुरुषोत्तम तिनकरिकें युक्त भये नित्यलीलाकी विनकों प्राप्ति भयी याको भावार्थ स्फुट हे ।।६।।

अब प्रेत पाषाण सरस कीये ताको उदाहरण कहत भये श्रीको निरूपण करत हें.

१८. सब राजानको राजा इंद्र हे यह बात हरिवंशस्थ विष्णु पर्वके रुक्मिणीस्वयंवर प्रसंगमें ऋथकैशिक राजाननें भगवानकों राज्याभिषेक कियो हे तहां स्फुट कही हे.

१९. आपकी पादुकाके वंदन कियेतें भक्तिरसकी तथा लीलाकी प्राप्ति होत हे सो बात श्रीभागवतमें कही हे त्वत्पादुकेह्यविरतंपरिचेयरंतिध्यायं त्यभद्रनशनेशुचयोगृणंति. विंदिंतितेकमलनाभभवापवर्ग माशासतेयदितइशतइशनान्ये. इत्यादि स्थलनमें.

२०. पाषाण अनेक वर्ष पर्यंत जलमे रहे तो हु सरस होय नही ओर आपनें तो पाषाणतुल्यनकुं हू सरस किये यह आपको अत्यद्भुत चरित्र हे ऐसे इहां पांचमी तुकमें अपुने सब भक्तनको आप निर्वाणपद देत हें ओर आपके मार्गमें कोई बाध करि सकत नाही यह कह्यो ओर छटठी तुकमें या लोकके बडे राजा ओर स्वर्गलोकके बडेइंद्रादिक ते अब आपकी चरणपादुकाको वन्दन करत हें ओर आप अत्यंत अयोग्यनकुं हु योग्य करत हें या कह्यो यातें इन दोई तुकमें परिपूर्ण यशको वर्णन कियो.

संस्कृत टीका

७ हतितपतितनुं जुवो

हतितपतितनुं जुवो तमे प्रगट एंधाण ।।
शेष सहस्त्रमुख उच्चरे जेहेना वखाण ।।७।।

हतितपतितनूं सो हतितपतित नामा दो प्रेत हते तिनको. **प्रगट** सो प्रत्यक्ष. **ऐंधाण** सो चिह्न सो. **तमेजुवो** सो तुम देखो यह अपुने [२१]चार प्रकारके

अंतःकरणतें कह्यो. अब यह प्रकार तो उपलक्षण रीतितें कह्यो परंतु आपकी गुण श्री याहूतें अधिक हे सो कहत हें. **शेष** जे शेषजी ते. **सहस्त्रमुख** ते हजार मुखतें इतनें दो हजार जीभ तें. **जेहनावखाण** सो जिनकी स्तुति. **उच्चरे** सो कहत हें याको भावार्थ स्फुट हे ।।७।।

अब शेषजी आपकी स्तुति करत हें तासों पाताल पर्यंत ही आपकी श्री प्रसिद्ध होयगी या शंकाको निरास करत हें.

२१. अब जुवोतमेप्रगटऐंधाण यह बात गोपालदासजीने अपुने चार प्रकारके अंतःकरणनतें कही चार प्रकारके अंतःकरण सो मन बुद्धि चित्त अहंकार इनको विवेचन बडे ग्रंथनमें कियो हे.

संस्कृत टीका

८ चौदलोकमां वरते

चौदलोकमां वरते जेहनी आण ।।
त्रासतिमिरनूं जाणे सकल विहाण ।।८।।

चौदलोकमां सो चतुर्दशलोकमें. **जेहनी** सो जिनकी. **आण** सो दुहाई. **वरते** सो फिर रही हे. अब वह दुहाई केसी हे सो कहत हें. **त्रासतिमिरनूं** त्रास. सो पाखंडको ओर यमप्रभृतिनको भय तारूप तिमिर सो अंधकार ताको. **जाणे** सो मानों. **सकलविहाण** सो सब नाश करिवेवारी. अथवा. त्रासतिमिर

मिटायवेको. [२२]विहाण सो शस्त्र सो शस्त्र केसे. **सकल** सो कलाकरिकें सहित सो उज्वल यातें तीक्ष्णता सूचन करी याको [२३]भावार्थ यह जो आपनें दिग्विजय कियो ताके श्रवणमात्रतें सब अधर्मी लुप्त भयें तातें पाखंडको भय गयो ओर सब दैवीजीव शरण आए भक्ति करन लगे तातें यमको भय गयो ।।८।।

अब केवल येही अवतार आपनें धारण कियो ओर अभी ही आपनें यह कार्य कियो सो नही प्रेतयुग अवतार धारण करिकें यह कार्य आप करत हें. यह सूचन करत हें.

२२. संस्कृतमें प्रहरण विहनन इत्यादि शस्त्रनके नाम हे तामें विहननशब्दको भाषामें विहाण भयो ओर त्रासरूप अंधकार मिटायवेकों विहाण सो प्रातःकालरूप आपको प्राकटय हे या प्रकारकी आपकी आण चतुर्दशलोकमें वर्तत हे ऐसो अर्थ इहां होत हे याहीतें गुर्जरभाषामें प्रातःकालकुं वहाणूं कहत हें.

२३. अब इहां सातमीतुकमें हतितपतितजेसे अधम हू जे आपके सेवक होत हें तिनकों आप सबतें उत्तम करत हें ओर आप पुरुषोत्तम हें यातें अक्षरब्रह्मात्मक शेषजी हू आपकी स्तुति करत हें यह कह्यो ओर आठमीतुकमें सबलोकनमें आपकी आज्ञा वर्तत हे याहीतें आपके भक्तनको साधनदशामें हू पाखंडमतयमप्रभृतिनको भय होत नाही यह कह्यो यातें इन दोय तुकनमें श्रियोहिपरमकाष्टासेवकास्तादृशाचिदि इत्यादिस्थ लोकप्रकारसों श्रीको निरूपण यथार्थ कियो यह ही टीकामें भावार्थमें सूचन कियो.

संस्कृत टीका

९ अधर्म सकलनूं

अधर्म सकलनूं पेरें पेरें कीधुं वित्राण ।
धर्म सकलनूं प्रभुजीयें कीधुं त्राण ।।९।।

पेरें पेरें सो [२४]अनेकप्रकारतें. **सकल** सो कलाकरिकें सहित सो प्रबल ऐसो जो. **अधर्म** ताको. **कीधुंवित्राण** सो नाश कियो सो अधर्मी दैत्यादिक तिनको नाश कियो ऐसें अधर्मनाशकत्व निरूपण करिकें. अब धर्मरक्षकत्व निरूपण करत हें. **सकल.** ते सर्व. **धर्म** ते [२५]वैदिक स्मार्त्त धर्म तिनको. अथवा. धर्मसकल धर्म जो वैष्णवधर्म ताकरिकें सकल ते तेजस्वी जे निजभक्त तिनको. अथवा. धर्म हे सकल सो प्रबल जिनतें ऐसे ऋषिप्रभृतिःतिनको. अथवा. धर्म. जो प्रभनने दीयो जो स्व स्वाधिकारधर्म तिनकरिकें. सकल. ते तेजस्वी सूर्यचंद्रादिक देवता तिनको. **कीधूंत्राण** सो रक्षा करत हें सोई आपने गीताजीमें. [२६] ‘‘यदायदाहिधर्मस्यग्लानिर्भवतिभारत. अभ्युत्थानमधर्मस्यतदात्मानंसृजाम्यहम्’’. या श्लोकमें आज्ञा करी हे याको भावार्थ स्फुट हे ।।९।।

ऐसें प्रतियुग अवतार आप धरत हें यह निरूपण करिकें अब फेर श्रीविटठलावतारको चरित्र वर्णन करत हें.

२४. अनेक प्रकारसो जप दान यज्ञादिक आप करत हें तथा ग्रंथादिद्वारा धर्मको ओर अधर्मको फल जूदो जूदो दिखायकें अधर्मकी निवृत्ति करत हें इत्यादि प्रकारतें आप अधर्मको नाश करत हें.

२५. वैदिक धर्म सो अग्निहोत्रादिक ओर स्मार्तधर्म सो गर्भाधानादिक.

२६. गीताजीमें अर्जुनकों प्रभुननें आज्ञा कीनी हे जो हे भरतवंशमें उत्पन्न अर्जुन जब ही धर्मकी मंदता होत हे ओर अधर्मको फेलाव होत हे तब तब ही में धर्मकी रक्षाके लिये ओर अधर्मके नाशके लिये अवतार धरत हुं.

संस्कृत टीका

१० सन्मुख कीधा जे

सन्मुख कीधा जे हुता भ्रष्ट अजाण ।।
निर्भय कीधा शिर (२६)धरी निजपाण ।।१०।।

जे. **अजाण** ते अज्ञानी याहीतें. **भ्रष्ट** ते भगवन्मार्गते बहिर्मुख. **हुता** ते हते तिनकों. **सन्मुखकीधा** सो शरणलेकें भगवन्मार्गोन्मुख किये फेर. **निजपाण** सो अपनो श्रीहस्त सो. **शिरधरी** सो मस्तकपें धरिकें. निर्भयकीधा. सो कालादिकके भयतें रहित किये याको [२८]भावार्थ स्पष्ट हे ।।१०।।

अब कोन रीतितें विमुखनको सन्मुख किये सो निरूपण करत हें.

---

२७. शिरधरीनिजपाण जग्गें शिरधरीनेंपाण ऐसो हू पाठ हे.

२८. अब इहां नोमी तुकमें भगवत्स्वरूप ज्ञानको विरोधी जो अधर्म ताको नाश ओर चित्तशुद्धिद्वारा ज्ञानकों उत्पन्न करिवेवारो जो श्रौतस्मार्तनिष्काम धर्म ताकी रक्षा कही ओर दशमी तुकमें अजाण सो स्वरूपज्ञानवारे ओर भ्रष्ट सो देहादिकमें अध्यास पायकें ब्रह्मस्वरूपतें य्युत याहीतें अधर्मादिकमें हू प्रवृत्त ऐसे जे जीव तिनकों आपनें उपदेश करिके सन्मुख किये फिर अपनो श्रीहस्त उनके माथे धरिकें निर्भय करत हें यह कह्यो याको तात्पर्य यह जो आपके श्रीहस्तस्पर्शतें तुरत जीवकों शुद्धाद्वैत ब्रह्मज्ञान यथार्थ होत हे ताहीसों वे निर्भय होत हे क्यों जो अद्वैतज्ञानबिना यथार्थ भय मिटत नाहीं सो ब्रह्मवल्लीबृहदारण्यकादि उपनिषदनमें प्रसिद्ध हे यह सब बात पहिलें टीकामें अनेक जग्गे लिखी हे तातें इहा लिख्यो जो याको भावार्थ स्फुट हें यातें इन दोय तुकनमें ज्ञानको यथार्थ निरूपण भयो.

संस्कृत टीका

११ निगम तत्वरस

निगम तत्वरस जसभर करीसंधान ।।
रूपसुंदरता शुं कहूं नही कोऐ समान ।।११।।

निगम

जो वेद तिनको. तत्वरस सो सारभूत रस सो भक्तिरस सो श्रीमद्भागवतप्रथमस्कंधके प्रथमाध्यायमें [२९]निगमकल्पतरोर्गलितं फलं या श्लोकमें निरूपण कियो हे ओर. **जस** जो यश ताके केहेवेवारे पुराणादिक तिनको. **भर** सो समूह ताको. **करीसंधान** सो उपदेश करिकें. अथवा. **निगम** जे वेद तिनको. **तत्व** सो सारभूत ऐसो. **रस** सो भगवत्स्वरूप तिनके यशको. **भर** सो समूह हे जाकेविषें ऐसे श्रीमद्भागवतादिक तिनको. **संधान** सो सुबोधिन्यादिक ग्रंथ द्वारा हृदयमें ज्ञान सो करिकें आपको अलौकिकस्वरूप ताको दर्शन करावत हें सो स्वरूप केसो हे सो निरूपण करत हें. **रूपसुंदरता** सो आपके श्रीअंगकी सुंदरता सो. शूं कहूं में कहा कहूं मोते कही जात नहीं क्यों जो. नही कोए समान. या स्वरूपके तुल्य कोई हे नहीं तातें याको भावार्थ यह जो प्रथम जीवकों उपदेशद्वारा हृदय शुद्ध करिकें फेर आपके अलौकिकस्वरूपको अनुभव करावत हें ।।११।।

अब गोपालदासजीनें जो जो वर्णन कियो सो सब जेसे जेसे दर्शन भये तेसो वर्णन कियो तांतें अत्यंत चित्तकों आनंद भयो ओर भायलाकोठारीको बडो उपकार मनमें जान्यो तातें कहत हें.

२९. वेदरूपकलप्वृक्षतें भगवदभक्तिरसरूप फल पडयो हे यह श्रीभागवतके तृतीय श्लोकमें कह्यो हे या तुकमें निगमतत्वरसजसभरी अमृतसंधान ऐसो हू पाठ हे तहां अमृत शब्दको मोक्ष तथा सुधा ऐसो अर्थ करत हें.

संस्कृत टीका

१२ कृपा करी हरी

कृपा करी हरी राखी बहुविध कान ।।
सेवकजननें राखील्यो एह लांण ।।१२।।

अब गोपालदासजी प्रार्थना करत हें आप केसे हो. **हरी** सो सर्व दैवीजीवनके दुःखहर्त्ता याहीतें. **कृपाकरी** सो कृपाकरिकें. **बहुविध** सो बोहोतप्रकारतें. **राखीकान** भायलाकोठारीकी कान सो मर्यादा राखी क्यों जो ऐसे अलौकिक दर्शन मोकों कराये विनकी काननतें परंतु अब जिनलीलानके मोकों दर्शन कराये तिनमें मोकों राखो दूर मत करो यह प्रार्थना करत हें. **सेवकजननें** सेवक सो भायलाकोठारी तिनको जन सो दासमें गोपालदास ताकों. राखील्यो सो जिन लीलानके दर्शन कराये तिनमें राखो. **एह** सो यह ही. **लांण** सो सुखको लाभ याको [३०]भावार्थ स्फुट हे ।।१२।।

अब गोपालदासजीनें प्रार्थना करी सो आपनें अंगीकार करी ऐसो भासत हे याहीतें कहत हें.

३०. अब इहां ग्यारमीतुकमें सबतें उत्तम जो भक्तिरस ताकी तथा सब वेदनको तत्व जो पुरुषोत्तमस्वरूप ताकी प्राप्ति कही यातें सब प्राकृतपदार्थनको अधमपनो ओर अतत्वपनो दिखायो ओर वा भगवत्स्वरूपकी अत्यंत ही सुंदरता कही तातें वाके दर्शन भये पीछें ओर कही प्राकृत पदार्थमें आसक्ति लगे नहि यह सूचन कियो ओर बारमीतुकमें आप परम कृपालु हें यातें भक्तनकी बहुत कान राखत हें यह कह्यो यातें प्रभुनकी हु अपुने भक्तबिना ओर कोईजग्गें आसक्ति नाही यह तात्पर्य दिखायो सो ही श्रीभागवतमें साधवेहृदयंमह्य साधूनांहृदयत्वहं मदन्यत्तेनाजानंति नाहंतेभ्योमनागपि इत्यादिस्थलनमें कह्यो हे ओर परमकृपा हू वैराग्यको धर्म हे सो कृपाजलधिसंश्रिते मममनःसुखंभावय या श्लोकके व्याख्यानमें श्रीपुरुषोत्तमजीनें लिख्यो हे ओर अब तो हमकुं संसार छुडायकें आपके पास राखो यह ही हम लाभ माने हें ऐसे प्रार्थना कीनी तातें प्रभुबिना ऐहिकपारलौकिकसर्वपदार्थनमें वैराग्य सूचित भयो यातें इनदोयतुकनमें परिपूर्ण वैराग्यगुणको वर्णन कियो.

संस्कृत टीका

१३ ऐहवा ते गुणनिधि

।। ढाल ।।

ऐहवा ते गुणनिधि नाथ गातां, ब्रह्महत्यादिक अघ टले ।।
लीला ते लहरीसिंधु झीले, रासरसिकने जई मले ।।१३।।

एहवा ते जिननें मेरी तुच्छकी प्रार्थना मानी ओर जिनको वर्णन कियो ऐसे कोन सो कहत हें. **तेगुणनिधिनाथ** ते सो जे वेदादिकनमें प्रसिद्ध हें ते ओर केसे गुणनिधि सो ऐश्वर्यादि [३१]अलौकिकगुणनके भंडार ऐसे नाथ सो [३२]सर्वसमर्थ ओर प्रभुप्राप्त्यर्थ विप्रयोगके देवेवारे ऐसे जे आप तिनकों. **गातां** सो गान कीयेतें. **ब्रह्म हत्यादिक अघटले** ब्रह्महत्याप्रभृति पाप मिटें अब या रीतितें भक्तनकों अनिष्टनिर्वत्तकत्व वर्णन करिकें इष्टदातृत्वनिरूपण करत हें. **लीलातेलहरी सिंधुझीले** ते सो वह जो आपके यशको गान करे सो लीलारूप जो लहरीयुक्त सिंधु सो समुद्र तामें झीले निमग्न होय अब लीलाको सिंधुत्व कह्यो यातें अगाधत्व सूचन कियो ओर [३३]लहरीयुक्तत्व कह्यो यातें नित्यनव्यत्व ओर अद्वैत सूचन कियो. अब ओर वाकुं कहा लाग होत हें सो कहत हें. **रासरसिकनेजइमले** रासरसिक जे प्रभु तिनतें. अथवा. रसनको जो समूह सो रास ते कोन पुरुषोत्तम तिनके अनुभव करिवेवारे ते रसिक व्रजभक्तन तिनमें जईमले सो यालोक तें भगवल्लोकमें अलौकिकदेहतें जायकें भगवल्लीलाको अनुभव करे यह प्रकार ब्रह्मवल्लीप्रभृति उपनिषदनमें निरूपण कियो हे याको [३४] भावार्थ स्फुट हे ।।१३।।

अब ऐसे पुरुषोत्तम ते सर्वतें पर हें तब भूतलपें वे क्यों पधारे ताको हेतु कहत हें.

---

३१. अब यारीतसों बारहतुकनमें ऐश्वर्य वीर्य यश श्रीज्ञान वैराग्य इन छ अलौकिक गुणनको वर्णन करिकें इन तुकनमें मुख्यतासूं छ गुणनको ही वर्णन हे यह सूचन करिवेकों एहवातेगुणनिधिनाथ यह कह्यो इहां गुणनिधि ऐसें कह्यो ताते ओर हू असङ्ख्यात अप्राकृत गुण प्रभुनमें रहे हे यह सूचन कियो सो ही नारदपंचरात्रादिकनमे निर्दोषपूर्णगुणविग्रहआत्मतंत्रः इत्यादिस्थलनमें कह्यो हे ये ही सब अभिप्राय लेके टीकामें ऐश्वर्यादिअलौकिकगुणके भंडार यह अर्थ कियो.

३२. नाथधातुके याचना, उपताप, ईश्वरता, आशीर्वाद यह चार अर्थ होत हे तामें ईश्वरतारूप अर्थ लेकें सर्व समर्थ यह अर्थ कियो ओर उपतापरूप अर्थ लेकें विप्रयोग देवेवारे यह अर्थ कियो.

३३. लहरीसिंधु या पदमें मध्यमपदलोपसमासतें लहरीयुक्तपनो कह्यो तातें नित्य नव्यत्व सो जेसे समुद्रमें सदा नयी नयी लेहेर उठिवो करत हे तेसें लीला समुद्र जो प्रभु तिनके लीलारूप तरंग हू सर्वदा नवीन नवीन होत हे यह सूचन कियो ओर अद्वैत सो जेसें तरंग समुद्रतें जुदे दिखत हें परंतु वास्तविकरीतिसों तो वे समुद्र रूप ही हे कबहु समुद्रतें जुदे होत नाही तेसें प्रभुनकी लीला हू सब साक्षाद्भगवदरूप ही हे यह सूचन कियो.

३४. यातुकको भावार्थ यह हे जो प्रभुनके गुणगानमात्रतें सब प्रतिबंध निवृत्त होयके परमफलकी प्राप्ति होत हे यह गुणगानको फल श्रीमहाप्रभुननें निरोधलक्षणादिकग्रंथनमें लिख्यो हे.

संस्कृत टीका

१४ निःसाधनजनहितकरेवा

निःसाधनजनहितकरेवा, श्रीनाथविटठल आवीया ।।
व्रजमां ते हींडे मलपता, ते व्रजसखीमन भावीया ।।१४।।

निःसाधन ते [35]ज्ञानादिसाधनहीन ऐसे. **जन** जे दैवीजीव तिनको. **हितकरेवा** सो अंगीकार करिवेकेलियें. **श्रीनाथविटठल** ते श्रीविटठलनाथजी आप. अथवा. श्रीनाथ. ते श्रीगोवर्द्धनधर ओर श्रीविटठल ते श्रीगुसांईजी ये दोई स्वरूप. **आवीया** सो भूतलमें पधारे. अब भूतलमें कोनसे देशमें पधारे सो कहत हें. **व्रजमांतेहींडेमलपता** ते सो श्रीनाथजी ओर श्रीगुसांईजी व्रजमां सो व्रजदेश निजलीलास्थल ताकेविषें मलपता ते गजजेसी गतितें हींडे सो अनेकलीलासुख देवेकों फिरत हें याहीतें ते सो वेदपुराणादिकमें प्रसिद्ध जे. **व्रजसखी** ते श्रुतिरूपा तिनके. **मनभावीया** सो तिनकों अत्यंत प्रिय लगत हें याको भावार्थ स्फुट हे ।।१४।।

ऐसे व्रजभक्तनकों प्रियत्व निरूपण करिकें अब सेवकजनकों प्रियत्व निरूपण करत हें.

३५. ज्ञानरहितकों अंगीकार करिवेवारे यह विट्ठलशब्दको अर्थ हे याही अभिप्रायतें टीकामें निःसाधनशब्दको ज्ञानादिसाधनरहित यह अर्थ कियो.

संस्कृत टीका

१५ कमलनेणें ने

कमलनेणें ने अमृतवेणें, वाक्यमाधुरी रेडता ।।
वेद ध्वनि मिषें हस्तचलणे, शोभे सौने तेडता ।।१५।।

कमलनेणें कमलनयन जे [३६]श्रीगोवर्द्धनधर तिनतें. अमृतवेणें. अमृत जेसे मधुर वेंण ते वचन तिनतें. **वाक्य माधुरी रेडता** वाक्य जे यथोचित पदसमूह ताकी माधुरी मिष्टता ताकों रेडता सो कानमें डारत हें ऐसे. अब रेडता ऐसें कह्यो यातें वचनको रसरूपत्व सूचन कियो याको भावार्थ यह जो भक्तनपें आप ऐसी कृपा प्रभुनकी करावत हें जो प्रभु भक्तनतें संभाषण करत हें ओर आप [३७]श्रीसुबोधिन्यादिकरूपी वचन तिनकों भक्तनकों प्यावत हें. अब अलौकिक कार्य निरूपण करिकें श्रीविटठलावतार कार्यको निरूपण करत हें. [३८]वेदध्वनिमिषें हस्तचलणें. वेद ते चारों वेद तिनको ध्वनि सो उंचे स्वरते पाठ करनो ताके मिषतें जो हस्तचलण ते [३९]वाजसनेयीशाखा प्रभृतिनके स्वर सूचन करिवेकों श्रीहस्तको चलनो ते, **शोभे** सो ऐसो शोभत हे मानो. **सौने तेडता** सर्व मूर्तिमती श्रुति हें तिनकों जानें आप बुलावते होंय. अब यह उत्प्रेक्षा करी यातें यह सूचन कियो जो वस्तुतः आप कछू श्रुतिनकों बुलावत नही हें क्यों जो वेद स्वरूपाभिन्न हें. ओर [४०]हस्त चलनके मिषसों सब दैवीजीवनकों भगवल्लीला प्राप्तिके लिये अपुनें समपी बुलावत हें ऐसो हू अर्थ होत हे याको भावार्थ स्फुट

हे ।।१५।।

अब वंशद्वारा हू भक्तनको आप सुख देत हें सो निरूपण करत हें.

३६. शास्त्रमें पुंडरीकाक्ष अंबुज लोचन इत्यादि प्रभुनके नाम हे यातें कमलनयन शब्दको अर्थ श्रीगोवर्द्धनधर लिखे.

३७. अमृतवेणे या शब्दमें अमृत जो लीलाप्राप्तिरूप मोक्ष ताके प्रतिपादक वचन ऐसो हू अर्थ होत हे सो अभिप्राय लेकें टीकामें श्रीसुबोधिन्यादिरूप वचन यह अर्थ कियो ओर अमृत ऐसो भगवल्लीलाप्राप्तिको नामता शांडिल्यभक्तिमीमांसाके तीसरे सूत्रमें तथा श्रीभागवतमें हू मयिभक्तिर्हिभूतानाममृतत्वायकल्पते इत्यादिस्थलनमें प्रसिद्ध हे.

३८. वेदध्वनिमिषें हस्तचलनें या जग्गे वेदाध्ययनमिषभुजचलनकरि ऐसो हू पाठ हे.

३९. वाजसनेयीशाखा सो माध्यंदिनीशाखा शुक्लयजुर्वेदकीशाखानके बहुत करिकें हस्तस्वर हें ओर टीकामें प्रभृतिशब्द लिख्यो तातें मुख्यतासूं सामगान इहां लेनो क्यों जो सामगानमें हू हस्तको उपयोग शास्त्रसिद्ध हे ओर इहां सामगानके तथा वाजसनेयी शाखाके ध्वनीको वर्णन कियो याते प्रत्यक्ष रीतसों हू सब वेदनकी शाखा आप पढे हें यह सूचन कियो क्यों जो अपुनी शाखा पढे बिना ओर शाखा पढवेको अधिकार होत नाही सो ही वसिष्ठ स्मृतिमें कह्यो हे अधीत्यशाखामात्मीयांपर शाखा पठेद्द्विज इत्यादि ओर आपकी शाखा तो तैत्तिरीय हे तातें तैत्तिरीय शाखाको तो प्रथम ही अध्ययन सिद्ध भयो ओर ऋग्वेद पढे बिना सामगान यथार्थ न होय सके क्यों जो ऋचानके आधारसूं सामगान होत हे ओर यज्ञमें तो दर्श पूर्ण माससूं लगायके सबनमे हो ताके काममें रूग्वेदको उपयोग पडत हे ओर सामगानको तो सोमयागसों लेकें उपयोग पडत हे यातें ऋग्वेदको अध्ययन हू प्रथम ही भयो यह सूचन कियो.

४०. या अर्थको तात्पर्य यह जो जेसे श्रीनाथजी शुद्धपुष्टिलीलायुक्त हे ते अपुनो वाम श्रीहस्त उंचो करिके सब भक्तनकों बुलावत हे सोही त्क्षिप्तहस्तःपुरुषोभक्तानाकारयत्यतःइत्यादि स्थलनमें वर्णन कियो हे तेसें आप आर्चायरूपसूं प्रकट होंयके सर्ववैदिक मर्यादाकी रक्षा करत हे तासों मर्यादा रूप दक्षिण श्रीहस्तको चलन करिकें भक्तनको बुलावत हें.

संस्कृत टीका

१६ भांतभांत लीला

भांतभांत लीला करे प्रभु, सात सरूप सोहामणा ।।
एकएकथी अधिक शोभे, व्रजसखी ले भामणा ।।१६।।

भांतभांत सो नाना प्रकारतें. **लीला करें** लीला करत हें ते कोन. **प्रभु** सो सर्व समर्थ आप ओर. [४१]सातसरूप ते सात बालक श्रीगिरिधरजी प्रभृति ते केसे. **एकएकथीअधिकशोभे** एकएकतें परस्पर अधिक जिनकी शोभा हे ऐसे याहीतें. **व्रजसखी** ते व्रजसुंदरीयें. ले भामणा. सो बलैया लेत हें यातें सब बालकनकों भगवद्‌रूपत्व सूचित भयो. अथवा. श्रीगोवर्द्धनधर रूपतें सुख देत हें सो प्रथम निरूपण कियो. अब ओर [४२]भगवद्‌रूपतें हु आप सुख देत हें सो निरूपण करत हें. **भांतभांतलीलाकरे** सो अनेक प्रकारकी लीला करत हें ते कोन. **प्रभुसातसरूप** प्रभु जे मुख्य स्वरूप श्रीनवनीतप्रियजी ओर सात स्वरूप श्रीमथुरेशजी, श्रीविट्ठलेशरायजी, श्रीद्वारकानाथजी, श्रीगोकुलनाथजी, श्रीगोकुलचंद्रमाजी, [४३]श्रीमुकुंदारायजी प्रभृति श्रीमदनमोहनजी ओर [४४]सब अर्थ हे तेसें ही याको भावार्थ स्फुट हे ।।१६।।

अब आपके परिवारकी शोभा देखिकें देवता हू प्रसन्न होत हें यह निरूपण करत हें.

४१. श्रीगिरिधरजीप्रभृति सात बालक स्वरूपसों आप ही सात प्रकारतें दर्शन देत हें सो ही छीतस्वामी प्रभृति वैष्णवनने बिहरत सातों रूप धरें सदा प्रगट श्रीवल्लभ नंदन द्विजकुल भक्तिभरें इत्यादि कीर्तननमें गायो हे.

४२. ओर भगवद्रूपतें सो श्रीनवनीतप्रियजी प्रभृति स्वरूपतें.

४३. अब श्रीगुसांईजीके छटठेलालजी श्रीयदुनाथजीके ठाकुरजी तो श्रीबालकृष्णजी हे परंतु उननें लिये नहि फिर श्रीयदुनाथजीके लालजी मधुसुदनजीनें पधराये हते परंतु थोडेही दिनमें पाछे श्रीद्वारकानाथजीके पास पधराय दिये यातें अभी उनके वंशके माथें बिराजत नहि ओर उनके मुख्य घरमें श्रीकल्याणरायजी बिराजत हे परंतु श्रीनाथजीके पास पधारिकें संग अरोगत नाहि याहीतें छठे घरकी सुखपाल पहिलें पधारत नहि ते तातें श्रीयदुनाथजीके वंशके काशीवारे गिरिधरजीमहाराजनें श्रीनाथजीके पासतें श्रीमुकुंदरायजी पधराये सो अब हु काशीमें उनके वंशके माथे बिराजत हें तातें अब श्रीजीके पास छटठे घरकी सुखपाल पधारत हे याहीतें कितनेक श्रीबालकृष्णजीकुं सात स्वरूपमें छटठे स्वरूप कहत हें ओर कितनेक श्रीमुकुंदरायजीकों कहत हें ओर कितनेक श्रीकल्याणरायजीकूं हू कहत हें तासूं इहां टीकामें श्रीमुकुंदरायजी प्रभृति ऐसें लिखे.

४४. या पक्षमें हू एकएकथी अधिक सोभे व्रजसखीलेभामणा या उत्तरार्द्धको अर्थ पहिलें लिख्यो सो ही जाननो.

संस्कृत टीका

१७ पेरेंपेरें परिवार

पेरेंपेरें परिवार सोहे, देव मोहे निरखतां ।।
उच्छाह आनंद अधिक वाध्यो, कुसुम वरखे हरखतां ।।१७।।

अब. **पेरेंपेरें** सो अनेक प्रकारतें पुत्र पौत्र बेटीजी तिनके जन्मतें. **परिवार** सो कुटुंब सो. **सोहे** सो शोभत हे याहीते. **देवमोहेनिरखतां** निरखतां सो

दर्शन करत ऐसे जो देव ते देवता ते मोहे सो [४५]मोह पावत हें फेर. **उच्छाहआनंद** उच्छाह सो पुत्रपौत्रादि जन्मोत्सव ताको जो आनंद सो हर्ष. [४६] अधिकवाध्यो सो भूतलपें अधिक बढयो तातें वे आप हू. **हरखतां** ते हर्षित होयकें. **कुसुमवरखे** [४७]पुष्पकी वृष्टि करत हें याको भावार्थ स्फुट हे ।।१७।।

अब आगेंकी तुकमें अंतःपुरलीला वर्णन करनी हे यातें प्रथम शृंगाररसरूपत्व वर्णन करत हें.

४५. देवता मोह पावत हें याको कारण यह जो श्रीकृष्णावतारमें तो हम सब यादवकुलमें अवतार लेके भगवत्सम्बन्ध पाये हते ओर या अवतारमें तो आप ही सब परिवाररूप होत हें यातें हमारो अवकाश नहीं यातें वे मोह पावत हें ओर यादवकुलमें सब देवतानके अवतार हते यह बात तो दशमस्कंधके प्रथमाध्यायमें नंदाद्यायेव्रजेगोपायाश्चातीषांचयोषितः. वृष्णयोवसुदेवद्यादेवक्याद्यायदुस्त्रियः. सर्वेवैदेवताप्रायाउभयोरपिभारत या श्लोकमें कही हे.

४६. अधिकवाध्यो या जग्गें उच्छाह आनंद उलटयो ऐसो हू कहींक पाठ दीखत हे.

४७. पुष्पकी वृष्टि करत हें ताको तात्पर्य यह जो पहिलें रासलीलामें आठस्वरूपसों दर्शन दिये हते सो बात श्रीसुबोधिनीजीमें स्पष्ट हे तेसे इहां हू श्रीविटठलनाथजी ओर सात बालक इन आठ स्वरूपनकों देखिकें पुष्प वृष्टि करत भये ओर जब जब भगवच्चरित्र देखत हें तब तब प्रायः देवता पुष्पवृष्टि करत हे सो श्रीभागवतादिकमें प्रसिद्ध हे.

संस्कृत टीका

१८ रंगें ते रंग्या

रंगें ते रंग्या रसभर्या प्रभु घोषमां लीला करे ।।
अधिक अधिक प्रतापपूरण जस दसोदिश विस्तरे ।।१८।।

गे जो स्नेह शृंगाररसको स्थायीभाव तातें. **रंग्या** ते स्निग्ध ते निरवधीस्नेहयुक्त याहीतें. **रस भर्या** ते शृंगाररसरूप ऐसे ओर केसे. **प्रभु** सर्व समर्थ आप ते. **घोषमां लीलाकरे** घोष जो श्रीगोकुल तामे लीला करे सो [४८]परिनिष्ठितानंदरूप जे स्वपरिग्रह तिनतें विहार करत हें ओर आप कहा करत हें सो कहत हें. **अधिकअधिकप्रतापपूरण** दिनो दिन अधिक ऐसो जो प्रताप जो प्रभाव ताकरिकें पूर्ण सो युक्त ऐसो जो. **जय** सो यश ताकों. **दसोदिशविस्तरे** दसोही दिशानमें विस्तार करत हें ।।१८।।

अब आप तो पुत्रादिसहित पुरुषोत्तमरूप हें यातें [४९]आप्तकाम हें तो हू गृहस्थाश्रमके सुखको क्यों अनुभव करत हें ताको [५०]हेतु कहत भये बहू बेटीनको वर्णन करत हें.

४८. स्वपरिग्रह सो श्रीरुकमीणीबहुजी ओर श्रीपद्मावतीजी बहुजी ओर परिनिष्ठितानंदको स्वरूप पंचमाख्यानमें लिख्यो हे.

४९. जाको कछूभी पदार्थकी कामना बाकी न रहे ताको आप्तकाम कहत हे.

५०. गुहस्थाश्रम अंगीकार करिवेके हेतु सो कारण दोय हें तामें एक तो अपुने भक्तनके संतोष तथा यज्ञयागादिक गृहस्थ धर्मनको आप आचरण करिकें जगतमें उनधर्मनकी प्रवृत्ति ओर दूसरो मुख्य प्रयोजन यह जो प्रभुनकी इय्छाके अनुसार गृहस्थाश्रम करिकें सेवाको सौकर्य यह दोई प्रयोजन क्रमसों दोय तुकनमें स्पष्ट होयगें.

संस्कृत टीका

१९ अंतःपुरलीला करे

अंतःपुरलीला करे, प्रभु सकलजन संतोषता ।।
जाणे मत्तमातंगछूटया, नूपुरने निरघोषता ।।१९।।

अब. **प्रभु** ते षडगुणैश्वर्यसंपन्न आप हें परंतु. **सकलजन** जे अंतःपुरस्थ सब जन. अथवा. कलाकरिकें सहित सो. **सकल** चंद्रता जैसे. **जन** ते परिनिष्ठितानंदरूप स्वपरिग्रहरूप तिनको. **संतोषता** संतोष जो आप्तकामता ताकों करत भये. **अंतःपुरलीला करे** सो [५१]अंतःपुरमें लीला करत हें याको भावार्थ यह जो स्वकीयजन जे भूतलमें हें तिनके संतोषार्थ आपनें गृहस्थाश्रमको अंगीकार कियो हे. अब या रीततें गृहस्थाश्रमको अंगीकार [५२]लोकसंग्रहार्थ हे यह निरूपण करिकें अब वस्तुतः भगवत्सेवार्थ गृहस्थाश्रमको अंगीकार हे सोही श्रीमहाप्रभूनतें [५३]तत्वदीपमेंभार्यादिरनुकूलश्चेत्कारयेद्भगवत्क्रियाम् या कारिकामें आज्ञा करीहे सोही निरूपण करत हें. **जाणे मत्तमातंगछूटया** सो मानो मस्तहाती छूटे ऐसें. **नूपुरनेंनिरघोषता** नूपुर जे तोड़ा तिनकों बजावत भये ।।१९।।

ओर कहा करत भये सो कहत हें.

[५१] अंतःपुर सो जनानो.

[५२] लोकसंग्रह यह जो जगतमें धर्म प्रवर्तायवेकेलियें आप गृहस्थाश्रम अंगीकार करिकें यज्ञयागादिक करत हें आपकुं कछू फलकी आकांक्षा नाहि सो ही गीताजीमें नमे पार्थास्ति. कर्तव्यंत्रिषु लोकेषु किञ्चन इत्यादि श्लोकनतें निरूपण कियो हे.

[५३] निबंधमें कह्यो हे जो जो स्त्रीपुत्रादिक अनुकूल होय तों भगवत्सेवामें उनकी सहायता लेनी.

२० हार कंकण

हार कंकण कर्णभूषण, नाद नाना हींडतां ।।
गान गाये ने सूर सुहाये, श्रीनवनीतप्रियाजी पोढतां ।।२०।।

ओर हार. **कंकण** ते चूडी. **कर्णभूषण** ते करणफूल प्रभृति तिनके जे. **हींडतां** सो चलत हें तासमें. **नाना** नाद. अनेक प्रकारके ध्वनि तासहित. **गानगाये** भगवद्‌यशको गान करत हें तासमें. **सूरसुहाये** सुर जे सप्तस्वर ते सुहाये सो सुंदर लगत हें ते कोनको सुंदर लगत हें सो कहत हें. **श्रीनवनीतप्रियाजीनें** श्री जे स्वामिनीजी तिनकरिकें सहित जे नवनीतप्रियाजी तिनकों सो कोनसेसमें सो कहत हें. [५४]पोढतां सो दुपेहेरको अनोसर होत हें तासमे याको भावार्थ यह जो प्रातःकालमें देहकृत्य करिकें अपरसमे आभरण सब धरिकें उतावलतें मंदिरमें पधारिकें सेवा सब बहुबेटी करत हें फेर राजभोग पीछें अनोसरसमें परोसनाप्रभृति गृहकार्य करत हें ओर आभरणके शब्दानुसार प्रभूनके यशको गान करत हें सो युगलस्वरूपको अत्यंत प्रिय लगत हें ।।२०।।

ऐसें प्रातःकालको कृत्य वर्णन करिकें अब संध्याकालको कृत्य वर्णन करत हें.

[५४] श्रीनवनीतप्रियाजी बालक हें ओर बालककों गान कियेतें तुरत नींद आवत हें यह जगतमें प्रसिद्ध हे यातें श्रीनवनीतप्रियाजीकों पोढतसमें वह गान आछो लागत हे यह वर्णन कियो ओर युगलस्वरूपको वह गान प्रिय लागत हे यह अभिप्राय मुख्य हे सो टीकामें लिख्यो हे.

संस्कृत टीका

२१ संध्यासमे सिंगार

संध्यासमे सिंगार नौतन, फूल गुंथे सउ मली ।।
सदनशोभानिरखतां, ते लक्ष्मी मन पाम्या रली ।।२१।।

संध्यासमे सो सांझकों सब बहुबेटीयें. **सिंगारनौत** नौतन सो नयो सिंगार करत हें फेर. **फूलगुंथें सौमली सबबहुबेटीयें मिलिकें परस्पर वेणीमें फूल गुंथत हें.** [५५]अथवा. फूल घरकी सेवा करत हें. अब वासमयकी शोभा केसी हे सो निरूपण करत हें. **सदनशोभानिरखतां** सदन जो अंतःपुर जनानो ताकी शोभा देखिकें. **तेलक्ष्मी** जो सदा वैकुंठमें रहत हें ते लक्ष्मीजी. **मनपाम्यारली** मनमें रली सो [५६]हर्षपाये याको भावार्थ यह जो आनंद रूप जे लक्ष्मीजी ते हू जा शोभाको देखिकें आनंद पाये तातें वा शोभाको उत्कर्ष कहाकेहेनो ।।२१।।

अब लक्ष्मीजी हु या सुखकी आकांक्षा करत हें सो निरूपण करत हें.

५५. फूलघरकी सेवाको अर्थ कियो यातें जेसें षष्ठाख्यानमें श्रीयशोदाजी सांझकु प्रभुनको नौतन शृंगार करत हें ओर फूल गूंथत हे तेसें इहांहुं अलौकिकरीतसों श्रीनवनीतप्रियाजीकों यह सब शृंगारादिक सूचन कियो ऐसे भासत हें.

५६. लक्ष्मीजी हर्ष पाये ताको कारण यह जो व्रजमें लक्ष्मीजी मुख्यतासूं फूलकी सेवा ही करत हे याहीतें मालिनसीजहांलछिमीडोले इत्यादि गायो हे ओर प्रत्यक्षमे हू श्रीयमुनाजीके तीरपें वल्लीवनमें लक्ष्मीजीको स्थान हे वा वनको आजकाल बेलवन कहत हें याहीतें श्रीनवनीतप्रियाजीके इहां फूल अंगीकार होत हे सो देखिकें वे आनंद पावत हें.

संस्कृत टीका

२२ वास वांछे व्रज

वास वांछे व्रज वसेवा, ऐणीपेरें सुख पांमवा, ।।
श्रीपुरुषोत्तम उत्तमवरने, समे जोई सिर नामवा ।।२२।।

वास जो भूमिपें रेहेनो ताकों. **वांछे** सो इच्छत हें ताको प्रयोजन कहत हें. **व्रजसेवा** व्रजजो नित्यलीलास्थान तामें बसिवेकेलियें. अब वैकुंठ छोडिकें व्रजमें कहा कार्य हे सो कहत हें. **एणीपेरें** सो या प्रकारतें. **सुखपामवा** सो सुखपायवेकेलियें. अब या सुखकी प्राप्ति केसें होय ताको उपाय कहत हें. **श्रीपुरुषोत्तम** श्री जे मुख्यस्वामिनीजी ओर पुरुषोत्तम ते प्रभु ये केसे. **उत्तमवर** उत्तम जे सत्वगुणावतार विष्णु तिनतें वर ते श्रेष्ठ तिनकों. अथवा. **श्री** जो शोभा ताकरिकें युक्त जो. **पुरुषोत्तम** ते केसे. **उत्तमवर** उत्तम जे श्रीस्वामिन्यादिक तिनके वर ते पत तिनकों. **समेजोई** सो स्वाधिकारोचितसमय देखिकें. **सिरनामवा** सो दंडवत् करिवेकेलिये ओर श्रीपुरुषोत्तम उत्तमवरणे ऐसो हू इहां पाठ हे ताको अर्थ ओर टीकामें कियो हे याको भावार्थ यह जो प्रभु अंतर्यामी हें यातें प्रार्थनाको कछू प्रयोजन नहीं [57]स्वाधिकारोचितसमयमें दंडवतमात्र करने फेर इच्छा होयगी तो या सुखको दान करेंगे ।।२२।।

ऐसें मुख्यअंतःपुरकी शोभा वर्णन करिकें अब सब बालकनके निवासके गृहनको वर्णन करत हें.

५७. स्वाधिकारोचित सो अपने अधिकारप्रमाणे योग्य.

संस्कृत टीका

२३ प्रतिसदन शोभा

प्रतिसदन शोभा अतिघणी भणी वेदवदने नजाय ।।
मकरंदमाता भमर गुंजे पक्षीनाद सुहाय ।।२३।।।

प्रतिसदन सब बालकनके गृहनमें. **शोभा** सो सुंदरता. **अतिघणी** अतिबहुत यह [५८]द्विरुक्ति अनिर्वाच्यत्व सूचनकरिवेकेलियें सो ही स्फुट कहत हें. **भणीवेदवदनेनजाय** वेद ते [५९]चार हे वदन सो मुख जाके अथवा वेद हें वदनके विषें जाकें ऐसे जे ब्रह्मा तिनते. **भणीनजाय** सो कही नही जात हे. अथवा. मूर्तिमान चारों वेद ते हु मुखतें कही नही सकत हें ऐसें घरकी शोभा वर्णन करिकें बाहरकी शोभा वर्णन करत हें. **मकरंदमाता** मकरंद तो श्रीयमुनाजीके विषें कमल हें तिनको रस तातें मातासो सो मतभये ऐसे भ्रमर ते भ्रमर ते. **गुंजे** ते अव्यक्तमधुर शब्द करत हें ओर. **पक्षीनादसुहाय** नाना प्रकारके पक्षीनके शब्द सुहावत हें याको भावार्थ स्फुट हे ।।२३।।

अब वे पक्षी सामान्य पक्षीजेसे नहीं हें लीलोपयोगी अलौकिक हें सो निरूपण करत हें.

५८. अति ओर घणी यह दोय शब्द कहे यातें शोभाको अनिर्वाय्यपनो सूचित भयो इतनें वाणीसूं वर्णन न होय सके ऐसी अलौकिकशोभा हे.
५९. वेद ऐसो चार सङख्याको नाम ज्योतिःशास्त्रादिकनमें प्रसिद्ध हे.

संस्कृत टीका

२५ लीलानें अनुसार

लीलानें अनुसार कलरव कूजता द्विज शोभता ।।
स्वस्वभावत्यागी ध्यानरागी, कोईक भावे लोभता ।।२४।।

द्विज जे पक्षी ते. **लीलानेअनुसार** सो लीलोचित. **कूजता** ते शब्द करत हें ओर केसे. **शोभता** ते मनोहर हें वर्णआकृति जिनकी ऐसे ओर. **कलरव** बहुत मधुर हे शब्द जिनको ऐसे परेवा [60]हंस मोर आदि अनेक प्रकारके पक्षी हें. अब वे पक्षी **स्वस्वभावत्यागी** [61]अपनें पक्षीपनेके स्वभावकों छोडिकें. **कोईकभावेलोभता** कोइक सो अनिर्वचनीय ऐसो भाव जो भगवद्भाव तामें लोभता ते लुब्ध होयकें. **ध्यानरागी** ध्यान जो जा लीलाके दर्शन करत हें ताको चित्तमें अनुभव ताको रागी प्रीतिवारे याको भावार्थ यह जो पक्ष्यादिक सब लीलोपयोगि [62]अलौकिक हें ।।२४।।

अब सबस्वरूप पोढत हें तासमे गान होत हे ताको प्रकार वर्णन करत हें.

६०. ये हंस आदि पक्षी सब लीलोपयोगि हें सो श्रीभागवतमें क्वच्चिकलहंसानामनुकुजतिकूजितं इत्यादि स्थलनमें प्रसिद्ध हे.

६१. पक्षीपनेके स्वभावको त्याग यह जो जेसें हंस शरदऋतुमें प्रसन्न रहत हें वर्षाकालमें मानसरोवर बिना कहीं रहत नाहीं मयूर वर्षाकालमें प्रसन्न रहत हें परेवा दिनमें ही विशेष फिरत हें चकोर चांदनीकों ही चाहत हें ऐसें अपुने अपुने स्वभावको त्याग करिकें ये पक्षी भगवल्लीलाके अनुसारसों ही शब्दादिक करत हें सदा प्रसन्न रहत हें.

६२. वे सब जितेंद्रिय मुनी पक्षिरूपसो भगवल्लीलाको दर्शन करत हें याहीते पक्षी स्वभावको त्याग ओर भगवत्ध्यानमें अत्यंत आसक्ति विनकों योग्य हे सो ही श्रीभागवतमें वेणुगीतमें प्रायोवतांबुविहगामुनयोवनेस्मिन् या श्लोकमें वर्णन कियो हे याहीतें टीकामें पक्ष्यादिकसवलीलोपयोगिअलौकिकहें ऐसें कह्यो.

संस्कृत टीका

२५ सहचरीरत्न सुकंठनादें

सहचरीरत्न सुकंठनादें, गान सुजस प्रकार ।।
रसिकजनसौ संगी मलीने, करे ते उच्चार ।।२५।।

सहचरीरत्न. ते बहुबेटीनकी सहचरी अंतःपुरमें रेहेवे वारी स्त्रीयें ते केसी रत्न ते सर्वस्त्रीजनें सौंदर्यादिक गुणकरिकें उत्तम वे. सोंकंठनादें. सो अपुने आछे कोमल कंठके स्वरकरिके **गान.** सो गावत हें कहां गावते हे सो कहत हें. **सुजसप्रकार** सबस्वरूपके जे दैवोद्धारादिकचरित्र ते. ऐसे अंतःपुरको प्रकार निरूपण करिकें अब बाहिरको प्रकार निरूपण करत हें. **रसिकजन** रस जे प्रभु तिनके लीलासुखके अनुभव करिवेवारे ते रसिक श्रीगुसांईजी सातोंबालकप्रभृति तिनके जन ते सेवक. अथवा. **रसिक** जे आपके लीला रसके अनुभव करिवेवारे ऐसे. **जन** ते गोविंद स्वामिप्रभृति ते केसे. **सौसंगी** आपके यशोगानमें एकचित्तवार रे ते सब. **मलीने** सो मिलके. **करेतेउच्चार**ते सो सुजसप्रकार ताको करे उच्चार सो गान करत हें याको भावार्थ स्फुट हे ।।२५।।

अब आधीतुकतें चरित्रको [64]उपसंहार करिकें ओर आधितुकतें प्रार्थना करत भये कडवा समाप्त करत हें.

६३. उपसंहार सो समाप्ति.

संस्कृत टीका

२६ ऐणीपेरें लीला

ऐणीपेरें लीला करे श्रीवल्लभराजकुमार ।।
भक्तजनना कोड पूरो, आपो चरण विहार ।।२६।।

।। इति श्रीगोपालदासकृतवल्लभाख्याने अष्टमकडवा समाप्त ।।

श्रीवल्लभराजकुमार श्रीवल्लभ जे श्रीमहाप्रभुजी ते केसे राज ते सब आचार्यनमें श्रेष्ठ तिनके कुमार ते पुत्र आप श्रीगुसांईजी ते. **ऐणीपेरेंलीला** करे. या प्रकारतें लीला करत हें. अब चरित्र पूर्ण करिकें प्रार्थना करत हें. [65]भक्तजननाकोडपूरो भक्त जे भायलाकोठारी तिनके जन सो दासमें गोपालदास ताके कोडपूरो सो मनोरथ पूर्ण करो यह कहा मनोरथ सो कहत हें. **आपोचरणविहार** चरणसो आपके चरणारविंद ताको विहार सो चित्तमें रेहेनो सो आपो सो दीजीयें याको भावार्थ यह जो आपके चरणारविंद मेरे चित्तमें सदा बिराजें यह मागत हूं. अथवा. [66]चरण सो पद अक्षरब्रह्म नित्यलीला स्थान ताकेविषें. **विहार** जे अनेकप्रकारकी आपकी लीला ते. **आपो** सो दीजीयें याको भावार्थ यह जो नित्यलीलामें मेरो अंगीकार करियें येही मे मागत हूं ।।२६।। श्लोकः.

(६७)अष्टमेविटठलेशानांमाहात्म्यंपापनाशनम् ।।
परिवारालंकृतानांचरितंचनिरूपितम् ।।८।।

।। (६८)इति श्रीमद्‌बालकृष्णचरणैकतानश्रीमद्‌गोवर्द्धनगुरुपादपद्‌म परागप्राप्तपरमोदयश्रीमद्‌गोकुलोत्सवात्मजजीवनाख्येनविरचितम् अष्टमाख्यानव्याख्यानं समाप्तिम् अगमत् ।।

---

६४. भक्तजनना या जग्गें दासजनना ऐसो हू पाठ हे.

६५. अक्षरब्रह्म श्रीपुरुषोत्तमके चरणारविंदरूप हे तथा लीलास्थान हे सो बात ब्रह्मवल्लीआदिउपनिषदनमें तथा निबंधादिकग्रंथनमें प्रसिद्ध हे याहीतें टीकामें

चरणशब्दको अर्थ अक्षरब्रह्म यह कियो.

६६. अब या रीतसों अष्टमाख्यानको व्याख्यान करिकें गोस्वामी श्रीजीवनजीमहाराज या आख्यानकों सब अर्थ संक्षेपसों एक श्लोकमें आज्ञा करत हें ता श्लोकको अर्थ या अष्टमाख्यानमें अपुने परिवार करिकें शोभायुक्त ऐसे जो श्रीगुसांईजी तिनको माहात्म्य ओर चरित्र निरूपण कियो वह माहात्म्य ओर चरित्र पाप नाशन हे इतनें श्रवण मात्रसों जीवनके पापनको नाश करिवेवारे हे अब या आख्यानमें प्रथम बारहतुकनमें ऐश्वर्यादिकभगवद्गुणनको वर्णन कियो यातें संपूर्ण माहात्म्य दिखायो ओर तेरमीतुकमें ''एवातेगुणनिधिनाथगातांब्रह्महत्यादिक अघटले'' यह कह्यो यातें पाप नाश करिवेको सामार्थ्य हू स्पष्ट कियो ओर श्रीनवनीतप्रियजीकी सेवाप्रभृति आपके चरित्रकों हू इहां वर्णन कियो अब या आख्यानके अर्थको दोहा.

कह्यो रुचिरपरिवारयुत, विटठलको जुबखान ।।
दुरितहारि महिमाचरित, इह अष्टम आख्यान ।।

६७. ।। इति श्रीमद्वल्लभाचार्यमतवर्तिनामोक्षगुरुस्वमातामह गोस्वामि श्रीवृजवल्लभचरणैकतानेनस्वपितृसकाशादेवलब्धविद्येनपंचनदि घनश्यामंभटटात्मजगोवर्द्धनाशुकविनाकृतं अष्टमाख्यान व्याख्यानटिप्पणं संपूर्णम् ।।

संस्कृत टीका

नवमाख्यान

१ नितप्रतिक्षणक्षण

अब अष्टमाख्यानमें परिवारचरित्र वर्णन करिकें नवमाख्यानमें गोपालदासजी अपनी जिह्वाकों शिक्षा करत भये श्रीमहाप्रभुनके परिवारको ओर नामपूर्वक सबबालकनके [१]गुणनको संक्षेपतें वर्णनकरतभये श्रीवल्लभाचार्यजीके परिवारको नामस्मरण क्षणमात्र हू छोडना नही यह शिक्षा अपने अंतःकरणकों करत हें. अब श्रीपुरुषोत्तमके स्मरणको आवश्यकत्व श्रीमहाप्रभूननें चतुःश्लोकी [२]गोकुलेश्वरपादयोः. स्मरणंभजनंचापिनत्याज्यमितिमेमतिः. या श्लोकमें निरूपण कियो हे. रागविभास. अब या आख्यानको गान प्रातःकालमें तो अवश्य करनो तातें स्वदेहमे [३]भगवत्तेजकी वृद्धि होय या अभिप्रायतें प्रातःकालको राग विभास तामे या आख्यानको गान कियो.

नितप्रतिक्षणक्षण सुमरिये,
श्रीवल्लभनो परिवार रे रसना ।।
श्रीपुरुषोत्तम प्रगटिया,
जगत करेवा उद्धार रे रसना ।।१।।

रे रसना. सो हे जिह्वा. अब जिह्वाचक रसनाशब्द कह्यो यातें नामस्मरणकूं [४]रसरूपत्व द्योतन कियो. **नित** सो नित्य सो हू. **प्रतिक्षणक्षण** सो वारंवार. अथवा. प्रतिक्षण सो वारंवार. अथवा. **प्रतिक्षण** सो वारंवार सो हू. [५]क्षण सो हर्ष आनंद करिकें सहित. **सुमरियें** सो स्मरण करनो कोनको सो कहत हें. **श्रीवल्लभनो परिवार.** श्रीवल्लभाचार्यजीको परिवार सों कुटुंब ताकों. याकों हेतु कहत हें **श्री पुरुषोत्तमप्रगटिया.** श्री जे श्रीस्वामिनीजी तिनसहित पुरुषोत्तम प्रगट भये हें ताको कारन कहत हें. जगतकरेवा उद्धार. जगतमें जे दैवीजीव हें तिनको उद्धार करिवेंको. आज श्रीपुरुषोत्तम प्रगटिया ऐसें कह्यो यातें

यह सूचन कियो जो बहुबेटी सब श्रीस्वामिनीजीको स्वरूप हें ओर बालक सब श्रीपुरुषोत्तमको स्वरूप हें येही प्रकार तत्वदीपमें [६] कदाचित्सर्वमात्मैवभवतीहजनार्दन. या कारिकामें निरूपण कियो हे. अथवा. यह वाणी श्रीगुसांईजीकी हे यातें मातापिताको नाम प्रत्यक्ष लेनो नही ऐसी [७]मर्यादा हे तातें परोक्ष रीतितें आज्ञा करत हें. **श्रीपुरुषोत्तम प्रगटिया** श्री जो श्रीमहालक्ष्मीजी ओर पुरुषोत्तम श्रीमहाप्रभुजी ये युगलस्वरूप स्ववंशद्वारा हूं जगतको [८] उद्धार करिवेंको प्रगटे हें ।।१।।

अब आप श्रीमहाप्रभु केसें हें सो निरूपण करत हें.

(१. गुण सो ऐश्वर्यवीर्यादिक छ ये छहों श्रीगिरिधरजीमें स्पष्ट हें ओर श्रीगोविंदरायजी प्रभृतीन्में क्रमसूं एक-एक गुण स्पष्ट हे यह बात मूलपुरुषादिकनमें प्रसिद्ध हे ता रीतसों इंहां हू संक्षेपसो वर्णन करी हे.

२. श्रीगोकुलके पति निःसाधनजनकके रक्षक जे प्रभु तिनके चरणारविंदको स्मरण ओर भजन निरंतर करनो कब हू छोडनो नहि.

३. विशेषेणभासयतेइतिविभासः एसो विभासशब्दको अर्थ होत हे तातें भगवत्तेजकी वृद्धि होयं यह अर्थ टीकामें कियो.

४. जिह्वा सबरसनको चाखत हें ताहीतें याकों रसना कहत हें ता जिह्वाकों इहां उपदेश कियो हे जो तू भगवन्नामस्मरणरूप रस चाख तातें भगवन्नामस्मरणकों रसरूपता सूचित भई.

५. क्षण ऐसो हर्षको नाम अमरकोशादिकनमें प्रसिद्ध हे.

६. या निबंधकी कारिकामें नित्यलीलासृष्टीको निरूपण कियो हे जो नित्यलीलामें भगवान आप ही सर्वरूप होत हें तेसें इहां हू वेसो ही प्रकार हे ताहीतें टीकामें या स्थलमें यह कारिका लिखी.

७. धर्मशास्त्रमें कह्यो हे जो आपनो नाम ओर गुरुनको नाम ओर अत्यंत लोभीको नाम ओर अपुने बडे बालकको नाम ओर स्त्रीको नाम इतने नामनको अपने मुखतें स्पष्ट उच्चार करनो नाही यह मर्यादा आत्मनामगुरोर्नामनामातिकृपणस्यच इत्यादिवाक्यनतें सिद्ध होत हें.

८. वंशद्वारा उद्धारकेलियें ही प्रकटें हें याहीतें भुविभक्तिप्रचारैककृतेस्वान्वयकृत वह आपको नाम हें.

संस्कृत टीका

२ कलिमा कारण

कलिमा कारण एह छें बीजूं, सर्व भूमिनो भार रे ।।
एविना बीजूं सखे बोडवुं, चौदलोक सणगार रे ।।२।।

कलिमाकारणएहछे कली जो कलियुग तामे कारण ते दैवोद्धारके कारण सो हेतु यह छे ये श्रीमहाप्रभुजी हें याहीतें [९]दैवोद्धारप्रयत्नात्मा एह सर्वोत्तमजीमें आपको नाम हे. अथवा. [१०]कलिमा सो कलियुगकी शोभा [११]नामस्मरणमात्रतें मोक्ष होय यारूपी शोभा ताके. **कारण** ते स्मरणमार्गके प्रगट करिवेवारे याहीतें [१२]पृथक्शरणमार्गोपदेष्टा यह सर्वोत्तमजीमे आपको नाम हे ओर कलियुगमें नाम स्मरणमात्रतें मोक्ष होय सो तो श्रीमद्भागवतमें [१३] कलौतद्धरिकीर्तनात् इत्योंदिस्थलमें निरूपण कियो हे ओर. **एहछे** ऐसें कह्यो यातें गोपालदासजीकों वा समे श्रीमहाप्रभूनके दर्शन भये ऐसें भासत हे ओर. **बीजूंसखेभूमिनोभार** बीजूं सो इन बिना भूमिनोभार सो पृथ्वीके भाररूप हें ओर आप केसें हें सो कहत हें. **एविनाबीजूं सखेबोडवुं** ऐ जे ये श्रीमहाप्रभुजी तिन बिना बीजूंसखेबोडवूं ओर सब बोडवूं सो मुंडितकेशजेसो हे याहीतें. **चौदलोकसणगार** चतुर्दशलोकके सिंगार रूप आप हें याको फलितार्थ यह जो दैवोद्धारको असाधारण कारण आप हें याको ब्रह्मांडके पति हें ।।२।।

ऐसें श्रीगुसांईजीके संक्षेपतें गुणवर्णन करिकें अब गुणनामपूर्वक परिवारकों क्रमतें वर्णन करत हें.

९. दैवीजीवनके उद्धार करिवेको प्रयत्न ही आपके मनमें रहत हें यातें दैवोद्धारप्रयत्नात्मा यह आपको नाम हें.

१०. मा ऐसो लक्ष्मीको नाम हे ओर लक्ष्मीके नाम कितनेक शोभावाचक हू होत हे यातें मा शब्दको शोभा यह अर्थ कियो.

११. नामस्मरणमात्रतें मोक्ष होत हे यह बात पद्मपुराण नारदपंचरात्रादिकग्रंथनमें प्रसिद्ध हे.

१२. उपासनादिकमार्गनतें शरणामार्गस्वतंत्र जुदो हे ऐसें अपनें निबंधादिक ग्रंथनमें उपदेश कियो हे तातें पृथक्शरणमार्गोपदेष्टा यह नाम हे.

१३. द्वादशस्कंधतृतीयाध्यायमें कलेर्दोषनिधेराजन् इत्यादि श्लोकनमें कह्यो हे जो सबदोषनको निधान जो कलियुग तामे एक बडो गुण हे जो यामे श्रीकृष्णके कीर्तनमात्रतें सब संसारबंध छूटिकें मनुष्य मुक्ति पावत हे जो सत्ययुगमें भगवानके ध्यानतें फल होय हे ओर त्रेतायुगमें यज्ञ कीयतें जो फल होय ओर द्वापरमें सेवा कीयेतें जो फल होय सो फल कलियुगमें प्रभुनके गुणकीर्तनमात्रतें मिलत हे याही रीतसूं दूसरे पुराणनमें हू कह्यो हे.

संस्कृत टीका

३ श्रीगोपीनाथजी सुहामणा

श्रीगोपीनाथजी सुहामणा नवजलघनतनुभाण ।।
सुख दाता लघुभ्रातना पूरणपुरुष प्रमाण ।।३।।

श्रीगोपीनाथजी ते श्रीवल्लभार्चाजीके बडे पुत्र वे केसे हैं. **सुहामणा** ते अत्यंत मनोहर ओर केसे. **नवजलघनतनुभाण** नयो जलभरित जो घन मेघ तिनजेसी हे तनु भान सो श्रीअंगकी कांतिजिनकी ऐसे ओर केसे. **सुखदातालघुभ्रातना** लघुभ्राता ते छोटेभाई श्रीगुसांईजी तिनके सुखदाता ते सुखदेवेवारे ओर

केसे. **पूर्णपुरुष** सो सर्वगुणकरिकें परिपूर्ण संकर्षणव्यूहात्मक ओर. **प्रमाण** ते मर्यादास्थापक. अथवा. [१४]पूर्णपुरुष जे प्रभु तिनके. **प्रमाण** ते ज्ञान करायवेवारे ।।३।।

१४. श्रीगोपीनाथजी श्रीबलदेवजीको अवतार ओर श्रीबलदेवजी प्रमाणस्वरूप हें ओर ज्ञानशक्तिप्रधान हें सो वेणुगीतादिस्थलके श्रीसुबोधिनीजीमें स्फुट हे यातें टीकामें व्याख्यान कियो सो योग्य हे.

संस्कृत टीका

४ कमललोचन

(१५)कमललोचन करुणाभर्या, श्रीविटठल सुखराश ।।
डीठडे ताप त्रिविध टले, स्मरणमात्र अघनाश ।।४।।

श्रीविटठल ते निस्साधनजनहितकर्त्ता श्रीगुसांईजी वे केसे हें. **कमललोचन** ते कमल जेसे हे नेत्र जिनके. अब या विशेषणतें सौंदर्य ओर पुरुषोत्तमत्व सूचन कियो क्यों जो कमल लोचन यह नाम कोशमें प्रभुनको ही हे ओर श्रीगोपीनाथजीकूं वेदस्वरूपत्व निरूपण कियो ओर श्रीगुसांईकूं पुरुषोत्तमत्व निरूपण कियो तातें दोउस्वरूपनको अभेद सूचन कियो क्यों जो [१६]वेदोनारायणः साक्षात्स्वयंभूरितिशुश्रुमः इत्यादि वाक्यतें पुरुषोत्तम ओर वेद एक ही स्वरूप हें याहीतें प्रथम प्रागटय श्रीगोपीनाथजीको हे पीछे श्रीगुसांईजीको हे क्यों जो प्रमाण विना प्रमेयको ज्ञान नही होय जेसें चक्षुविना कोईभी पदार्थ नहीं दीसे तेसें. याहीतें

[१७]स्वयंप्रकाशत्व पुरुषोत्तमको स्फुट भयो क्यों जो वेद भगवद्रूप हें ओर पुरुषोत्तमको ज्ञान वेदतें ही होत हे ओर प्रमाणतें नही होत हे यह प्रकार [१८] ईक्षत्यधिकरणमें स्फुट निरूपण कियो हे ओर आप केसे हें. **करुणाभर्या** ते करुणासागर. अथवा. जिनके कमल जेसे लोचन करुणाभरे हे या विशेषणतें रसिकभक्तनकों सुलभता सूचन करी ओर यह विशेषण उपलक्षणरीतितें कह्यो यातें नखसिखकोटिकंदर्पलावण्य हें यह सूचन कियो. अब या रीततें तो [१९] परिछिन्नपनो ओर देहित्व सिद्ध होत हें ताको निवारण करत हें. **सुखराश** ते अगणितानंदस्वरूप पुरुषोत्तमकूं [२०]अगणितानंद स्वरूपत्व तो ब्रह्मवल्लीमें निरूपण कियो हे. अब ऐसो स्वरूप हे ताको चिह्न कहा सो कहत हें. **डीठडेतापत्रिविधटले** दर्शन कियेतें त्रिविध जे आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक ऐसे जे ताप ते टले ते मिटें याको भावार्थ यह जो सुख विना तापनिवृत्ति न होय. अब ताप निवृत्ति तो लौकिकमे अपनो प्रिय होय ताके दर्शनमात्रतें हू होत हे या शंकाके निवारणार्थ पुरुषोत्तमत्व सूचक ओर हू विशेषण कहत हें. **स्मरणमात्रअघनाश** आपके स्मरणमात्रतें सब अघ जे पाप तिनको नाश होत हे याको फलितार्थ यह जो श्रीगुसांईजी पूर्णपुरुषोत्तम हें ॥४॥

अब सात बालकनको क्रमते नामोच्चारणपूर्वक सपत्नीक वर्णन करत हें.

[१५] ऐसें श्रीमहाप्रभुनके ज्येष्ठपुत्र श्रीगोपीनाथजीको वर्णन करिकें श्रीमहाप्रभूनके कनिष्ठपुत्र जो श्रीगुसांईजी तिनको वर्णन करत हें कमललोचन या तुकमें.

[१६] षष्ठस्कंधमें कह्यो हे जो वेद हें ते साक्षात्प्रभु हें वे आपहीतें प्रकट भये हे काउके बनायेभये नही हे ऐसें सुने हें.

[१७] जेसें दीवाके प्रकाशतें ओर पदार्थ दीखत हें परंतु दीवातो आप अपने प्रकाशतें ही दीसत हें तेंसें पुरुषोत्तमके चैतन्य गुणप्रकाशतें सब पदार्थनको ज्ञान होत हे ओर पुरुषोत्तमको ज्ञान तो तिनके स्वरूप जे वेद तिनसूं होत हे तातें स्वयं प्रकाश कहावत हें.

[१८] व्याससूत्रके प्रथमाध्यायके प्रथमपादमें सातसूत्रको ईक्षत्यधिकरण प्रसिद्ध हो.

[१९] जाको कोइभी तरहसूं परिमाण होयसके सो परिछिन्न कह्यो जाय.

[२०] जाकी गिनती न होय सकें सो अगणित पुरुषोत्तमको आनंद अगणित हे क्यों जो वाणी मन कछूबी पुरुषोत्तमतांई पहुंची सकत नहीं ओर वाणीमन बिना गिनती होय सकत नाहीं.

संस्कृत टीका

५ श्रीगिरिधर नरभूषण

श्रीगिरिधर नरभूषण भ्रात सकल धुरिधार ।।
वक्ता वेदशास्त्रतणा श्रीभामिनीजीभरतार ।।५।।

श्रीगिरिधर ते श्रीगिरिधरजी जिनको नाम हे ते श्रीगुसांईजीके ज्येष्ठपुत्र वे केसे हें. **नरभूषण** नर जे पुरुष तिनके भूषण ते भूषाकरिवेवारे याको भावार्थ यह जो ओर पुरुषनको लौकिकसौंदर्य हे ओर आपको अलौकिक सौंदर्य निरूपण करिकें ज्येष्ठत्व निरूपण करत हें. **भ्रातसकलधुरिधार** भ्राता जे श्रीगोविंदरायजीप्रभृति छ बालक तिनरूप कला ताकरिकें युक्त ऐसे. अथवा. **भ्रात** जे छओं बालक तिनरूप. **सकल** सो चंद्र तिनकेविषें. [२१]धुरिधार सो धुरंधुर सर्वप्रकारतें बडे हें. अब ज्येष्ठत्व निरूपण करिकें गुणोत्कर्ष निरूपण करत हें. **वक्तावेदशास्त्रतणा** वेद जे चारों वेद ओर शास्त्र ते [२२]छः शास्त्र तिनके [२३]वक्ता सो उपदेशकरिवेवारे. अब गुणोत्कर्ष निरूपण करिकें आश्रमोत्कर्ष सूचन करत हें. **श्रीभामिनीजी भरतार** श्रीभामिनीबहुजीके पति याको फलितार्थ यह जो सर्व आश्रमकों निर्वाह [२४]गृहस्थाश्रम करत हें तातें सब आश्रमनतें श्रेष्ठ हे ताको आपने अंगीकार कियो हे यातें सर्वप्रकारतें आप श्रेष्ठ हें ।।५।।

---

[२१] श्रीगिरिधरजीप्रभृति सात बालकनमें श्रीगिरिधरजी ऐश्वर्यादिक छहों धर्मनतें परिपूर्ण हें ओर श्रीगोविंदरायजी श्रीबालकृष्णप्रभृति छ बालकनमें मुख्यतासूं

ऐश्वर्य वीर्यादि एक-एक धर्म स्फुट दीसत हे यह बात मूलपुरुषादिक ग्रंथनमें प्रसिद्ध हे याहीतें धुरिधार या पदकोसबप्रकारतें बडे यह अर्थ कियो.

२२. छ शास्त्र सो कापिलादिसाङख्य पातंजलादि योग कणादतर्कगौतमन्याय जैमिनीयपूर्वमीमांसा व्यासकृतउत्तर मीमांसा.

२३. वक्तावेदशास्त्रतणा या जग्गें शास्तावेदशास्त्रतणा ऐसो हू पाठ हे.

२४. सब आश्रमको निर्वाह गृहस्थाश्रमतें होत हे सो बात मनुस्मृतिमें तृतीयाध्यायमें कही हें यथावायुं समाश्रित्यवर्ततेसर्वजंतवः तथागृहस्थमाश्रत्यवर्ततेसर्वं आश्रमाः इत्यादि ओर दक्षस्मृतिमें हू त्रयाणामाश्रमाणांचगृहस्थोयोनिरुच्यते सीदमानेनतेनैवसीदंत्यत्र परेत्रयः इत्यादि या बातको विशेष विवेचन मेनें वल्लभस्तोत्रकी टीकामें लिख्यो हे.

संस्कृत टीका

६ श्रीगोविंद आनंदमय

श्रीगोविंद आनंदमय धर्मसकलनूं धाम ।।
श्रीराणीरंजन रुडला भक्तसकलविश्राम ।।६।।

श्रीगोविंद ते श्रीगोविंदरायजी श्रीगुसांईजीके द्वितीयपुत्र वे केसे हें. **आनंदमय** ते अगणितानंद यातें पुरुषोत्तमत्व सूचन कियो क्यों जो अगणितानंदमय पुरुषोत्तम ही हें यह ब्रह्मवल्ली उपनिषतप्रभृतिनमें निरूपण कियो हे. **धर्मसकल** ते सब भगवद्धर्म तिनके. **धाम** सो निवासस्थान. अथवा. पुरुषोत्तम ओर अक्षर ब्रह्मको अभेद सूचन करत भये अक्षर ब्रह्मत्व आपकुं निरूपण करत हें. **धर्मसकलनूंधाम** धर्म हे सकलसों कलायुक्त जिनतें ऐसे जे वेद तिनको धाम सो

स्थान. अब अक्षरब्रह्मकूं वेदस्थानत्व तो [२५]भृगुवल्लीउपनिषत्प्रभृतिनमें तथा बृहद्वामनपुराणमें [२६]''अक्षरब्रह्मपरमंवेदानांस्थानमुत्तमम्.'' इत्यादिस्थलनमे निरूपण कियो हे. अब अक्षरब्रह्मसहित पूर्णपुरुषोत्तम आप प्रगट भये हें यह निरूपण करिकें अवतार समयको स्वरूपको निरूपण करत हें. **श्रीराणीरंजन** श्रीजे श्रीस्वामिनीजी तिनके अवतार ऐसे जे श्रीराणीबहुजी तिनके रंजन सो अत्यंतसुखदेवेवारे. अब सुखदातृत्व निरूपण करिकें सौंदर्य निरूपण करत हें. **रुडला** ते सुंदर [२७] कोटिकंदर्पलावण्य. अब सौंदर्य निरूपण करिकें गुणनिरूपणकरतभये [२८]अवतार कार्यको निरूपण करत हें. **भक्तसकलविश्राम** सब भक्तनके विश्राम ते आधार सबदुःखनिवारणकरिवेवारे. अथवा. भक्त. हें. **सकल** सो तेजस्वी जातें ऐसी जो भक्ति ताके. विश्राम. सो स्थान याको फलितार्थ यह जो श्रीपुरुषोत्तम युगलस्वरूपतें अक्षरब्रह्मसहित प्रगट भये हें ।।६।।

२५. भृगुवल्लीउपनिषन्में यें भृगुवरुणसम्बन्धी उपनिषिद्विद्यापरमव्योमअक्षर ब्रह्मधाममें रहत हें ऐसें कह्यो हे तथा ओरहुजग्गे सब ऋचा परमव्योम अक्षरब्रह्ममें सदा स्थित रहत हें ऐसें कह्यो हे.

२६. पर जे पुरुषोत्तम तिनको अनुभव करायवेवारे जो अक्षरब्रह्म सो वेदनके रहिवेको उत्तम स्थान हे.

२७. कोटिकंदर्पलावण्य सो करोडकामदेव जेसो तिनको लावण्य हे.

२८. अवतारधरिवेको कार्य इतनें भक्तोको प्रचार करनो भक्तनको संताप हरनो इत्यादि अब या तुकमें आनंदमयता कही ओर सकलधर्मकी रक्षा कही ओर सबभक्तनके विश्राम स्थान आप हें यह कह्यो यातें श्रीगोविंदरायजीमें परिपूर्ण ऐश्वर्य गुणको वर्णन कियो.

संस्कृत टीका

७ श्रीबालकृष्णजी बालुवा

श्रीबालकृष्णजी बालुवा, सुंदर भीनले वान ।।
कमललोचन कमलापति, छबिको नही एसमान ।।७।।

श्रीबालकृष्णजी श्रीगुसांईजीके तृतीयपुत्र वे केसे हें सो कहत हें. **बालुवा** सो बाललीलायुक्त ओर. **सुंदर** ते मनोहर ओर. **भीनलेवान** ते श्यामवर्ण ओर केसे. **कमललोचन** ते कलमजेसे जिनके नेत्र हें ऐसे ओर केसे. **कमलापति** ते श्रीकमलाबहुजीके पति ओर केसे. [२९]छबिकोनहीएसमान इनके तेजतुल्य कोईको तेज नही हे. अब यातुकमें पूर्णपुरुषोत्तमत्व श्रीबालकृष्णजीको निरूपण कियो क्यों जो प्रथम विरुद्धधर्माश्रयत्व पुरुषोत्तमकों ही हें सो नामतें सूचित भयो सो ही स्पष्ट कहत हूं. अब कृष्णशब्दतो परब्रह्मवाचक हे क्यों जो कृष ऐसो सत्ताको नाम हे ओर ण ऐसो आनंदको नाम हे यातें कृष्ण ऐसो सदानंदपरब्रह्मकों नाम हे सो उपनिषदनमें कह्यो हे ओर परब्रह्म तो सदैकरस हें तोहु बाल यह विरुद्धधर्माश्रयत्व ओर श्री जो स्वामिनीजी. तिनकरिकें युक्त ऐसे हें तो हुं बाल यह हू विरुद्धधर्माश्रयत्व हे यातें नाममात्रतें ही विरुद्धधर्माश्रयत्व प्रथम सूचित भयो ओर छेलो विशेषण छबिकोनहीएसमान यातें हु पुरुषोत्तमत्व स्फुट सिद्धभयो क्यों जो गीताजीमें [३०]दिविसूर्यसहस्त्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता. यदिभास्सदृशीसास्याद्भासतस्तस्यमहात्मनः. या श्लोकमें ऐसें ही निरूपण कियो हे. अब ओर सब विशेषण यद्यपि विष्णवादिक विभूतिपर लगत हें तथापि [३१]एकोप्यसाधारणोधर्मोविद्यमानःशिष्टान् संदिग्धान्ब्रह्मधर्मानिवगमयति या न्यायतें पुरुषोत्तमपर ही लगत हें यातें आप पूर्णपुरुषोत्तम हें यह सिद्ध भयो ।।७।।

[२९] या तुकमें सबतें अधिक तेज वर्णन कियो तातें देवनिग्रहात्मकवीर्य सूचित भयो सो ही कमलापति या विशेषणतें दृढ कियो क्यों जो लक्ष्मीजी ओर सब देवतानको अनादर करिकें प्रभुनको वरे हें सो अष्टमस्कंधमें प्रसिद्ध हे ओर सुंदर या पदतें कृष्णंनिरीक्ष्यवनितोत्सवचा रुवेषं या श्लोकोक्त वीर्य हू सूचित भयो.

[३०] जो आकाशमें हजारसूर्यनकी कांति एकसंगउदयपावे तो भगवत्तेजकी कछुक उपमा योग्य होय.

[३१] यह परिभाषा अणुभाष्यमें अंतस्तद्धर्माद्यधिकरनमें लिखी हे जो जा वाक्यमें अनेकधर्म संदिग्ध होय जो यह भगवद्धर्म हे के निह तथापि एकभी असाधारण भगवद्धर्म दीखे तो वा वाक्यमें सब भगवद्धर्म जानने.

संस्कृत टीका

श्रीगोकुलपति अतिगुणनिधि तातत‌णो प्रतिबिंब ।।
पारवतीपति प्रेमसु शोभा सकल कुटुंब ।।८।।

श्रीगोकुलपति ते श्रीगोकुलनाथजी श्रीगुसांईजीके चतुर्थपुत्र. अब नामतें ही प्रथम पुरुषोत्तमत्व सूचित भयो क्यों जो गोकुल [३२]निस्साधन ताके पति यह धर्म पुरुषोत्तमको ही हे यह [३३]‘‘तस्मान्मच्छरणंगोष्ठं’’ या श्लोकके सुबोधिनीजीप्रभृतिमें निरूपण कियो हे. अथवा. श्री जे स्वामिनीजी ओर [३४]गोशब्दतें पृथ्वी वाणी स्वर्ग इत्यादिक तिनकों कुल जो समूह ताके पति रक्षाकरिवेवारे. अब श्रीपुरुषोत्तमत्व सूचक विशेषण कहत हें. **अतिगुणनिधि** अति ते अतींद्रिय अलौकिक जे गुण तिनके निधि ते भंडार ओर केसे. **तातत‌णोप्रतिबिंब** [३५]तात ते श्रीमहाप्रभुजी. अथवा. श्रीगुसांईजी तिनके प्रतिबिंब ते प्रतिनिधि इतनें तुल्य ओर केसे. **पारतवतीपति** श्रीपार्वतीबहुजीके पति. **प्रेमसूं** प्रेम जो भक्ति ताके सू ते उत्पन्नकरिवेवारे. अथवा. **पारवतीपति** ते शिव तिनके. **प्रेमसूं** सो प्रेमतें. **शोभा** सो माहात्म्य जिनको या विशेषणको भावार्थ यह जो महादेवीजीकी हू जिनकेविषें प्रेमलक्षणाभक्ति हे यातें हू पुरुषोत्तमत्व सूचित भयो ओर केसे. **शोभासकलकुटुंब** शोभा शब्दको मध्यमणिन्यायतें दोई आडि सम्बन्ध हे सकल कुटुंबकी शोभारूप आप हें यातें भावी जो [३६]मालारक्षादिरूप यश हे ताकूं सूचित कियो याको भावार्थ स्फुट हे ।।८।।

३२. श्रीगोकुलको निःसाधपनो श्रीभागवतमें अन्ह्यपूतं निशिशयानमतिश्रमेण लोकंविकुंठमुपनेष्यतिगोकुलंस्म इत्यादिस्थलनमें कह्यो हे.

३३. याको अर्थ पहिलें लिख्यो.

३४. गोशब्दको यह सब अर्थ अमरकोशमें स्वर्गषुपशुवाग्वजीरदिङनेत्रघृणि भूजले लक्ष्यद्रष्ट योः स्त्रियांपुंसिगौः या श्लोकमें कहे हें.

३५. यह आख्यानरूप वाणी श्रीगुसांईजीकी हे यातें तात शब्दको अर्थ श्रीमहाप्रभुजी लिखे ओर श्रीगोकुलनाथजीकी आकृति श्रीमहाप्रभुनके सद्दश्य हे याहीतें श्रीगुसांईजी उनकों श्रीवल्लभ कहत हें ओर श्रीगोकुलनाथजीके तात तो श्रीगुसांईजी हें यातें श्रीगुसांईजीकों हू अर्थ कियो.

३६. अब जा बिरियां गोपालदासजीनीं ये आख्यान गाये ता बिरियां श्रीगोकुलनाथजीके तुलसीमाला प्रसंगादिक चरित्र जगतमें भये न हते ताहीतें टीकामें भाविपद लिख्यो अब या तुकमें अतिगुणनिधि कहे ओर सबकुटुंबके शोभाहेतु कहे ओर शिवादिदेवतनाके परमप्रेमाश्रयपनो हू कह्यो यातें अलौकिक यशोरूपत्व आपकूं सूचन कियो सो ही टीकामें या पंक्तिमें दिखायो.

संस्कृत टीका

९ श्रीरघुपति अतिगजगति

श्रीरघुपति अतिगजगति रतिपति करुं बलिहार ।।
जानकीजीवन ऐ सदा मध मणि रत्नमयहार ।।९।।

श्रीरघुपति ते श्रीरघुनाथजी श्रीगुसांईजीके पंचमपुत्र. अब नामतें मर्यादापुरुषोत्तमत्व सूचन करिकें पूर्णपुरुषोत्तमत्व विशेषणतें सूचन करत हें. **अतिगजगति**

हस्तीतें हु सुंदर हे चाल जिनकी. अथवा. **गज** जो गजेन्द्र ताकी अतिगति हे जिनतें ते गजेंद्रकूं मोक्ष देवेवारे. अब गजेन्द्रकूं मोक्ष देवेवारे पुरुषोत्तम ही हें यह निरूपण तो श्रीहरिरायजीनें सप्तश्लोकीमें यदिनहरिमार्गेपरिचयः याके व्याख्यानमें स्फुट कियो हें. अब आप केसे हें. **रतिपतिकरुंबलिहार** रतिपति जो काम ताको [३७]करुंबलिहार सो वारनाखों. अब काम वाचक रतिपतिशब्द कह्यो यातें [३८]दोउ स्वरूपकी उपमालायक रति ओर काम दोउ नहीं हे दोउ स्वरूपको अलौकिक सौंदर्य हे यह सूचन कियो. अब मर्यादापुरुषोत्तमत्व सूचक विशेषण कहत हें. **जानकी जीवनएसदा** जानकी ते श्रीजानकीबहुजी तिनके ए सो ये जीवन ते प्रियपति सदा ते नित्य याते दोउस्वरूपनको परस्पर अनिर्वाच्य ओर नित्यपूर्ण स्नेह सूचन कियो. अथवा. **ए** ते श्रीरघुनाथजी. **सदा जानकीजीवन** याको भावार्थ यह जो रामावतारमें हू आप जानकीपति ही हते. अथवा. नित्यलीलाके अभिप्रायतें सदापद कह्यो ओर आप केसे हें. **मधमणिरत्नमयहार** जेसे रत्नमयहार सो मणिनकी माला ताके मध सो बीच तामे बडी मणी होत हे आपहु छओ बालकनके बीचमें अत्यंत शोभत हें याको भावार्थ यह जो पूर्णपुरुषोत्तम हू आप हें ओर मर्यादापुरुषोत्तम हू आप हें याहीते श्रीरघुनाथजीके घरमें रामनवमीको उत्सव अधिक मान्यो जात हे ओर आपकुं श्रीरूपता[३९]हू दिखायी ।।९।।

३७. बलि जो पूजासाहित्य ताको हार सो उठायके ले चलिवेवारो दास यह बलिहारशब्दको अर्थ प्राचीन टीकामें लिख्यो हे अब कामदेवको बलिहार करों सो आपको दासकरो इतनें आपके उपरसों वारिडारों यह फलितार्थ भयो.

३८. दोउस्वरूप सो श्रीजानकीजी ओर श्रीरघुनाथजी.

३९. अब या तुकमें कामदेवतें हू अत्यंत अधिक सुंदरता कही याते अग्निकुमारनको उद्धार हू जो रामावतारमें कियो हे सो सूचन कियो ओर अतिगजगति यापदते भक्तपक्षपात हू सूचन कियो ओर मध्यमणि रत्नमयहार यातें हू अत्यंत शोभा निरूपण फरी ओर सदा यापदतें नित्यलीला हू सूचित कीनी तातें प्रायोबतांबविहगा इत्यादि स्थलोक्त अलौकिकश्रीको वर्णन कियो.

संस्कृत टीका

१० जदुपति जीवन

जदुपति जीवन जगतना, सदा मनप्रसन्न हुलास ।।
नाह ते महाराणी तणा, मुंखमाधुरी विलास ।।१०।।

जदुपति ते श्रीयदुनाथजी श्रीगुसांईजीके छटठे पुत्र. अब [४०]नामतें पुरुषोत्तमत्व सूचित भयो ताहिकों विशेषणतें स्फुट करत हें अब आप केसें हें. **जीवनजगतना** जगत जो चराचरजीव तिनके जीवन ते जिवायेवारे. अब सब जगतकूं जिवायवेवारे पुरुषोत्तम ही हें यह तो उपनिषदनमें निरूपण कियो हे ओर आप केसें हें. **सदा** ते नित्य त्रिकालाबाध्य ऐसें जे. **मनप्रसन्न** ते लीलासम्बन्धी व्रजभक्त तिनकों हे. **हुलास** जिनतें या रीततें नाम ओर दो विशेषण तिन करिके क्रमतें [४१]सच्चिदानंदत्व निरूपण करिकें. अब अवतारसामयिक विशेषण कहत हें. **नाहतेमहाराणीतणा** ते सो वे वेदादिकमें प्रसिद्ध ओर श्रीमहाराणीबहूजीके नाह ते नाथ याहीतें आपको महाराजजी कहत हें सो युक्त हें ओर आप केसे हें. **मुखमाधुरी विलास** मुख जे प्रभुनके मुख श्रीमहाप्रभुजी तिनकी माधुरी सो भाष्य सुबोधिन्यादिक ग्रंथ तिनको हे विलास ते विनोद जिनकूं याको फलितार्थ यह जो सच्चिदानंदस्वरूप आप हें ओर निरंतर श्रीमहाप्रभुजीके ग्रंथनको अभ्यास करत हें ओर [४२]ज्ञानरूपता हू दिखायी ।।१०।।

४०. यदुपति सो यादवनके पति ऐसें श्रीपुरुषोत्तम ही हें सो राजसप्रकरणादिस्थलनमें प्रसिद्ध हें याहीतें नामतें पुरुषोत्तमपनो सूचित भयो.

४१. यदुपति यास्वरूपतें सदरूपनो ओर सब जगतके जीवन आपही हें यातें चिद्रूपत्व ओर मनप्रसन्नहुलास याते आनंदरूपत्व हू सूचित किये.

४२. अब या तुकमें सब जगतके जीवन हे यातें ज्ञानरूपता सूचन करि क्यों जो जीवके सम्बन्धतें सब जीवत हें ओर जीव सब प्रभुनके स्वरूपभूतज्ञानके अंश हें यातें सब जगतको जीवन ज्ञानात्मकस्वरूप ही हे ओर मनप्रसन्नहुलास याको हू अर्थ लीलास्थ शास्त्रीयभक्तनकों आनंददेवेवारे यह कियो ताते हु नद्यस्तदातदुपधार्य इत्यादिस्थलोक्त ज्ञानको वर्णन कियो ओर वेदादिप्रतिपादित नित्यस्वरूप हु ज्ञानधन कह्यो हे ओर श्रीमहाप्रभुनके ग्रंथनके

अभ्यासतें हु सब प्रकारको ज्ञान होत हे या तुकमें सब प्रकारकी ज्ञानरूपता वर्णन कीनी.

संस्कृत टीका

११ श्रीघनश्यामकी सीचे

श्रीघनश्यामकी सीचे सुधा जीवन सकलब्रह्मांड ।।
नाह ते कृष्णावतीतणा लीला नित्य अखंड ।।११।।

श्रीघनश्यामजी श्रीगुसांईजीके सप्तम पुत्र श्रीजेस्वामिनीजी तिनकरिकें युक्त ऐसे जे घनश्याम श्रीठाकुरजी ते ही हें जी ते जिनके[४३] जीवन यातें प्रेमलक्षण विशिष्टत्व सूचित भयो यह [४४]आधुनिकअवतारसामयिक प्रकार हे वस्तुतः तो. **श्री** जे स्वामिनीजी तिनकरिकें युक्त ऐसे जे घनश्याम ते प्रभु ओर. **जी** ते भक्तनके जिवायवेवारे यातें पुरुषोत्तमत्व सूचित भयो सो ही आगें कहत हें. **सींचेसुधा** सुधा जो अमृत मोक्ष ताको सीचें ते देत हें. अब. मोक्षवाचक अमृत शब्द हे सो छोडके वाको स्त्रिलिंग सुधाशब्द कह्यो यातें पुष्टिमोक्ष देत हें यह सूचन कियो क्यों जो पुष्टिमोक्ष स्त्रीभाव प्रधान हें तातें ओर दानवाचक सेचन शब्द कह्यो यातें पुष्टिमोक्षकूं रसरूपत्व सूचन कियो ओर आपकों नाम श्रीघनश्यामजी हे ताको हू [४४]धर्म सूचन कियो. अथवा. **सुधा** जो भाष्यसुबोधिन्यादिक ग्रंथ द्वारा उपदेशरूप सुधा ताकों देत हें. अब अवतार सामयिक चरित्रबोधक विशेषण कहिकें पुरुषोत्तमत्व सूचक विशेण कहत हें. **जीवनसकलब्रह्मांड** सकल ब्रह्मांड जे अनंतकोटिब्रह्मांड तिनके जीवन ते जीवायवेवारे यह पुरुषोत्तमको ही धर्म हे. फेर अवतारसामयिक विशेषण कहत हें. **नाहते श्रीकृष्णावतीतणा** श्रीकृष्णावती बहूजीके नाह ते पति ओर ते सो वेदादिकमें प्रसिद्ध फेर पुरुषोत्तमत्वबोधक दो विशेषण कहत हें. **लीलानित्य** लीला

हे नित्य जिनकी. अब लीला नित्य कही यातें [४६]परिछिन्नत्व ओर द्वैत सिद्ध भयो ता शंकाको निवारक विशेषण कहत हें. **अखंड** सो [४७]सदैकरस अद्वितीय याको भावार्थ स्फुट हे ।।११।।

अब सातों बालकनकों [४८]स्मरणोपदेश करिकें बेटी जीनको स्मरणोपदेश करत हें तामें प्रथम श्रीगोपीनाथजीके बेटी जीनको स्मरणोपदेश करत हे फिर श्रीगुसांईजीके बेटीजीनको स्मरणोपदेश करेंगे.

४३. जो ऐसो जीवको नाम भाषानमें प्रसिद्ध हे तातें यह अर्थ कियो.

४४. अभी अवतारके समयको यह प्रकार हे जो प्रभुसेव्य और आप सेवक ओर वस्तुतः तो आप एक ही हे.

४५. घनश्यामजी या नामको अर्थ यह हे जो घन जो मेघ ताजे से श्याम ओर मेघ तो जब वृष्टिके लिये जल भरि लावत हे तब अतिश्याम होत हे यातें आप हू वृष्टि करत हें यह वर्णन करिके आपमें श्यामघनपनो यथार्थ दिखायो.

४६. परिछिन्नत्व सो परिमितपनो क्यों जो अपरिमितस्वरूपतें लीला संभवे नहि.

४७. सदा एकरससो जिनकूं कभी कछू विकार न होय ओर परिमितस्वरूप धरे तो हू जिनको व्यापकपनो मिटे नहि अब या तुकमें परममोक्षदातापनो आपकुं कह्यो ओर घनश्यामजी या नामतें कृपालुपनो दिखायो ओर सबब्रह्मांडके जीवन कहे यातें सबजग्गे समता दिखायी तातें अलौकिकवैराग्यरूपता आपकुं सूचन करि ओर लीलानित्य अखंड या पदतें द्रष्टावतपे व्रजपशून् इत्यादिस्थलोक्त वैराग्य हू दिखायो.

४८. स्मरणोपदेश सो याही रीतितें सबबालकनको सदा स्मरण करनो ऐसो उपदेश.

संस्कृत टीका

१२ लक्ष्मी सत्यभामा

लक्ष्मी सत्यभामा ए बेहु, अग्रजनी अनुहार ।।
श्रीनवनीतप्रियाजीनें रीझव्या, सेवाविविधिप्रकार ।।१२।।

लक्ष्मी सो श्रीलक्ष्मीबेटीजी. **सत्यभामा** सो श्रीसत्यभामाबेटीजी ये दोई केसी हें. **अग्रजनीअनुहार** [४९]अग्रज जो श्रीपुरुषोत्तमजी तिनकी हे अनुहार जिनकूं. अब स्वरूपनिरूपण करिकें गुणको निरूपण करत हें. **श्रीनवनीतप्रियाजीनें रीझव्या** सो श्रीनवनीतप्रियाजीकूं रीझव्या ते प्रसन्न किये. अब कोनप्रकारतें प्रसन्न किये सो कहत हें. **सेवाविविधप्रकार** अनेकप्रकारकी सेवा करिकें रिझाये याको भावार्थ यह जो श्रीपुरुषोत्तमकी पुरुषोत्तम ही हें तिनकी अनुहार कही तातें अलौकिकसौंदर्य सूचित कियो ओर श्रीनवनीतप्रियाजीकुं प्रसन्न किये तातें अलौकिकगुण हू सूचित किये ।।१२।।

अब श्रीगुसांईजीके बेटीजीनको निरूपण करत हें.

[४९] जो पहिले जन्मे सो अग्रज इतनें बडो भाई ओर या तुकमें उत्तरार्द्धको श्रीनवनीतप्रियाजी जेणेरिझव्यासेव्याविविध प्रकार ऐसो हू पाठ कोइक टीकामें लिख्यो हे.

संस्कृत टीका

१३ शोभा यमुना कमला

शोभा यमुना कमला देवका, जेहनें सात सम्बन्ध सोभाग ।।
एहना चरण स्मरण करी, श्रीविटठलपदरजरतिमाग ।।१३।।

शोभा सो श्रीशोभाबेटीजी. **यमुना** सो श्रीयमुनाबेटीजी. **कमला** सो श्रीकमलाबेटीजी. **देवका** सो श्रीदेवकाबेटीजी ये सब केसी हें. **जेहनेसातबंधवसोभाग** जिनकें सात बंधव ते भाई हें ओर. **सोभाग** सो जिनकें अखंड सौभाग्य हे ऐसें सकलपरिवारके वर्णनपूर्वक स्मरणको उपदेश अपनी जिह्वाकूं करिके. अब यारीततें स्मरण कियेतें अवश्य प्रभु प्रसन्न होंय तब कहा फल मांगनो सो उपदेश आधी तुकते करत हें. **एहनाचरणस्मरणकरी** एहना सो ये सब श्रीवल्लभाचार्यजीके पुत्र पौत्र बहुबेटीजी तिनके चरणारविंदनको निरंतर स्मरण करिकें **श्रीविटठलपदरजरतिमाग** श्री जे श्रीरुक्मिणीबहुजी श्रीपद्मावती बहुजी तिनकरिकें युक्त जे विटठल ते निस्साधनजनहितकर्ता श्रीगुसांईजी तिनकी पदरजरतिमागसो चरणारविंदकी रजविषें प्रीति माग. अथवा. [५०]पद जे लीलास्थान अक्षरब्रह्म जाको गोलोक कहत हें सो ओर. [५१]रज सो चरणरेणु अलौकिक लीलोपयोगिदेहसंपादनकरिवेवारी ओर. [५२]रति सो भक्ति ये सब माग क्यों जो ये तीनों पदार्थ ब्रह्मवल्लीप्रभृतिउपनिषदनमें फलरूप निरूपण किये हें याको गूढार्थ यह जो इन तीनोंपदार्थनके दाता श्रीयमुनाजी हें ते या रीततें स्मरण कियेतें प्रसन्न होंय ओर विनतें ये ही फलरूप पदार्थ मागने ओर कछु लौकिक पदार्थ मागंनो नही ओर श्रीयमुनाजीके प्रसन्नताके कारण श्रीयमुनाजलको पान ओर स्नान प्रसिद्ध हे तिनको हू फल या रीततें नाम स्मरण कियेतें प्राप्त होय यह सूचित भयो ।।१३।।

अब जिह्वा कदाचित कहेगी जो सब परिवारके नामस्मरणमात्रको ही मोकों उपदेश कियो परंतु सब परिवारको सुखको वर्णन क्यों नही करत हो यह शंका मनमें लायकें कहत हें.

---

५०. यह अक्षरब्रह्मपद गीताजीमें ओर श्रीभागवतमें यदक्षरंवेदविदोवंदति तथा परंपदवैष्णवमामनंति इत्यादिस्थलनमें वर्णन कियो हे वेदमें हू मुंडक कठवल्ली

प्रभृति उपनिषदनमें स्फुट निरूपण कियो हे ओर मोक्षमें या पदकी प्राप्ति हू कही हे.

५१. अब अक्षरब्रह्ममें लय तो ज्ञानमार्गीयनको हू होत हे तब भक्तिमार्गमें विशेष कहा सो विशेष रजकी प्रार्थना करिकें दिखायो जो लीलोपयोगि अलौकिक देह भक्तिमार्गीयको ही प्राप्त होत हे.

५२. अब मर्यादाभक्तनतें हू विशेष दिखायवेकेलिये रति मांगी रति ऐसो फलरूपभक्तिको नाम श्रीभागवतमें रतिरात्मन्यतो भवेत् इत्यादिस्थलनमें प्रसिद्ध हे.

संस्कृत टीका

१४ पुत्रपौत्रादिकसुख

पुत्रपौत्रादिकसुख शु कहुं, जो तुं मुखमां एक ।।
श्रीविटठलकल्पद्रुप फल्यो, तेनी शाखा पसरी अनेक ।।१४।।

।। इति श्रीगोपालदासजी विरचितं नवमाख्यान संपूर्णम् ।।९।।

पुत्रपौत्रादिकसुखद [५३]पुत्र जे श्रीगोपीनाथजी श्रीविटठलनाथजी ओर पौत्र ते सातों बालक ओर श्रीपुरुषोत्तमजी ओर आदिशब्दतें[५४]प्रपौत्र बहुबेटी प्रभृतिनके

जे सुख ते. [५५]शूं कहू सो कहा कहुं कछु कहेते नही बने हे. अब कहेते नही बने हे ताको हेतु कहत हें. **जोतूंमुखमाएक** जिह्वातें कहत हें जो तुमुखमे एक हे तो में पुत्रपौत्रादिकनको सुख केसें कहूं याको भावार्थ यह जो अनेक जिह्वा होंय तो हुं अगणितसुख हे सो नही कह्यो जाय तब एक जिह्वातें तो [५६]अगणितसुख केसें कह्यो जाय अब परिवारानंदकूं अगणितपनो सूचन कियो तातें सबपरिवारकूं पुरुषोत्तमत्व सूचित भयो. ऐसें सबपरिवारानंदकूं अगणितत्व सूचन करिकें श्रीगुसांईजीकों सर्वफलदातृत्व आधी तकुतें स्फुट निरूपण करत हें. [५७]श्रीविटठलकल्पद्रुमफल्यो श्रीविटठल जे श्रीगुसांईजी तिनरूपी जो कल्पद्रुम सो कल्पवृक्ष सो फल्यो सो फलयुक्त भयो ओर. **शाखापसरीअनेक** सो अनेक शाखा फेली हें. अब शाखापसरी ऐसें वर्तमानप्रयोग कह्यो यातें ऐसो भासत हे जो वा समयमें जितने पुत्रपौत्रादिक दर्शन देत हते तिन सहित जिनने भावि गोस्वामिबालक हे तिनके हू दर्शन भये ओर फल्यो ऐसें कह्यो यातें सातों बालकनको फलरूपत्व स्फुट कियो ओर श्रीगुसांईजीकों कल्पद्रुम कहे यातें सर्व मनोरथपूरकत्व स्फुट निरूपण कियो.

(५८)श्लोकको पुत्रपौत्राप्रदात्रीयं पुत्रपौत्रादिरुपिणी ।।
नवमेवर्णितासंपत्स्मृतयेवाल्लभीशुभा ।।१।।
(५९)नवमाख्यानानिभक्तानां, नवधाभक्तिहेतवः ।।
नवैतेनिधय शश्वत्तिष्ठंतुहृदयेमम ।।२।।

कवित्त : [६०]प्रबलप्रचंडमायावादखंडखंडकियो, पंडितवेतंडझुंडगंडमदवारेते. दोरिदोरिदुरेजाय दूरदेशनमे, देखिदेखिदीपितप्रतापडरभारेतें. भूतल श्रीवल्लभ श्रीवल्लभकृपानिधानदेतदानजीवन कोंभक्तिकोधों, तारेते. आनंदकेकंदकोटिचंदसेअमंततेज, देहूसुखसंपतविपतसबटारेतें ।।१।।

दोहा : [६१]श्रीविटठलकेसातसुत, दुहुभ्रातावे आप. ये सब मिलनवरूपइक, वल्लभप्रबलप्रताप ।।१।। [६२]यामे संवतगुप्त हे सुप्त बुद्धिनहिलभ्य. जाग्रहबुद्धिविवेकतें देखोतुमसबसभ्य ।।२।। [६३]सप्तदीपफेल्योसुजसप्रथमउद्योव्रजदेस. तीनलोकमें हूं गयो, जेसेंचंदउजेस ।।३।। [६४]मासपक्षतिथिवारसब, यामेरहे समाय. जेसें रत्नसमूहसबपेटी खोलिदिखाय ।।४।।

।। इति श्रीमद्बालकृष्णचरणैकतान श्रीमद्गोवर्द्धनगुरुपादपद्मपरागत प्राप्त परमोदयश्रीमद्गोकुलोत्सवात्मजजीवनाख्येन विरचिंतम् नवमाख्यानस्य व्याख्यानं संपूर्णम्. समाप्ताइयं वल्लभाख्यानविवृतिः ।।

५३. अब या आख्यानके आरंभमें नितप्रतिक्षणक्षणसुमरीये श्रीवल्लभनो परिवार रेरसना ऐसें श्रीमहाप्रभुनके परिवारको स्मरण कह्यो हे यातें पुत्रपौत्रशब्दकरिकें श्रीमहाप्रभूनके पुत्र और श्रीमहाप्रभुनके पौत्र लेने चाहिये यातें टीकामें अर्थ कियो सो युक्त हे पौत्र ऐसो नातीको नाम हे.

५४. प्रपौत्र सो श्रीमहाप्रभुनके पंती सातबालकनके लालजीश्रीमुरलीधरजी प्रभृति अटठाइस इन अटठाइस बालकनकी सङ्ख्याको एक श्लोक मेरे गुरुदेवनानाजी गोस्वामिश्रीव्रज वल्लभजी महाराजने कियो हें सो श्लोक देववेदरसाग्नीषुतांडवाक्षिऋमेणाहि विटठलेस्यतुविभोः सप्तसूनुसुतामताः या श्लोकको फलितार्थ यह जो श्रीगिरिधरजीके तीन पुत्र हें श्रीगोविंदरायजीके चार पुत्र श्रीबालकृष्णजीके छ पुत्र श्रीगोकुलनाथजीके तीन पुत्र श्रीरघुनाथजीके पांच पुत्र श्रीयदुनाथजीके पांच पुत्र श्रीघनश्यामजीके दो पुत्र यह सब मिलिके अटठाइस भये इन सबनके नाम कल्प वृक्षादिकनमें प्रसिद्ध हे.

५५. शूं कहुं या जग्गे पुत्रपौत्रसुखकेमकहुं ऐसो हूं प्राचीन टीकामें पाठ हे.

५६. अगणितसुख सो सर्वरूपश्रीपुरुषोत्तमको अगणित आनंद या अगणितानंदपर्यंत वाणी ओर मन पहुंचि सकत नाहि सो बात ब्रह्मवल्लीप्रभृति उपनिषदनमें प्रसिद्ध हे यातें वर्णन केसें करुं यह कह्यो सो उचित हे.

५७. अब सब आख्यानकी समाप्तिमें गोपालदासजीनें फल मांग्यो हे कहींक प्रत्यक्षतासूं ओर कहींक व्यंग्यमर्यादासु ओर या आख्यानमें कछु फल मांग्यो नहि यातें ऐसो भासत हे जो संपूर्ण नव आख्यानको गान कियो इतनेहीमे श्रीगुसांईजीकी कृपासु गोपालदासजीको सब अलौकिकफल सिद्ध भये कछुभी मागनो रह्यो नाहि याहीतें कोईभी फलकी प्रार्थना कीनी नहि ओर श्रीविटठलकल्पद्रुम फल्यो ऐसें ही कह्यो.

५८. अब या रीतसूं गोस्वामिश्रीजीवनमहाराज नवमाख्यानको व्याख्यान करिकें या आख्यानको सब अर्थ संक्षेपसों एक श्लोकमें आज्ञा करत हें या श्लोकको अर्थ पुत्रपौत्रप्रभृतिनको सुख देवेवारी ऐसी ओर अत्यंतशुभस्वरूप ऐसी जो श्रीमहाप्रभुनकी पुत्रपौत्रादिकरूप समृद्धि सो सदा स्मरण करिवेके लियें या नवमआख्यानमें वर्णन करी अब या आखयानके अर्थको दोहा. बरन्यो मनसुमरन करन, सुवनआदिसुखदान. श्रीवल्लभकुलबिभवसुभ छह नोमे आख्यान.

५९. ऐसे एक श्लोकमें या नवमा आख्यानको तात्पयार्थ निरूपण करिकें अब दूसरे श्लोकमें संपूर्ण नवआख्याननको प्रयोजन ओर स्वरूप आज्ञा करत

हें ता श्लोकको अर्थ भक्त इतनें भक्तिमार्गीय जे जीव हें तिनको ये नवआख्यान नवधा भक्ति सिद्ध होयवेके हेतु हें अब सबनकों नवधाभक्तिको अधिकार नही हे यातें भक्तिमार्गीय जीवनको यह फल होत हे ऐसे कह्यो ओर ये नवही आख्यान नवनिधि रूप हें मेरे हृदयमें सर्वदा रहो निधि हु भूमिमें गुप्त धरे जात हें ताहीतें वे निधि बाजत हें तेसें ये आख्यानरूप निधि हू मेरे हृदयरूप भूमिमे स्थिर रहे यह प्रार्थना कीनी अब निधि कहे ताको तात्पर्य यह जो जेसे एक निधितें हू अनंत द्रव्यसम्पति ओर सुख होत हे तेसें एक आख्यानतें हू अनंत भगवद्भावसंपत्ति ओर अलौकिक परमानंद प्राप्त होत हे सब ये आख्यान नवधाभक्तिके हेत केसें हें सो प्रकार यथाबुद्धि लिखुं हुं नवधा भक्ति सो सप्तमस्कंधमें प्रह्लादजीनें कही ''श्रवणकीर्तनंविष्णोः स्मरणं पादसेवनं अर्चनंवंदनंदास्यं सख्यमात्मनिवेदनं'' तामें प्रथमाख्यानके श्रवणतें श्रवणभक्ति होत हे याहीतें वा आख्यानमें अक्षरब्रह्म पुरुषोत्तम सृष्टिप्रकार नित्यलीला यह सब अवश्य श्रवण करिकें पदार्थको निरूपण कियो हे ओर दूसरे आख्यानतें कीर्तनभक्ति होत हे याहीतें यज्ञपुरुषहरिनाश्रुतिगुणगाय इत्यादि कह्यो हे ओर तृतीयाख्यानमें स्मरणभक्तिकी मुख्यता हे जेसें गोपालदासजीनें स्मरणके प्रभावतें प्राकटय उत्सव गायो तब साक्षात्कार भयो तेसें साक्षात्कारकी इच्छा होय तो स्मरण पूर्वक या आख्यानको गान करनो ओर चतुर्थाख्यानतें पादसेवनभक्ति होत हें ताहीतें आरंभमें तेपवंदूश्रीवल्लभनंद यह चरणको माहात्म्य कह्यो ओर पंचमाख्यानमें नाममात्रतें निष्पापता होय इत्यादि माहात्म्य कह्यो तथा भक्तिपक्षको दार्ढ्य ओर विरोधीमतनको खंडन भगवद्धामको स्वरूप इत्यादि कह्यो तातें अर्चनभक्ति सिद्ध होय ओर षष्ठाख्यानमें प्रभूनको नित्यचरित्र वर्णन कियो हे ताते वा रीतकी भावनातें सेवा करनी ओर मनमें ताप राखनो किमासन तेगरुडासनाथ नमोस्तुतेदेववरप्रसिद्ध इत्यादि वचनानुसारसों रूप वियोगनिवारणार्थ सदा वंदनभक्ति करनी ऐसो सिद्ध होत हे ओर सप्तमाख्यानमें जीवशिक्षार्थ श्रीगुसांईजी श्रीनाथजीकी सेवा करत हें यह वर्णन कियो तासुं जीवनकें वाही प्रकारतें दासभाव करिकें सेवा करनी यह सिद्ध भयो तासों दास्यभक्ति स्फुट दिखायी और अष्टमाख्यानमें नंदनंदनने जईमले इत्यादि अनेक प्रकारसों सख्यभक्ति दिखाई हे ओर नवमाख्यानमें श्रीमहाप्रभुनके परिवारके ही आश्रयको उपदेश जिह्वाकों कियो सो उपलक्षण रीतिसों कियो तातें नेत्रादिक ओर इंद्रियनकों हु सदा दर्शनादिक करिवेको उपदेश सिद्ध होत हे तासूं आत्म निवेदन भक्ति स्फुट दिखाई ओर जीवनको आत्मनिवेदन करवायवेकेलियें ही श्रीमहाप्रभुनको वंश जगतमें हे यह हु स्फुट दिखायो अब या रीतसों सूक्ष्म दृष्टिसुं विचार किये ते एक एक आख्यानमें एक एक भक्तिकी मुख्यता स्पष्ट सिद्ध होत हे ओर वास्तविकरीतसूं तो सब ही आख्यान सब प्रकारकी भक्तिके हेतु हे.

६०. अब या मूलग्रंथकों श्रीवल्लभाख्यान कहत हें तातें श्रीमहाप्रभुनकी ही यामें मुख्यता हे यह सूचन करत भये गोस्वामि श्रीजीवनजी महाराज श्रीमहाप्रभुनको वर्णन एक कवित्त करिकें करत हें यह टीका व्रजभाषाकी हे तातें भाषाकी कवितामें वर्णन कियो सो उचित हें कवित्तको अर्थ प्रबल सो कोईसूं खंडन न कियो जाए ऐसो दृढ ओर प्रचंड सो सबनकूं तुरत मोह करे ऐसो उग्र जो मायावाद ताको खंड खंड कियो सो अंश अंश जुदे करिकें

खंडन कियो ताहीतें परमतके पंडितरूप जे वेतंड कहिये हाथी तिनके झुंड जे समूह ते दीपित सो प्रकाशमान जो श्रीमहाप्रभुनको प्रताप हे ताकों देखिदेखिकें डरभरितें सों अत्यंत भयतें दोडदोडकें दूर दूर देशनमें दूर सो छिपि गये अब वे पंडितरूप हाथी केसे हें सो कहत हें गंड मदवारे ते गालके उपर जीनके मद यूवत हे इतनें अर्थात् अत्यंत गर्विष्ठ अथवा गंडमदवारे ते विनके कपोल स्थलपें जो मद हे ताको निवारण किये ते डरपिके वे दूर छिपि गये अब ऐसो अत्यलौकिक कार्य आप केसे करि सकत हे वाको कारण कहत हे श्रीवल्लभ जो लक्ष्मीजी तिनके वल्लभ ते पति श्रीपुरुषोत्तम ते ही भूतलमें श्रीवल्लभ सो श्रीमहाप्रभुजी रूपसो प्रगट भये हे अब इतनो श्रम करिवेको कारण कहत हें कृपानिधान यातें करिकें ही प्रकट भये हे अब प्रकट होयके कहा करत हे सो कहत हें देतदानजीवनको भक्ति कीधों तारेतें जीवनकों सो अलौकिकदेवीजीव तिनकों अथवा जीवनकों सो जीवनजी महाराजकों भक्तिकों दान आप करत हें यातें अपनी छाप हू दिखायी ओर भक्ति देकें ते सब जीव तारे सो बंधते छुडाये अब भक्तितें संसारदुःखादि सर्वविपत्ति दूर करिकें आनंदांशको आविर्भाव भयेतें वियोगताप निवृत्तिपूर्वक अलौकिक अखंड आनंद संपत्ति आप देत हें या अभिप्रायतें चतुर्थचरणमें प्रार्थना करत हें आनंदके कंद इत्यादि ओर तीसरे पादमें तारेतें आनंदके कंद सो संसार छुडायतें आप अलौकिकानंद देत हें ऐसो हू अर्थ होत हे.

६१. ऐसें श्रीमहाप्रभुनको वर्णन करिकें आख्यानकी नव सङ्ख्याको ओर हू प्रयोजन गुप्त रीतिसो सूचन करत भये श्रीगुसांईजी प्रभृतिनको वर्णन एक दोहामें करत हे दोहाको अर्थ स्फुट हे दुहु भ्राता सो श्रीगोपीनाथजी ओर श्रीगुसांईजी यह सब मिलिकें एक श्रीमहाप्रभुनको प्रबलप्रताप नवरूपसों भूतलमें विराजत हें याहीते आपके प्रतापके वर्णनके आख्यान नव किये.

६२. अब यह टीका जो संवतमें पूरी भई सो संवत हू या दोहामें गुप्त रीतसों कह्यो हे सो सूचन करत हे यामे संवत गुप्त हे इत्यादि सुप्तबुद्धि सो प्रभृतिरहित मंद बुद्धितें यह संवत नहि लभ्य सो पावत नहि ओर जाग्रत सों प्रवृत्तियुक्त सूक्ष्म ऐसी जो बुद्धि तातें विवेचन करिकें तुम सब सभासद देखो अब यह टीका गुन्नीससें सताइसके संवतमें संपूर्ण भयी हे सो वा दोहामें सों सिद्ध होत केसें जो सात सुत यामें सातको अंक आयो ओर दुहु भ्राता यातें दोको अंक आये ओर यह सब मिल नवरूप यामें नवको अंक आये ओर इक यातें एकको अंक स्फुट यामें नवको अंक आये ओर एक यातें एकको अंक कह्यो हे इन चारों अंकनकों अङ्कानां वामतोगतिः या न्यायसूं मिलावें तब गुन्नीससें सताइस होत हे.

६३. अब पहिलेदोहामां प्रतापकुं नवरूप कह्यो या ते परिमित ही होयगो या शंकाको निवारण करत भये तीसरे दोहामें यशको वर्णन करत हे श्रीमहाप्रभुनको ओर श्रीगुसांईजीकों सुजस प्रथम तो व्रजदेशमें उदय पायो फिर पृथ्वीके सप्तद्वीपमें फेल्यो तहांते तीन लोक पर्यंत हू गयो जेसे चंद्रमाको प्रकाश सर्व लोकनमें जात हे ओर ताप हू दूर करत हें तेसे आपको सुजस हू ताप हरण करत हे ओर सर्वत्र फेल्यो हे चांदनीजेसो उज्वल हे याते यशप्रभृतिकी

अपरिमितता दिखायी.

६४. अब यह टीका जा महिनामें जा पक्षमें तिथिकूं संपूर्ण भयी ते सब या तीसरे दोहामें गुप्तरीतसों कहे हे सो ही या चोथे दोहामें सूचन करत हें मास पक्ष तिथि वार इत्यादि जेसे रत्नसमूह पेटीमें धर्यो होय परंतु पेटी मुंदी होय तो वह दीखे नहि ओर पेटी खोले सब दिखे तेसें ही या दोहामें मासप्रभृति सब कहे हें परंतु उपरसुं दीखत नाहीं ओर सूक्ष्मबुद्धिसूं अर्थ खोलिकें देखें तब दीखत हें अब सप्तद्वीप फेल्यो सुजस याते चैत्रसूं सातमो महिना जाननो इतनें आश्विनमहिना भयो ओर प्रथम उद्‌योव्रजदेश यातें व्रजदेशानुसार पूर्णिमांतमासको प्रथम पक्ष कह्यो तातें कृष्णपक्ष सिद्ध भयो ओर तीनलोकमें हू गयो तातें तृतीयातिथी सूचन करी जेसें चंद्रउजेस यातें सोमवार दिखायो तासूं विक्रमशकानुसार संवत गुन्नीससे सत्ताइसके वर्षमें पुर्णिमांतके मासके हिसाबसूं अश्विन कृष्ण तृतीया चंद्रवारके दिन यह टीका संपूर्ण भयी.

अब ये आख्यान जाजा तालमें गाये जात हे ते ताल लिखत हूं प्रथम आख्यान दीपचंदी अथवा तितालमें गावत हें दूसरो आख्यान आडेचोतालमें तीसरो आख्यान चर्चरीतालमें या तालको कितनेक शपतारा कहत हें चोथो आख्यान आडे चोताल हें पांचमें आख्यानकी ध्रुवपदकी तुकें आडेचोतालमें ओर पीछेकी तुक दीपचंदीमें गावत हें ओर तितालमें हुं गायीजांय छटठो आख्यान तितालमें अथवा दीपचंदीमें सातमो आख्यान चर्चरीमें आठमोआख्यान आडेचोतालमें नोमो आख्यान हु बहुत करिके आडेचोतालमें गावत हें ओर जे आडेचोताल दीपचंदीमें गायवेके आख्यान हें ते धमालमें हु गायजाय क्यों जो इन तालनकी मात्रा सरखी हें तालनको विवेचन मेंने संस्कृततालग्रंथमें कियो हे अब इन आख्यानकी नवसङ्ख्याको ओर हू प्रयोजन हे सो लिखत हू सब अंकनमें नवको अंक परिपूर्ण हे याते आगे ओर जुदो अंक नाहि याहीते श्रीरामचंद्रजी ओर नंदालयमें पुरुषोत्तम ओर श्रीगुसांईजी यह सब नवमीके दिन प्रकट भये हें क्यों जो परिपूर्ण अवतार हे तेसें ये आख्यान हू अलौकिक परिपूर्ण स्वरूप हे यह सूचन करिवेकों नवल गाये हें. श्लोक. स्थित्वारैवतपर्वतस्यपुरतः श्रीजीर्णदुर्गेपुरे श्रीदामोदरकायमोहनविभूंसंसेव मानान्सदा. श्रीमद्‌दीक्षितवंशमौक्तिमणीमेकादशानन्वये स्वाचार्याद्‌व्रजवल्लभाभिधगुरुडमातामहान्स्वानभजे. दोहा. सुंदरबालक मुकुंदविभुवदनचंदसुखकंद. तापहरोव्रजसुंदरीचखचकोरचकंद ।।१।। जीवनगुनीजनजननके जीवननिधीगंभीर. जीवन पर करूनाकरी. जीवनविभुमतिधीर ।।२।। घनश्यामसुतपचनदि गोवर्धनकावनाम. ग्रथीजथामतिटिप्पणी हरिगुरुकरुणानिधान ।।३।। वसुलोचनग्रहवसुमती मित्तसंवतमें सार. पोषकृष्णआठे भयीपूरनसुरगुरुवार ।।४।।)

।। इति श्रीमद्‌वल्लभाचार्यमतवर्तिनामोक्षगुरुस्वमातामहगोस्वामि श्रीव्रजवल्लभ चरणैकतानेनतैलगवल्लनाटी ज्ञातीयतैतिरीयकवाधुलस

गोत्रोद्भवपंचनद्युपनामकविद्वद्रत्न घनश्यामं भटटात्मजेस्वपितृसकाशाल्लब्ध विद्येनगटहूजीतिनाम्नाप्रसिद्धगोवर्द्धनशीधकविना विरचितं श्रीवल्लभाख्यान व्याख्यानटिप्पणं संपूर्ण ।।

संस्कृत टीका